आर.एन.आई. नं. 3653/57
मुद्रण तिथि 5 से 8 सितम्बर, 2021
डाक प्रेषण तिथि 10 सितम्बर, 2021

वर्ष : 79 अंक : 09
भाद्रपद, 2078 मूल्य : ₹ 10
पृष्ठ संख्या 104

डाक पंजीयन संख्या Jaipur City/413/2021-23
WPP Licence No. Jaipur City/WPP-04/2021-23
Posted at Jaipur RMS (PSO)

ISSN 2249-2011

हिन्दी मासिक

जिनवाणी

सितम्बर, 2021

Website : www.jinwani.in

क्षमा से अन्त:करण में प्रफुल्लता रहती है, प्रेम–मैत्री की अजस्र धारा बहती है तथा प्राणिमात्र से सम्बन्ध मधुर रहते हैं।

संसार की समस्त सम्पदा और भोग
के साधन भी मनुष्य की इच्छा
पूरी नहीं कर सकते हैं।

- आचार्य हस्ती

आवश्यकता जीवन को चलाने
के लिए जरूरी है, पर इच्छा जीवन
को बिगाड़ने वाली है,
इच्छाओं पर नियंत्रण आवश्यक है।

- आचार्य हीरा

जिनका जीवन बोलता है,
उनको बोलने की उतनी जरूरत भी नहीं है।

- उपाध्याय मान

With Best Compliments :

Rajeev Nita Daga Foundation Houston

।। जय गुरु हस्ती।। ।। जय गुरु हीरा।। ।। जय गुरु मान।।

परस्परोपग्रहो जीवानाम्

अंक सौजन्य

परिंदों को नहीं दी जाती तामील उड़ानों की
वो खुद ही तय करते हैं मंजिल आसमानों की
रखते हैं जो हौंसला सिद्धशिला को छूने का
उनको नहीं होती परवाह गिर जाने की .....

स्व. चंचल मल जी सुराणा

स्व. गुलाब देवी सुराणा

तुभ्यं नमः कुशल–वंश – विभूषणाय, तुभ्यं नमः सती–शिरोमणि – नंदनाय ।
तुभ्यं नमः सकल–संकट – मोचकाय, तुभ्यं नमः गणि –गजेन्द्र–गणाधिपाय ।।

–: श्रद्धान्वित गुरुभक्त सुराणा परिवार :–

चंदनमल सुराणा
पुष्पा देवी सुराणा

चंपक मल सुराणा
इन्दु देवी सुराणा

नरेन्द्र कुमार सुराणा
संतोष देवी सुराणा

जय गुरु हस्ती जय महावीर जय गुरु हीरा-मान

अंक सौजन्य

व्यसनमुक्ति के प्रबल प्रेरक आचार्यश्री हीराचन्द्रजी म.सा. आदि ठाणा
का सन् 2020 कोसाणा चातुर्मास सम्पन्न होने पर श्रद्धार्पण

आचार्य श्री हस्तीमलजी म.सा. के परमभक्त, सरलमना श्रावकरत्न स्व. श्री घीसुलालजी एवं
श्राविकारत्न स्व. श्रीमती उगमादेवीजी बाघमार का पुण्य-स्मरण

स्व. श्री घीसुलालजी बाघमार

परस्परोपग्रहो जीवानाम्

स्व. श्रीमती उगमाबाईजी बाघमार

:: श्रद्धावनत ::

गणपतराज-स्व. श्रीमती प्रमिला देवी बाघमार
हेमन्त कुमार-शिल्पा बाघमार
उपेन्द्र कुमार-सलोनी बाघमार
यतन, खुशी एवं विहाना बाघमार

घीसुलाल बाघमार एण्ड सन्स, चेन्नई

U. K. B. Marketing, Coimbatore

ISSN 2249 - 2011 हिन्दी-मासिक

जिनवाणी

मंगल-मूल, धर्म की जननी, शाश्वत सुखदा कल्याणी।
द्रोह-मोह-छल-मान-मर्दिनी, फिर प्रगटी यह 'जिनवाणी'।।

卐 संरक्षक
अखिल भारतीय श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ
प्लॉट नं. 2, नेहरुपार्क, जोधपुर (राज.), फोन-0291-2636763
E-mail : absjrhssangh@gmail.com

卐 संस्थापक
श्री जैन रत्न विद्यालय, भोपालगढ़

卐 प्रकाशक
अशोककुमार सेठ, मन्त्री-सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल
दुकान नं. 182, के ऊपर, बापू बाजार, जयपुर-302003(राज.)
फोन-0141-2575997
जिनवाणी वेबसाइट- www.jinwani.in

卐 प्रधान सम्पादक
प्रो. (डॉ.) धर्मचन्द जैन

卐 सह-सम्पादक
नौरतनमल मेहता, जोधपुर
मनोज कुमार जैन, जयपुर

卐 सम्पादकीय कार्यालय
ए-9, महावीर उद्यान पथ, बजाजनगर, जयपुर-302015 (राज.)
फोन : 0141-2705088
E-mail : editorjinvani@gmail.com

卐 भारत सरकार द्वारा प्रदत्त
रजिस्ट्रेशन नं. 3653/57
डाक पंजीयन सं.-JaipurCity/413/2021-23
WPP Licence No. JaipurCity-WPP-04/2021-23
Posted at Jaipur RMS (PSO)

परस्परोपग्रहो जीवानाम्

अरई गंडं विसूइया,
आयंका विविहा फुसंति ते।
विहडइ विद्धंसइ ते सरीरयं,
समयं गोयम! मा पमायए।।

-उत्तराध्ययन सूत्र, 10.27

फोड़ा, पित्त तथा हैजा करते,
अनेक रुज तन में घर।
जिनसे विनष्ट होती काया,
गौतम! प्रमाद न क्षण का कर।।

सितम्बर, 2021
वीर निर्वाण सम्वत्, 2547
भाद्रपद, 2078

वर्ष 79 अंक 9

सदस्यता शुल्क

त्रिवार्षिक : 250 रु. स्तम्भ सदस्यता : 21000/-
20 वर्षीय, देश में : 1000 रु. संरक्षक सदस्यता : 11000/-
20 वर्षीय, विदेश में : 12500 रु. साहित्य आजीवन सदस्यता- 4000/-

एक प्रति का मूल्य : 10 रु.

शुल्क/साभार नकद राशि ``JINWANI'' बैंक खाता संख्या SBI 51026632986 IFSC No. SBIN 0031843 में जमा करा कर जमापर्ची (काउन्टर-प्रति) अथवा ड्राफ्ट भेजने का पता 'जिनवाणी', दुकान नं. 182 के ऊपर, बापू बाजार, जयपुर-302003 (राज.)
फोन नं.0141-2575997, E-mail : sgpmandal@yahoo.in

मुद्रक : डायमण्ड प्रिंटिंग प्रेस, मोतीसिंह भोमियों का रास्ता, जयपुर, फोन- 0141-4043938

नोट- यह आवश्यक नहीं कि लेखकों के विचारों से सम्पादक या मण्डल की सहमति हो।

विषयानुक्रम

सम्पादकीय-	प्रेरक है स्वतन्त्रता का अमृत महोत्सव	–डॉ. धर्मचन्द जैन	7
अमृत-चिन्तन-	आगम-वाणी	–आचार्यप्रवर श्री हस्तीमलजी म.सा.	10
विचार-वारिधि-	तप और ताप में भेद समझें	–आचार्यप्रवर श्री हस्तीमलजी म.सा.	12
प्रवचन-	संघ की शक्ति संघ-सदस्यों के कर्त्तव्य-पालन एवं व्रती जीवन पर निर्भर	–आचार्यप्रवर श्री हीराचन्द्रजी म.सा.	13
	क्या आप देव बनना चाहते हैं?	–महान् अध्य.श्री महेन्द्रमुनिजी म.सा.	17
	शिष्य का समर्पण ही गुरुपूजा	–म.व्याख्यानी श्रीगौतममुनिजी म.सा.	19
	आत्मा को पवित्र करे सो पुण्य	–तत्त्वचिन्तक श्री प्रमोदमुनिजी म.सा.	23
काव्य-	श्रावक छत्तीसी	–महासती श्री भाग्यप्रभाजी म.सा.	29
प्रासङ्गिक-	रत्नसंघ की गतमाह दो सजग दीर्घ तपस्याएँ	–डॉ. धर्मचन्द जैन	31
जीवन-व्यवहार-	वाणी-संयम और मौन-साधना	–डॉ. के. एल. पोकरना	34
	विनय : एक चुम्बकीय शक्ति	–श्री पारसमल चण्डालिया	41
	व्यावहारिक जीवन के नीति वाक्य (8)	–श्री पी.शिखरमल सुराणा	51
आत्म-चिन्तन	जानें अपने आपको	–श्रीमती शान्ता मोदी	39
	इच्छाएँ आबाद तो अनन्त भव बर्बाद	–श्री दिनेश बालड़	69
English-section	**How to overcome adversities in Life as depicted in 3rd Adhyayan of Acharang Sutra**	–*Varsha Shah*	43
तत्त्व-चर्चा-	जैनदर्शन में गर्भज जीव की अवधारणा	–सी.ए. डॉ. ओ. पी. चपलोत	48
चिन्तन-	पहले धर्म क्षेत्र में हो अणुव्रतों का पालन	–डॉ. अनेकान्त कुमार जैन	52
	अशरण भावना	–श्री लड्डूलाल जैन (देवली वाले)	58
जीवन-दृष्टि-	सुखी रहने के सरल तरीके	–श्रीमती अंशु संजय सुराणा	55
संस्मरण-	गुरुश्रद्धा का प्रभाव	–श्रीमती पूजा जैन	60
स्वास्थ्य-विज्ञान-	अच्छे स्वास्थ्य हेतु प्राणों का संयम आवश्यक	–डॉ. चंचलमल चोरड़िया	62
गीत/कविता-	तप की महिमा	–श्री गजेन्द्र चौपड़ा	11
	सन्तोष के सुख का हो भरण	–श्रीमती अभिलाषा हीरावत	30
	प्रभो! करें भव से पार, अब की बार	–श्री देवेन्द्रनाथ मोदी	38
	एक ही है मुक्ति का आधार	–श्री सुशील चाणोदिया	40
	धन-दौलत की मदहोशी में	–श्री मोहन कोठारी 'विनर'	57
	सुनो दु:ख भञ्जन की पुकार	–श्री रमेश 'मयंक'	59
	क्षमा	–श्रीमती कमला हणुवन्तमल सुराणा	67
	जीवन-बोध क्षणिकाएँ	–श्रद्धेय श्री यशवन्तमुनिजी म.सा.	87
विचार/चिन्तन-	अनन्त गुणों की जननी है : क्षमा	–श्री तरुण बोहरा 'तीर्थ'	16
	प्रेरक वाक्य	–श्री श्रीकान्त गुप्ता	22
	तनाव-रहित जीवन	–डॉ. धर्मचन्द जैन	42
	प्रवचन-कण	–व्याख्यात्री महासती श्री सुमनलताजी	61
	देखा कमाल	–श्री नरेन्द्र कक्कड़	61
	दान की सार्थकता	–श्री सुगालचन्द जैन	87
प्रेरक प्रसङ्ग-	बिल्ली का बच्चा	–श्री अशोक कुमार जैन (हरसाना)	64
साहित्य-समीक्षा-	नूतन साहित्य	–श्री गौतमचन्द जैन	65
समाचार-विविधा-	समाचार-संकलन	-संकलित	70
	साभार-प्राप्ति-स्वीकार	-संकलित	88
बाल-जिनवाणी -	विभिन्न आलेख/रचनाएँ	–विभिन्न लेखक	90

10 सितम्बर 2021
जिनवाणी 7
ISSN 2249-2011

सम्पादकीय

प्रेरक है स्वतन्त्रता का अमृत महोत्सव

डॉ. धर्मचन्द जैन

पन्द्रह अगस्त 1947 का पावन दिन भारत के भाग्य को नया आकार प्रदान करने वाला महत्त्वपूर्ण दिवस था। इस दिन भारत ने अंग्रेजों के आततायी शासन से मुक्ति प्राप्त की थी। यह स्वतन्त्रता केवल उनकी पराधीनता से ही मुक्ति का वरदान नहीं थी, अपितु जो भारत पहले अनेक रियासतों में बँटा हुआ था, उसको भी एक सूत्र में पिरोने का यह शुभारम्भ दिवस था। अनेक राजा जो परस्पर एक-दूसरे से युद्ध करते रहते थे, अपनी छोटी-सी रियासत को कुछ बड़ी बनाने के लिए जन-धन की हानि करते रहते थे, उस प्रवृत्ति का भी स्वतन्त्रता दिवस पर अन्त हो गया। यह स्वतन्त्रता दिवस समूचे भारत को एक करने की क्रान्ति लेकर उपस्थित हुआ था। भारत का दुर्भाग्य कहें या उस समय की नियति, भारत देश स्वतन्त्रता के साथ दो टुकड़ों में विभक्त हो गया-हिन्दुस्तान और पाकिस्तान। अब इस अमंगल को भूल जाने में ही हमारा मंगल है। वह हिन्दुस्तान ही अब भारत है। इसे इण्डिया के नाम से भी जाना जाता है। हमें इस भारत पर गर्व है। यह हमारे प्राचीन गौरव का स्मरण कराता है। ऋषभदेव के चक्रवर्ती पुत्र भरत के नाम पर इस देश का नाम भारत पड़ा। दुष्यन्त पुत्र भरत के नाम पर भी इसका नाम भारत कहा जाता है।

भारत की यह स्वतन्त्रता हमें अनेक रूपों में प्राप्त हुई है। उसमें वैचारिक स्वतन्त्रता के साथ धार्मिक स्वतन्त्रता एवं अभिव्यक्ति की स्वतन्त्रता मुख्य है। स्वतन्त्र भारत का अपना एक संविधान बना जो संविधानसभा में 26 नवम्बर, 1949 को पारित हुआ तथा 26 जनवरी, 1950 से सम्पूर्ण देश पर लागू हो गया। यह संविधान भी स्वतन्त्रता की परिणति है और लोकतन्त्र की प्राप्ति भी इस स्वतन्त्रता का ही परिणाम है जिसका सञ्चालन संविधान के माध्यम से होता है। प्रजा का प्रजा पर प्रजा के द्वारा शासन होना प्रजा की स्वतन्त्रता का बड़ा उदाहरण है। इस स्वतन्त्रता के पश्चात् देश में सामाजिक, आर्थिक एवं राजनीतिक न्याय लागू किया गया। जन-जन को समुचित न्याय प्राप्त हो सके, इसके लिए न्यायालयों की स्थापना हुई। देश की समस्याओं पर विचार करने एवं देश के विकास हेतु उचित निर्णय लेने के लिए संसद की स्थापना हुई, जिसके दो अङ्ग हैं-लोकसभा और राज्यसभा। राज्यों में विधानसभाएँ स्थापित हुईं। गाँवों में प्रशासन पञ्चायतों के माध्यम से पहुँचा। स्वतन्त्रता को वन्दन करते हुए विनायक दामोदर सावरकर ने गीति में लिखा है-

स्वतन्त्रते भगवति ! त्वामहं यशोयुतां वन्दे।
जयोऽस्तु ते श्रीमहन्मंगले शिवास्पदे शुभदे।।

स्वतन्त्रता के साथ समानता एवं पारस्परिक बन्धुता का उदात्त लक्ष्य बना । दलितों एवं निम्न वर्ग के लोगों को समानता का दर्जा दिया गया तथा उनके विकास हेतु योजनाएँ बनीं। उनको सरकारी सेवा में एवं शिक्षा में आरक्षण प्रदान कर ऊँचा उठाया गया। महिलाओं को भी पुरुषों के समान समझने एवं उन्हें हर क्षेत्र में आगे बढ़ने के अवसर प्रदान करने का मार्ग प्रशस्त हुआ। यही कारण है कि महिलाएँ आज पुरुषों के साथ हर क्षेत्र में कार्य कर रही हैं एवं उनका परिवारिक तथा सामाजिक स्तर बेहतर बना है और बन रहा है। शिक्षा में वे पुरुषों से भी आगे निकल रही हैं। वे शिक्षा, चिकित्सा, प्रशासनिक सेवा, कम्पनी सञ्चालन, बैंक, पुलिस, सेना आदि सभी स्थानों पर दृग्गोचर हो रही हैं। यह भी स्वतन्त्रता प्राप्ति का प्रभाव है, जिसे निरन्तर गति मिल रही है।

सबसे बड़ा लाभ देश की एकता का हुआ। उत्तर,

दक्षिण, पूर्व, पश्चिम का विशाल भारत विभिन्न राज्यों में विभक्त होकर भी केन्द्र सरकार से जुड़ा होने के कारण एक है। देश में प्रशासन का विकेन्द्रीकरण भी है तो एकत्व भी।

गगन में उड़ता पंछी जिस आनन्द एवं ऊँचाई का अनुभव करता है उससे भी अधिक आनन्द एवं विकास का अनुभव हमें स्वतन्त्र भारत में हो रहा है। स्वतन्त्र भारत में हमें जो लाभ का अनुभव हो रहा है उसे एक श्लोक में इस प्रकार गूँथा जा सकता है–

न्यायं सामाजिकं प्राप्य, स्वतन्त्रतां समानतां।
बन्धुत्वं चापि संलभ्य, स्वातन्त्र्यं हि भजामहे।।

स्वतन्त्र भारत में विकास के नए आयाम खुले हैं। नये उद्योग स्थापित हुए हैं। कृषि, दुग्ध आदि के उत्पादन में वृद्धि हुई है। व्यापार का विकास हुआ है। देश में विभिन्न प्रकार के कार्य करने के अवसरों का भी विकास हुआ है।

स्वतन्त्रता की प्राप्ति कोई मामूली प्रयत्नों से नहीं हुई। सन् 1857 की क्रान्ति से इसकी धारा प्रवाहित होती रही। झाँसी की रानी लक्ष्मीबाई, नानासाहब, तांत्याटोपे आदि से आन्दोलन का प्रारम्भ हुआ। इनके पश्चात् अनेक स्वतन्त्रता सेनानी जुड़ते रहे। महाराष्ट्र के बालगंगाधर तिलक को अंग्रेज़ सरकार ने प्रथम स्वतन्त्रता आन्दोलनकारी का दर्जा दिया। उनके साथ पंजाब में लाला लाजपतराय और बंगाल में विपिनचन्द्र पाल भी महान् क्रान्तिकारी हुए। दादा भाई नौरोजी, रामप्रसाद बिस्मिल, महात्मा गाँधी, सरदार वल्लभभाई पटेल, जवाहरलाल नेहरू, चितरञ्जन दास, चन्द्रशेखर आज़ाद, भगत सिंह, सुभाषचन्द्र बोस, मंगल पाण्डे, के.एम. मुंशी, सुखदेव आदि स्वतन्त्रता सेनानियों ने अपनी अपनी भूमिका निभाकर भारत को अंग्रेजों की गुलामी से मुक्त कराया। संस्कृत सहित विभिन्न भाषाओं के साहित्यकारों की भी इसमें महत्त्वपूर्ण भूमिका रही। बंकिम चन्द्र, दामोदर सावरकर, अर्जुनलाल सेठी, पण्डिता क्षमाराव आदि अनेक नाम उल्लेखनीय हैं।

स्वतन्त्रता आन्दोलन में दो प्रकार के दल रहे– गरमदल और नरमदल । महात्मा गाँधी नरम दल के नेता थे तो गरम दल में बालगंगाधर तिलक, सुभाषचन्द्र बोस, भगत सिंह, चन्द्रशेखर आज़ाद जैसे कर्मठ वीर क्रान्तिकारी थे। महात्मा गाँधी अहिंसा एवं सत्य के आधार पर अंग्रेज़ी शासन का विरोध प्रकट करते थे तो वहीं भगत सिंह जैसे नेता अपने जीवन का बलिदान करने के लिए तैयार रहते थे। उन्होंने अपने जीवन का बलिदान दिया भी। महात्मा गाँधी हिंसा के बिना सत्याग्रह, सविनय अवज्ञा आन्दोलन, भारत छोड़ो आन्दोलन आदि के हिमायती रहे।

सभी प्रकार के प्रयत्नों का परिणाम रहा स्वतन्त्रता की प्राप्ति। नारायण शास्त्री कांकर के शब्दों में–

असंख्यवीरा निजमातृभूमेर्, विदेशिपाशं परिभङ्क्तुकामा:।
अपूर्वशौर्यं परिदर्शयन्तो, यश:शरीरा अमरा अभूवन्।।

अपूर्व शौर्य शालियों के बलिदान को सदैव याद किया जाएगा तथा वे यश:शरीर में चिरकाल तक अमर बने रहेंगे।

संस्कृत रत्नाकर पत्रिका के सम्पादक कविश्रेष्ठ भट्ट मथुरानाथ शास्त्री ने स्वतन्त्रता प्राप्ति पर प्रकाशित एक अंक में घनाक्षरी छन्द में भाव इस प्रकार निबद्ध किए–

पूर्वपरतन्त्रतामपास्यामोघमन्त्रतया।
सर्वत: स्वतन्त्रतया भारतविभा विभातु ।।

कलकत्ता से पण्डित अम्बिका प्रसाद वाजपेयी के सम्पादन में प्रकाशित 'स्वतन्त्र' नामक पत्र के प्रत्येक अंक में निम्नाङ्कित पद्य प्रकाशित होता था जो स्वतन्त्रता की महत्ता का प्रतिपादन करता है–

पारतन्त्र्यात् परं दु:खं, न स्वातन्त्र्यात् परं सुखम्
अप्रवासी गृही नित्यं स्वतन्त्र: सुखमेधते।।

यह देश पराधीनता की जञ्जीरों से मुक्त हुआ है, किन्तु अंग्रेजों के द्वारा आहत की गई सांस्कृतिक चेतना के दुष्प्रभाव से अभी तक मुक्त नहीं हुआ है। उसकी मुक्ति भारतीय संस्कारों से ओतप्रोत शिक्षा प्रणाली से ही सम्भव है। स्वतन्त्रता दिवस हमें प्रति वर्ष हमारे उन पूर्वजों का स्मरण कराता है जिन्होंने अपना सब कुछ त्यागकर उसे देश की सेवा में बलि चढ़ा दिया, सम्पूर्ण

जीवन देश हित में लगा दिया। हम आज उनकी बदौलत स्वतन्त्र हैं। हमें उनसे शिक्षा लेनी चाहिए कि हम अपने स्वार्थों को गौण कर देश हित को प्रधानता प्रदान करें।

स्वतन्त्रतासुखं श्रेष्ठं, देशहितं ततोऽधिकम्।
स्वार्थं संत्यज्य कुर्याम, देशसेवां, वयं जना:।।

स्वतन्त्रता दिवस को 74 वर्ष पूर्ण होकर 75वाँ वर्ष प्रारम्भ हो गया है। जिसे देश में अमृत महोत्सव के रूप में मनाया जा रहा है। इस अवसर पर हम यह संकल्प करें कि हम हमारे स्वार्थों से ऊपर उठकर देश की एवं देशवासियों की सेवा करेंगे। इसी से यह देश निरन्तर प्रगति पथ पर आगे बढ़ सकेगा। देश की सेवा तभी सम्भव है जब हम अपने निजी सुख एवं इच्छाओं को महत्त्व न देकर देशवासियों के सुख का भी ध्यान रखें।

देश की यह स्वतन्त्रता हमें अदृश्य आत्मिक स्वतन्त्रता के लिए भी प्रेरित करती है। सतत प्रयत्नशीलता से जिस प्रकार देश अंग्रेजों की बाह्य पराधीनता की बेड़ियों से मुक्त हुआ, इसी प्रकार निरन्तर सजगतापूर्वक कृत साधना हमें आत्मिक स्वाधीनता का अनुभव करा सकती है।

आज हम वस्तु, व्यक्ति एवं परिस्थिति की पराधीनता में जकड़े हुए हैं। उस पराधीनता से दु:ख एवं विवशता का अनुभव भी करते हैं, किन्तु उससे मुक्ति का न तो उत्कट लक्ष्य बनाते हैं और न ही उससे मुक्त होने की साधना करते हैं। देश को पराधीन बनाने वाले तो दूसरे थे, किन्तु आत्मिक पराधीनता किसी अन्य के द्वारा नहीं, स्वयं के द्वारा उत्पन्न की गई है और स्वयं ही उस पराधीनता से मुक्त हो सकते हैं।

हम गुलाम हैं अपनी इन्द्रियों के और मन के। हम गुलाम हैं विषय-वासनाओं के। हम गुलाम हैं सुख-सुविधाओं के और अपनी इच्छाओं के। इसके कारण हम वस्तु, व्यक्ति एवं परिस्थिति के गुलाम बन जाते हैं। यह गुलामी या दासता हमें स्वतन्त्र नहीं होने देती। 'स्वतन्त्रता' का अर्थ है-आत्मानुशासन। स्वयं का स्वयं पर पूर्ण नियन्त्रण होना स्वतन्त्रता है। यह नियन्त्रण अहिंसा, संयम एवं तपस्वरूप धर्म की साधना से सम्भव है। अहिंसा जहाँ हमें तनावमुक्त बनाती है वहीं संयम स्वानुशासन में लाता है और तप पूर्व में पड़े कुसंस्कारों का नाश करता है।

विषय-भोग की लालसा पराधीन बनाती है। पराधीनता हमारे आत्मिक विकास के लिए बेड़ी है। स्वाधीनता का अनुभव ही आत्मिक विकास का मार्ग प्रशस्त करता है। सभी स्वाधीन होना चाहते हैं, किन्तु स्वाधीनता के नाम पर हम कब पराधीन बन जाते हैं, यह हमें ज्ञात ही नहीं होता। मानव जब किसी वस्तु में सुख मानता है, किसी व्यक्ति एवं परिस्थिति में सुख मानता है तो उनकी कामना करता है। उनके प्राप्त हो जाने पर उनसे ममता करता है। ये कामना एवं ममता पराधीनता को पुष्ट करती हैं। पराधीन व्यक्ति भोगों का त्याग नहीं कर पाता। वह दु:खी होकर भी उनसे सुखभोग की कामना से रहित नहीं हो पाता है। दशवैकालिकसूत्र में स्वाधीनतापूर्वक भोगों को त्यागने का सन्देश दिया गया है-**साहीणे चयइ भोए, से हु चाइत्ति वुच्चइ।**

हमारी दृष्टि कैसी है, हमारा सोच कैसा है, यही हमें पराधीन या स्वाधीन बनाता है। जो व्यक्ति अपने को मिली हुई वस्तु, योग्यता, परिस्थिति आदि का सदुपयोग करता है, व्यक्तियों की सेवा करता है वह स्वाधीन बनता है। स्वाधीनता के अनुभव में ही आत्म-शान्ति एवं आनन्द का अनुभव होता है। उसमें आत्मा का विकास तीव्रता से होता है। इसलिए साधक स्वाधीनता या स्वतन्त्रता को लक्ष्य बनाता है।

धर्म का सच्चा मार्ग स्वाधीनता का मार्ग है। जिसे संसार से कुछ नहीं चाहिए, वह पूर्ण स्वाधीन है। जो संसार से कुछ चाहता है वह पराधीन है। जिसे शरीर, धन, प्रतिष्ठा आदि की चाह है वह पराधीन है तथा जो इनको दूसरों की सेवा में लगाता है वह स्वाधीन है। स्वाधीनता को ही दूसरे शब्दों में मुक्ति कहा जाता है और यह मोह के नाश से प्राप्त होती है। मोह के कारण सारे दोष उत्पन्न होते हैं तथा आत्मिक नि:स्वार्थ प्रेम से उन दोषों का विनाश होता है।

10 सितम्बर 2021
जिनवाणी 10
ISSN 2249-2011

अमृत-चिन्तन

आगम-वाणी

डॉ. धर्मचन्द जैन

एयारिसे पंचकुसीलऽसंवुडे, रूवंधरे मुणिपवराण हेट्ठिमे। अयंसि लोए विसमेव गरहिए, ण से इहं णेव परंमि लोए।। -उत्तराध्ययनसूत्र, अध्ययन 17, गाथा 20

अर्थ-इस प्रकार का (पापश्रमणत्व का आचरण करने वाला वह साधु) पार्श्वस्थ आदि पंचकुशील साधुओं के समान असंवृत्त है। वह केवल मुनिवेश का ही धारक है। श्रेष्ठ मुनियों में वह सबसे निकृष्ट है। वह इस लोक में विषवत् निन्दनीय होता है। अतः वह न तो इस लोक का रहता है और न ही परलोक का।

विवेचन-पञ्च महाव्रत, पाँच समिति एवं तीन गुप्तियों से युक्त मुनि पूज्य होता है। जो इनके पालन में दोष लगाता है वह पापश्रमण की कोटि में आता है। उत्तराध्ययनसूत्र के 17वें पापश्रमणीय अध्ययन में उन दोषों का कथन किया गया है जिनके कारण कोई श्रमणमुनि पापश्रमण बन जाता है। मुनिवेश को धारण करने मात्र से कोई व्यक्ति मुनि नहीं हो जाता है। बाहर के वेश का त्याग करने मात्र से भी कोई मुनि नहीं बन जाता है। बाह्य रूप से मुनि दिखने मात्र से कोई मुनि या साधु नहीं होता। वह मुनि की कोटि में तभी आता है जब वह मुनि के मूलगुणों एवं उत्तरगुणों को धारण करता है। मुनि की साधना पापों से रहित होकर सम्पन्न होती है। वह प्रतिकूल परिस्थितियों में भी समभाव का धारक होता है। हिंसा, झूठ, चोरी, मैथुन सेवन एवं परिग्रह का वह मन, वचन एवं काया इन तीनों योगों से न स्वयं सेवन करता है, न दूसरों को प्रेरणा करता है तथा न ही इनके सेवन का अनुमोदन करता है। इस प्रकार वह पाँच प्रकार के कुशील का त्यागी होता है। अहिंसा, सत्य, अचौर्य, ब्रह्मचर्य एवं अपरिग्रह इन पाँच को शील स्वीकार किया गया है। ये पञ्चशील हैं तथा इनका पालन न करना दोष पूर्ण है।

उत्तराध्ययनसूत्र के इस 17वें अध्ययन की गाथा 3 से 19 तक पापश्रमण का वर्णन किया गया है। इन 17 गाथाओं में बताया गया है कि जो निद्रालु स्वभाव का होता है, खा-पीकर सो जाता है, वह पापश्रमण है। जो आचार्य, उपाध्याय आदि से ज्ञान सीखकर भी उनकी निन्दा करता है उन्हें कोसता है, उनका आदर-सम्मान नहीं करता है वह पापश्रमण मुनि है। जो प्राणी, बीज, हरियाली आदि का मर्दन करता है, असंयम में संयम मानता है वह पापश्रमण है।

जो संस्तारक, फलक, पीठ आदि का प्रमार्जन किए बिना उनका उपयोग करता है, ईर्यासमिति का सम्यक् पालन नहीं करता, क्रोध करता है वह पापश्रमण है। जो सजगतापूर्वक प्रतिलेखना नहीं करता तथा गुरु का तिरस्कार करता है वह पापश्रमण है। जो मायावी व्यवहार करता है, वाचाल होता है, अहंकारी, लोभी और इन्द्रिय-मन पर नियन्त्रण नहीं रखता, जो प्राप्त वस्तु आदि का संविभाग नहीं करता वह पापश्रमण होता है। जो उपशान्त विवाद को पुनः भड़का देता है, आत्मप्रज्ञा का हनन करता है, विग्रह-कलह आदि में लगा रहता है वह भी पापश्रमण होता है। स्थिरतापूर्वक नहीं बैठता, कुचेष्टाएँ करता है, धूल भरे पैरों से सो जाता है, शय्या की प्रतिलेखना नहीं करता वह भी पापश्रमण होता है। जो सदैव दूध, दही, घी आदि विगयों का आहार करता है तथा तपस्या नहीं करता वह भी पापश्रमण होता है। सूर्यास्त के पश्चात् भी जो आहार करता है, अपने आचार्य का परित्याग कर परपाखण्ड का सेवन करता है, जो दूसरों के घर में व्यापृत रहता है और ज्योतिष आदि निमित्त शास्त्र से दूसरों को उपाय बताता है, अपने ज्ञातिजनों से प्राप्त आहार का ही सेवन करता है, गृहस्थ की शय्या पर बैठता है वह भी पापश्रमण होता है।

इस प्रकार श्रमण की चर्या में दोष लगाने वाला

मुनि पापी श्रमण कहा गया है। आगमों में श्रमण की चर्या का निर्दोष पालन करने हेतु पद-पद पर शिक्षा दी गई है।

प्रस्तुत गाथा में यह स्पष्ट किया गया है इस प्रकार का पापी श्रमण पाँच प्रकार के कुशीलों (हिंसा, झूठ, चोरी, मैथुन सेवन एवं परिग्रह) से संवृत्त नहीं होता अर्थात् इनसे पूर्ण विरत नहीं होता। वह बाहर से भले ही रूप में मुनि जैसा दिखाई देता हो, किन्तु वह मुनिवरों में निकृष्टतम होता है। यही नहीं, वह इस लोक में विष के समान निन्दनीय एवं गर्हणीय होता है।

आचाराङ्ग, सूत्रकृताङ्ग, स्थानाङ्ग, समवायाङ्ग, ज्ञाताधर्मकथाङ्ग, उत्तराध्ययन, दशवैकालिक, व्यवहारसूत्र आदि सभी आगम श्रमण-जीवन के लिए मार्गदर्शक हैं। उत्तराध्ययनसूत्र की प्रस्तुत गाथा उन सन्त-मुनियों-महासतियों को सावधान कर रही है कि वे पञ्च महाव्रतों का पालन सम्यक् रीति से करें। यदि उनके पालन में पोल रह गई तो वह विष की भाँति है जो स्वयं श्रमण का तो पतन करती है, किन्तु जो उनके सम्पर्क में आकर उनसे प्रभावित होता है, उसका भी बेड़ा गर्क है।

साधु-सन्त यदि सुविधावाद में एवं भौतिक आकर्षणों में जीने लगते हैं, उनमें रस लेने लगते हैं, तो पञ्च महाव्रतों के पालन में कहीं न कहीं शिथिलता को आमन्त्रित करते हैं और धीरे-धीरे वे स्वयं का पतन करने के साथ गृहस्थों का भी पतन करते हैं। इसलिए पापश्रमण के दोषों का वर्जन करते हुए महाव्रत, समिति एवं गुप्ति का पालन निष्ठा और ईमानदारी के साथ करना चाहिए। माया एवं झूठ का आलम्बन लेकर एक बार लोगों की आँखों में धूल झोंकी जा सकती है, किन्तु ऐसे साधु न तो आत्मकल्याण कर पाते हैं और न ही परकल्याण। वे अपना यह लोक भी बिगाड़ लेते हैं तथा परलोक भी। अत: संयम एवं संवर का पालन सही रूप से करके इस लोक में अमृत की भाँति कार्य करके इस लोक एवं परलोक में आराधक बनना चाहिए, जिससे स्व-कल्याण एवं पर-कल्याण दोनों सध सकेंगे।

श्रद्धेय श्री जितेन्द्रमुनिजी म.सा. के 36 उपवास की पूर्णता के अवसर पर

तप की महिमा

(तर्ज :: मेरे मन में है पारसनाथ.....)

तप की महिमा है अपरम्पार,
तप से होता है बेड़ा पार,
तप है जीवन का शृङ्गार,
तप से कट जाये कर्म हजार,
हो तपस्या करने वाला, तपस्वी कहलाये रे।
हो तपसी गुरुवर के गुण हम गायें रे-2

हो तुमने गुरु का आशीष पाया,
तुमने जिनशासन चमकाया,
हो तुमने गुरु हीरा गुण गाया,
गुरुवर मान का मान बढ़ाया,
तुम्हारी गुरु भक्ति को दुनिया ये सराये रे,
तुम्हारी तपस्या के गीत हम गायें रे-2

हो तुमने सत्पुरुषार्थ जगाया,
तुमने उत्तम तप ये ठाया,
हो तुमने जितेन्द्र नाम दिपाया,
तुमने रसना पे काबू पाया,
हो ऐसे त्यागी-तपसी गुरुवर को नम जायें रे,
हो त्यागी गुरुवर को शीष झुकायें रे-2

जोधाणा नगरी का भाग्य सवाया,
गुरु ने तप का ठाट लगाया,
श्रीसंघ है चरणों में आया,
अनुमोदन करके हर्षाया,
हो तेला करके अनुमोदन में साथ निभायें रे,
हो श्रीसंघ चरणों में शीष झुकायें रे-2

-रचयिता : गजेन्द्र चौपड़ा, जोधपुर (राज.)

10 सितम्बर 2021
जिनवाणी 12
ISSN 2249-2011

विचार-वारिधि

तप और ताप में भेद समझें

आचार्यप्रवर श्री हस्तीमलजी म.सा.

- जिसके द्वारा सञ्चित कर्म एवं अन्तर के विकार तपकर-जलकर आत्म-प्रदेशों से पृथक् हों, उस क्रिया का नाम तप है।
- तप की परीक्षा क्या? तन तो मुर्झाया-सा लगे, पर मन हर्षित हो उठे। शरीर से ऐसा लगे कि शरीर तप रहा है, पर मन हर्ष से प्रफुल्लित हो उठे।
- आत्मा को पूर्णत: विशुद्ध बनाने के लिए बाह्य तप के साथ-साथ अन्तरङ्ग तप भी आवश्यक है। बाहर का तप इसलिये किया जाता है कि जो हमारा अन्तर विषय-कषायों की उत्तेजनाओं से आन्दोलित है, उद्वेलित है, हमारे अन्दर मोह, ममता और मिथ्यात्व का प्राचुर्य है, प्राबल्य है, वह कम हो, उसकी उत्तेजना शान्त हो, उसका प्राबल्य, उसका प्राचुर्य घटे एवं इस तरह उसे घटाते हुए अन्ततोगत्वा आन्तरिक तप से उन विकारों को पूर्णत: समाप्त करना है, उन्हें पूर्णत: नष्टकर आत्मा के विशुद्ध स्वरूप को प्रकट करना है।
- मान लीजिये कि एक भाई ने तीन दिन के लिए खाना बन्द करके तेले की तपस्या कर ली, लेकिन उसने आस्रव को नहीं रोका। एक घड़ी के लिए सत्सङ्ग में आया, उसके बाद घर चला गया, बाजार या दुकान घूमता रहा। बाजार में झूठ बोलने का मौका आया, ऊँचा-नीचा देने का कारण बन गया, किसी के साथ झगड़ा हुआ। तेले के तप में भी उसका पाप कितना रुका, यह विचार करना चाहिए।
- यदि किसी ने उपवास किया, बेला, तेला किया है, लेकिन उसका हिंसा का काम बन्द नहीं हुआ, झूठ बोलना बन्द नहीं हुआ, अदत्तादान बन्द नहीं हुआ, किसी से मजाक कर ली तो कुशील का त्याग दूषित हो गया। इस प्रकार तप में भी दोष का त्याग न करना उचित नहीं।
- एक आदमी उपवास, पौषध नहीं कर रहा है, लेकिन उसने उपवास पौषध करने वालों की सेवा की। सबके आसन बिछाता है, स्थान पूँजता है, दया करने वालों की थाली साफ करता है, तो यह भी एक तरह का तप है।
- आठ मदों में तपस्या का मद भी एक मद माना गया है। जाति-मद, कुल-मद, बल-मद, रूप-मद, धन-मद, ज्ञान-मद, ऐश्वर्य-मद आदि मदों के साथ यह भी एक मद गिना गया है। कभी अगर ज्ञान का और तप का भी मद यानी अहंकार आ जावे तो वह भी कर्मों के बन्ध को तोड़ने के स्थान पर उनके बन्ध को और प्रगाढ़ बनाने का कारण बन जाता है।
- तप और ताप में भेद समझें। अज्ञान भाव में विकारी वृत्तियों के वश में होकर तन को और मन को तपाया जाता है, वह ताप है। इसमें व्यक्ति अपने शरीर से भी कष्ट सहता है एवं दूसरे लोगों को भी कष्ट देता है। उसके अन्तर में काम, क्रोध की वृत्तियाँ सुलग रही हैं। अपने किसी बाह्य दुश्मन को मारना है, अमुक व्यक्ति का काम बिगाड़ना है, अमुक से बदला लेना है, उसको नुकसान पहुँचाना है, इस प्रकार की भावना से प्रेरित होकर अगर किसी व्यक्ति ने तप किया, जप किया, उपवास, बेला या तेला आदि किया तो वह तप नहीं ताप है, क्योंकि उसके भीतर में भी ताप है, मन में भी ताप है और बाहर तन में भी ताप है।
- कोई यह कहते हैं कि जैनियों की तपस्या में बेला-तेला-अठाई आदि तप से शरीर की हिंसा होती है, क्योंकि इनसे शरीर क्षीण होता है। किन्तु ऐसा सत्य नहीं है। यह हिंसा इसलिये नहीं हुई कि शरीर का जो स्वामी है, वह तपस्या से प्रसन्न है।

-'नमो पुरिसवरगंधहत्थीणं' ग्रन्थ से साभार

10 सितम्बर 2021
जिनवाणी 13
ISSN 2249-2011

प्रवचन

संघ की शक्ति संघ-सदस्यों के कर्त्तव्य-पालन एवं व्रती जीवन पर निर्भर

परमश्रद्धेय आचार्यप्रवर श्री हीराचन्द्रजी म.सा.

आचार्यप्रवर पूज्य गुरुदेव श्री हीराचन्द्रजी म.सा. ने दु:ख-मुक्ति में श्रद्धा को आवश्यक बताते हुए संघ सदस्यों को व्रत-आराधन करने के साथ श्रद्धाशील बनने का आह्वान किया। आचार्यप्रवर द्वारा सुराणा मार्केट स्थित सामायिक-स्वाध्याय भवन, पाली में 29 अगस्त, 2010 को फरमाए गये प्रवचन का आशुलेखन श्री नौरतनमलजी मेहता, जोधपुर ने किया है। -सम्पादक

संसार के सम्पूर्ण दु:खों का अन्त कर अविचल-अविनाशी पद मिलाने वाले सिद्ध भगवन्तों को, साधना में श्रद्धा के साथ अनन्त ज्ञान, अनन्त दर्शन मिलाने वाले तीर्थङ्कर भगवन्तों को एवं महाव्रत, समिति-गुप्ति की आराधना करने वाले सन्त भगवन्तों के श्रीचरणों में कोटि-कोटि वन्दन!

तीर्थङ्कर भगवान महावीर की आदेय-अनमोल वाणी में तिरने और तारने का एक ही रास्ता कहा गया है, जिसे आगम दो प्रकार के धर्म कह रहे हैं- **''दुविहे धम्मे पण्णत्ते, तं जहा-सुयधम्मे चेव, चरित्तधम्मे चेव।''**

तीर्थङ्कर भगवन्तों की वाणी सुनकर, चिन्तन और मनन करने के पश्चात् उसे हृदयंगम करने वालों के मुख से मात्र तीन शब्द निकलते हैं-**सद्दहामि णं भन्ते, पत्तियामि णं भन्ते, रोएमि णं भन्ते।**

भगवन्! अनेकानेक द्वन्द्व, दु:ख और पीड़ाओं से मुक्ति पाने का जो मार्ग आपने बताया है, मैं उस पर श्रद्धा करता हूँ प्रतीति करता हूँ, मुझे यह मार्ग रुचिकर है।

श्रद्धा करना बहुत मुश्किल है। 'तहत्ति' कह देना, स्वीकृति के वचन बोल देना, घणीखम्मा के द्वारा आदर करना, रोम-रोम हर्षित हो जाना, इतना सब होने पर भी श्रद्धा कठिन है, मुश्किल है, दुर्लभ है। बहुत से हैं जो सुनकर श्रद्धा करते हैं, कई तो सुनकर रोमाञ्चित हो जाते हैं और कुछ को अटूट विश्वास हो जाता है। श्रद्धा होगी तो आचरण होगा। श्रद्धा होगी तो व्रतों को धारण किया जाएगा। श्रद्धा होगी तो संसार से विरक्ति होगी।

आपने सुना होगा-गर्भ में आने के साथ जिनकी मातुश्री ने चौदह स्वप्न देखे, देवताओं ने जिनका जन्मोत्सव मनाया, पूर्व तीर्थङ्कर यह कहकर जाते हैं कि सिद्धार्थ-त्रिशला के यहाँ होने वाला सुपुत्र अन्तिम तीर्थङ्कर होगा। ऐसा जन्म लेने वाला बालक तीन ज्ञान लेकर आता है, जान रहा है-देख रहा है, फिर भी दूसरों के कहने के बजाय स्वयं होकर व्रताराधन करता है। जन्म के साथ जिनका मोक्ष निश्चित है, वे भी व्रत धारण करते हैं। आपके लिए किसी ज्योतिषी ने कहा या नहीं, पर जिनके जन्म के साथ कहा जा रहा है कि ये स्वयं तिरेंगे और तारने वाले तीर्थ की स्थापना करेंगे, फिर भी वे व्रत धारण करते हैं।

तीर्थङ्कर स्वयं सम्पूर्ण सावद्य-योग का त्याग करते हैं-**'सव्वं सावज्जं जोगं पच्चक्खामि।'** बाहर कोई त्याग करवाने वाला नहीं है, इसलिये सिद्ध भगवन्तों की साक्षी से स्वयं व्रत ग्रहण करते हैं। मेरा आपसे एक छोटा-सा प्रश्न है-तीर्थङ्कर व्रत क्यों धारण करते हैं? व्रती बनने वाला ही वीतरागी बनता है। याद रखें-नियम लेने वाला निरञ्जन बनता है। मर्यादा में रहने वाला मानव कहलाता है। अगर जीवन में मर्यादा है, नियम है, व्रत है तो उसका जीवन समाधि वाला है। उसका जीवन सन्तुष्ट रहता है और कहना चाहिए-उसका जीवन सुखी है। उस जीवन में पाप का सन्ताप नहीं होगा। उसके जीवन में हाय-हाय नहीं होगी। उसके जीवन में तृष्णा की ज्वाला भी नहीं रहेगी।

व्रती को सन्तोष का परम सुख मिलता ही है। आपने अनुभव किया होगा, यदि नहीं, तो अब भी

अनुभव करके देख लें। आपने कई दृष्टान्त सुने होंगे। पूनिया श्रावक मात्र बारह आने की पूँजी रखने वाला सुखी था, सन्तुष्ट था।

सुख किसमें? सुखी कौन? आपसे यह प्रश्न करूँ तो आपमें से कुछ लोग कह सकते हैं कि 'सन्तोषी सदा सुखी।' आपका यह उत्तर क्या स्थानक में कहने के लिए है? क्या यह उत्तर महाराज को बताने के लिए है? मान लीजिए आप महाराज के पास नहीं हैं और न ही स्थानक में हैं तो...? आप व्यापारियों के बीच में हैं तो क्या सन्तोष में सुख बतायेंगे? जो भी सन्तोष में सुख बताने वाले हैं, कहने वाले हैं क्या उनको तो अब सन्तोष है?

मैं आपसे कहूँ-पूनिया श्रावक सुखी था तो आनन्द-कामदेव जैसे श्रावक भी सुखी थे। सुख कब? सुख की परिभाषा क्या? मैं यहाँ सुख की कुछ व्याख्या करूँ-जो है उसमें सन्तुष्ट रहने वाला सुखी है।

सुबाहुकुमार सुखी था। वह राजकुमार था। उसके पाँच सौ रानियाँ थीं। वह राजमहल में रहता था, फिर भी सुखी था। कारण क्या? सुबाहुकुमार भगवान महावीर की वाणी श्रवण कर व्रती बन गया था। क्या, यह बात आपको समझ में आ रही है?

आप जवाब नहीं दे रहे हैं। कोई बात नहीं, आप श्रोता हैं। श्रोता जो भी है वह सुनता है, सुन-समझकर व्रत अङ्गीकार करे तो श्रावक है। सुबाहु ने जब तक वीतराग भगवन्त का संयोग नहीं पाया, तब तक वह मिथ्यात्व के उदय से, मोह के जोर से, विषय-वासना से सब कुछ होते हुए भी वह दुःखी था, पर भगवान की वाणी सुनकर उसे मानो सुखी होने की चाबी मिल गई।

आप भी वीतराग वाणी श्रवण कर रहे हैं। आपमें से सुखी होने की चाबी किन-किन को प्राप्त है जरा अपने-आप पर विचार तो करना।

मैं फिर कहूँ-समाधि में रहने का एकमात्र कारण है-व्रतग्रहण। व्रतग्रहण, नियम का परिपालन और मर्यादानुकूल आचरण समाधि का कारण है तो स्वास्थ्य का भी कारण है। सन्तोषवृत्ति के लिए आप कहते भी हैं-

गोधन, गजधन, वाजिधन,कंचन खान सुखान।
जब आवे सन्तोष धन तो सब धन धूलि समान।।

'सन्तोषी सदा सुखी' यह बात आप सभी बोलते हैं। अरे भाई! दूसरों को कहना या समझाना तो सरल है, खुद समझना और उसे आचरण में लाना सरल नहीं, कठिन है।

तीर्थङ्कर भगवन्तों का यह चतुर्विध संघ व्रतियों का संघ है। प्रभु के शासन में अव्रतियों का स्थान? संघ महाव्रतियों का भी होता है और अणुव्रतियों का भी। श्रावक अणुव्रती होते हैं। व्रतियों का संघ ही, संघ होता है।

आप श्रावक संघ के सदस्य हैं तो मुझे इसका जवाब दें-श्रावक कौन? श्रावक किसे कहना? श्रावक व्रती होता है या अव्रती? तीर्थङ्कर भगवान महावीर के शासन में एक लाख उनसठ हजार श्रावकों की बात आती है। भगवान के श्रावकों की संख्या करोड़ों में थी, पर जो शास्त्र में बात आई, वह बात व्रती श्रावकों को लेकर कही गई।

आज आपके संघ की कार्यकारिणी की बैठक है तो मेरा प्रश्न है-संघ किनका? यों तो चतुर्विध संघ में साधु-साध्वी और श्रावक-श्राविका समाहित हैं। अब, प्रश्न है-श्रावक कौन? क्या आप श्रावक हैं? क्या आप सभी कार्यकारिणी-सभा में बैठने लायक हैं? आपका यदि एक भी व्रत है तो आप श्रावक हैं और कार्यकारिणी बैठक में बैठने लायक हैं। यदि आपके एक भी व्रत नहीं तो...? श्रावक के लिए चाहे एक व्रत हो या बारह, व्रत है तो वह श्रावक है और श्रावक है तो ही वह कार्यकारिणी बैठक में बैठ सकता है।

आप कभी किसी बहुसंख्यक भोज में जाते हैं तो कूपन लेकर जाते हैं। कहीं किसी सराय या होटल में रुकना है तो पहले अपना नाम-पता लिखवाते हैं। क्या संघ-व्यवस्था में बैठने के लिए आपने अपना नाम लिखवाया है?

मैं सिद्धान्त के बजाय सरल भाषा में इतना ही

कहना पर्याप्त मानता हूँ कि शान्ति और समाधि में जीने का एक मात्र साधन है व्रत। जो मर्यादा में है वह मानव है। जो व्रत में है वह व्रती है। जो व्रत में है वह सुखी है, सन्तुष्ट है।

जो भी व्रत में है वह सुखी है। आप राजा-महाराजा ही नहीं, चक्रवर्ती सम्राट् बन जायें तो भी सुखी नहीं। क्यों? आपकी नज़र में कदाचित् धन-सम्पदा है तो जीवन सुखकारी लग सकता है। सुख, धन-सम्पत्ति में नहीं, सुख परिग्रह-महापरिग्रह में नहीं। सुख तो सन्तोष में हैं। बोलते भी हैं-'राजेश्वरी सो नरकेश्वरी।' बाहर के सुख अतल-तल में ले जाने वाले हैं।

सुख पाने का सरलतम रास्ता है-मर्यादा-पालन। आप मर्यादा में हैं तो किसी को तकलीफ नहीं आने वाली है। श्रावक के लिए श्रवण की बात कही जाती है। आप सुनो और सुनकर ग्रहण करो। मण भर सुनो और कण भर भी ग्रहण करो तो क्या आपका सुनना सार्थक है?

आप सुनें। जरूर सुनें। सुनकर ही न रहें, कुछ न कुछ व्रत लेकर व्रतों का सम्यक् पालन करें। आप प्रतिक्रमण में बोलते हैं 'एक व्रतधारी, जाव बारह व्रतधारी।'

आपका संघ व्रतियों का है। व्रत लेने वाला स्वस्थ रहता है। व्रतियों का संघ उन्नति करता है। व्रतियों का संघ कर्त्तव्य-पालन में सजग होता है। आचार्य भगवन्त पूज्य गुरुदेव श्री हस्तीमल जी महाराज तो संघ को शरीर की उपमा से उपमित करते थे। गुरुदेव का कथन रहता-उसका शरीर स्वस्थ रहता है जिसका दिमाग, आँखें, मुँह, हाथ-पैर सब अपनी-अपनी जगह कर्त्तव्य-पालन करते हैं। नहीं तो एक छोटा-सा काँटा पैर में लग जाय, तो पूरे शरीर में दिक्कत हो जाती है। जब तक पैर का काँटा नहीं निकलता तब तक सिर को शान्ति नहीं मिलती।

शरीर चाहे गरीब का हो या अमीर का, चाहे आदमी छोटा हो या बड़ा सब यदि स्वस्थ हैं तो ठीक है। इसी तरह संघ का हर सदस्य स्वस्थ रहना चाहिए। संघ का हर सदस्य अगर कर्त्तव्य-पालन कर रहा है तो वह संघ उन्नति-प्रगति करेगा।

शरीर के सभी अङ्ग सन्तुलित रहने चाहिए। ऐसा नहीं कि सिर बड़ा है और पाँव देखो तो पोलियोग्रस्त है, तो ऐसा व्यक्ति चल नहीं सकता। शरीर सन्तुलित है तो सभी अङ्ग बराबर काम करते हैं। संघ में सबका अपना-अपना महत्त्व है। बड़े अधिकारी कर्त्तव्य-पालन करें। वे एक-दूसरे के प्रति आदर-भावना तो रखें ही, प्रेम भी बनाये रखें। जिस संघ में परस्पर प्रेम है, वह संघ फलता-फूलता है, आगे बढ़ता है। वही संघ उन्नति-प्रगति करता है, जहाँ छोटे से बड़े सभी सदस्य कर्त्तव्य का पालन करें। संघ में शान्ति-समाधि और स्वस्थता का यही राज है।

संघ में शक्ति होती है। संघ की शक्ति संघ सदस्यों की धर्म क्रिया-सक्रियता से आँकी जाती है। व्रत-प्रत्याख्यानों से आप यदि संघ-सेवा में सन्नद्ध हैं तो सेवा का प्रत्येक कार्य बखूबी होगा। संघ की शक्ति संघ-सदस्यों के धर्माचरण से है।

संघ में चाहे सदस्य कम हो या ज्यादा, महत्त्व है तो व्रत-नियम के आचरण से। यह बात केवल आज ही आपके लिए है, ऐसा नहीं है। हर युग में धर्मीजनों का महत्त्व था, है और रहेगा भी। इस पृथ्वी पर एक सौ साठ-एक सौ सत्तर तीर्थङ्कर थे। इस धरती पर धर्मी संख्यात थे और अधर्मी अनन्त। धर्मी कम होते हुए भी उन्होंने जो काम किए, वे आज तक हमें प्रेरणा देते हैं।

आप मानकर चलिए-धरती पर कंकड़ ज्यादा होंगे, रत्न कम। व्रती भले ही कम हों, पर उनकी शक्ति महान् होती है। व्रती की ताकत अलग होती है। व्रती श्रावक के समक्ष दो-दो इन्द्र आ जायें तब भी उसका अनिष्ट नहीं हो सकता। एक व्रती को मारने के लिए देव भी सक्षम नहीं है।

शास्त्र की भाषा से समझें-यही जम्बूद्वीप जिसके चारों ओर लवण समुद्र है, फिर भी यह पृथ्वी डूबती क्यों नहीं? तीर्थङ्कर भगवान महावीर कहते हैं-जब तक

साधु-साध्वी और श्रावक-श्राविका रहेंगे, तब तक यह द्वीप ढहेगा नहीं, डूबेगा नहीं। एक मान्यता है कि यह धरती एक बॉल पर टिकी हुई है। पाँचवें आरे के अन्त में बाल जितना धर्म रहेगा, धरती उस पर टिकी रहेगी।

धर्म मर्यादा के सहारे टिका हुआ है, टिका रहेगा। आप व्रत में, नियम में, मर्यादा में जितने-जितने आगे बढ़ेंगे उतनी-उतनी मात्रा में व्रताराधन कर सकेंगे।

व्रताराधन किसी के लिए भारी नहीं हो सकता। सब व्रत ले सकते हैं, व्रत का पालन कर सकते हैं। आप अगर व्रती नहीं हैं तो व्रत लेकर संघ की बैठक में जाएँ तो आपके प्रति किसी की कोई शिकायत नहीं होगी। आप संघप्रेमी हैं, संघहितैषी हैं, संघ-सेवा में सब काम करना चाहते हैं तो व्रत धारण कर अपना आदर्श उपस्थित करें, यही शुभेच्छा है।

अनन्त गुणों की जननी है : क्षमा

श्री तरुण बोहरा 'तीर्थ'

1. पर्युषण पर्व का उद्घोष है क्षमा, संवत्सरी का पावन जयघोष है क्षमा।
2. खामेमि सव्वे जीवा पहल है क्षमा, लोक में अलौकिक महल है क्षमा।
3. जिनशासन की मुकुटमणि है क्षमा, रत्न ये अनमोल चिन्तामणि है क्षमा।
4. तप और संयम का शृङ्गार है क्षमा, जिनवाणी का सर्वसार है क्षमा।
5. प्रभु महावीर के जीवन का प्राण है क्षमा, महानता का प्रमाण है क्षमा।
6. शूरवीर के लिए सदा सम्भव है क्षमा, कायर के लिए असम्भव है क्षमा।
7. शत्रु पर विजय का ब्रह्मास्त्र है क्षमा, अहिंसा का अजेय अस्त्र है क्षमा।
8. आर्यावर्त की परम्परा है क्षमा, सहनशक्ति में मानो वसुन्धरा है क्षमा।
9. सर्वधर्मों में सर्वप्रथम है क्षमा, सर्वगुणों में सदा सर्वोत्तम है क्षमा।
10. हर जीव से मैत्री का भाव है क्षमा, आत्मा का शाश्वत स्वभाव है क्षमा।
11. अनन्त गुणों की जननी है क्षमा, ब्रह्माण्ड में व्याप्त ध्वनि है क्षमा।
12. ज्ञानी के ज्ञान की परीक्षा है क्षमा, सन्त-सती की वास्तविक दीक्षा है क्षमा।
13. संयम जीवन की समीक्षा है क्षमा, संसार में सबसे बड़ी शिक्षा है क्षमा।
14. क्रोध की अग्नि में विस्मृत है क्षमा, धर्मी के हृदय का अमृत है क्षमा।
15. विनय का श्रेष्ठतम अध्याय है क्षमा, सच्चे अर्थों में स्वाध्याय है क्षमा।
16. सामायिक का सारांश है क्षमा, प्रतिक्रमण का भावांश है क्षमा।
17. अनुकम्पा में विशेष है क्षमा, दया और दान का समावेश है क्षमा।
18. कलह दावानल को बुझा देती है क्षमा, क्लेश को सुलझा देती है क्षमा।
19. परिवार में समन्वय का यन्त्र है क्षमा, परस्पर शान्ति का मन्त्र है क्षमा।
20. माया के रंग में व्यर्थ है क्षमा, सरलता के संग में समर्थ है क्षमा।
21. आनन्द की नि:शब्द भाषा है क्षमा, प्रेम की असली परिभाषा है क्षमा।
22. क्षमा का एकमात्र विकल्प है क्षमा, दृढ़धर्मी का शुभ संकल्प है क्षमा।
23. वीरों को वीरत्व का वरदान है क्षमा, सही अर्थों में अभयदान है क्षमा।
24. हर जीव को प्रिय साता है क्षमा, 'तीर्थ' का पिता धर्म ..माता है क्षमा।

-'जिनशासन', 14, अग्रहार' स्ट्रीट, चिंतादिपेट, चेन्नई-600002 (तमिलनाडु)

10 सितम्बर 2021
जिनवाणी 17
ISSN 2249-2011

प्रवचन

क्या आप देव बनना चाहते हैं?

महान् अध्यवसायी श्री महेन्द्रमुनिजी म.सा.

पूज्य आचार्यप्रवर श्री हीराचन्द्रजी म.सा. के आज्ञानुवर्ती महान् अध्यवसायी श्री महेन्द्रमुनिजी म.सा. ने 12 अप्रैल, 2018 को देव नगर स्थित महावीर वाटिका में प्रवचन करते हुए कहा कि आज के अधिकांश लोग देव बनने के लिए मचल रहे हैं जबकि देवलोक के देवताओं की चाहना मानव बनने की रहती है। मुनिश्री ने कषाय उपशमन का आह्वान करते हुए जीवन-व्यवहार के तीन सूत्रों को अपनाने की प्रेरणा की। प्रवचन का आशुलेखन जिनवाणी के सह सम्पादक श्री नौरतनमलजी मेहता, जोधपुर ने किया है। -सम्पादक

बन्धुओं!

संसारी जीवों की यह एक विडम्बना ही है कि आज के अधिकांश मानव अपने पास जो भी सुख-सुविधा के साधन हैं उन्हें बढ़ाना चाहते हैं। उनकी सोच यहीं तक नहीं रहती, कुछ तो देवलोक में देव बनने तक सपने सञ्जोते हैं। हर व्यक्ति देव बनने की इच्छा भले ही रख ले, पर जब तक कषायों का उपशमन नहीं होगा तब तक स्वप्न साकार होने वाला नहीं है। आप देवनगर के वासी तो हैं, हो सकता है आप में से कुछ देवनगर के अधिकारी बनने की इच्छा रखते हों, लेकिन वह इच्छा कामयाब कब होती है? श्रुत स्वाध्याय करने वाले ज्ञानीजन न केवल जानते ही हैं बल्कि कहते भी हैं कि देवलोक के देवता तो मानव बनने की अभिलाषा रखते हैं, आप में से कई देव बनने की आकांक्षा रखें तो यह विरोधाभासी बात तो नहीं होगी? मानवों की यह कैसी विडम्बना है कि जो नहीं है उसे पाना चाहते हैं और जो है उसका उपयोग करना एवं उसे छोड़ना नहीं चाहते।

यह लोभ है, लोभी अपने पास जो है उसे छोड़ना नहीं चाहता तथा और अधिक पाने की इच्छा रखता है। आप-सब शहर के निवासी हैं, होशियार हैं। होशियार भी मामूली नहीं, पाँच में से तीन उठाकर दो में बराबर की पाँती रखने की बात कह जाते हैं । जहाँ लोभ है, वहाँ इच्छा है, आकांक्षा है, तृष्णा है। ज्ञानी कहते हैं यह प्रवृत्ति कल्याणकारी नहीं है।

लोभ कषाय है। आप जानते होंगे-कषाय चार हैं। पूछूँ-कौन-कौन से कषाय हैं? आप स्वाध्यायी हैं इसलिए बता रहे हैं कि क्रोध, मान, माया और लोभ ये चार कषाय हैं। चारों कषाय खतरनाक हैं। आप जानते होंगे-क्रोध प्रीति का नाश करता है तो मान विनय गुण का नाशक है। जहाँ मान है वहाँ विनय नहीं रह सकता। एक म्यान में दो तलवारें नहीं रहतीं, ऐसे ही मान और विनय साथ नहीं रह सकते।

आप में से कई मेरे साथ बोल तो रहे हैं, लेकिन बोलने से कुछ होने-जाने वाला नहीं है। आपमें से है कोई जो अपने हृदय पर हाथ रखकर कह दे कि मेरे मन में मान का भाव नहीं है? आप बोलें या नहीं बोलें, कहें या नहीं कहें-जहाँ मान है वहाँ विनय गुण नहीं रह सकता और जहाँ विनय गुण है वहाँ मान नहीं रह सकता । क्रोध प्रीति का नाश करता है तो मान विनय गुण का नाशक है।

माया मित्रता का नाश करती है। हमारे गुरुदेव (आचार्य श्री हीराचन्द्रजी महाराज) तो फरमाते हैं- ''माया काचरी का बीज है।'' काचरी का बीज दूध को फाड़ देता है। आपने खीर बनाई। खीर में बादाम-पिस्ते-केशर-इलायची डाली, उस खीर में थोडा-सा काचरा गिर जाय तो .....? खीर का स्वाद बिगड़ जाता है।

माया को समझना सबके लिए सरल नहीं होता। कुछ होशियार किस्म के लोग माया करने पर भी नज़र में नहीं आते। एक सज्जन एक घर में मेहमान बनकर गए। होशियार थे, बिना माँगे दूध कैसे मिले इसलिए माया का सहारा लेकर कहते हैं-मुझे दूध नहीं पीना, दूध नहीं चाहिए। ना .... ना .... करने वालों की मनुहार ज्यादा होती है। मेहमान बनकर आया व्यक्ति कह रहा है-मुझे दूध नहीं पीना, घर वाले उसकी मनुहार पर मनुहार करते हैं। माया मन में है, इसलिए कहता है आप बार-बार कह

रहे हैं, इसलिए मन नहीं होते हुए भी मुझे दूध पीना पड़ रहा है। मेहमान ने दूध पीने की बात तो मान ली, लेकिन वह बोला दूध में बादाम-पिस्ते मत मिलाना। वह ज्यों-ज्यों मना करता है त्यों-त्यों उसकी ज्यादा मनुहार होती है। दूध में बादाम-पिस्ते तो डाले ही उसमें थोड़ी केशर-इलायची भी डाल दी। वह बोला-आप तो मनुहार पर मनुहार कर रहे हैं। आपका मन रखने के लिए मैं दूध पी लेता हूँ। आपने दूध को गरिष्ठ बना दिया, अब इसमें तारे मत दिखाना। तारे क्या? जानते हैं आप? दूध में जब घी मिलाया जाता है तो घी ऊपर-ऊपर छा जाता है। यह है तारा दिखाना। मतलब बात-बात में होशियारी जताने का नाम है-माया। माया मित्रता का नाश करती है, तो लोभ सब गुणों का नाशक है। लोभ को आप तृष्णा भी कह सकते हैं, कामना-इच्छा भी कह सकते हैं। जहाँ लोभ है वहाँ सब गुण धूमिल हो जाते हैं।

आप शायद मन-ही-मन सोचते होंगे कि हम तो गृहस्थ हैं और लोभ के बिना हमारा काम नहीं चलता। मैं घर-गृहस्थी वाला हाँ आपरी तरह माथो मुण्डायोड़ा थोड़ी हाँ। हमें तो कमाना पड़ता है। कमाए बिना हमारा काम नहीं चलता। कमाने में लोभ को छोड़ा नहीं जा सकता। कमाना, खाना-खिलाना और रीति-रिवाज रखना गृहस्थों का रोज का काम है, पर इसके लिए भी कोई व्यवस्था तो होनी ही चाहिए।

आप नगरवासी हैं, होशियार हैं। आप अच्छी तरह जानते हैं-कहाँ चुप रहना और कहाँ बोलना। आप कहो या न भी कहो मैं बताता हूँ कि आपमें से अधिकांश लोगों की भावना है कि आप और-और पाने के लिए सब-कुछ करने को तैयार हैं। जो प्राप्त है उसे तो छोड़ना नहीं, और चाहना है बहुत-कुछ पाने की। यह क्या है? यह लोभ नहीं है क्या?

भाई, यह लोभ तो द्रौपदी के चीरहरण की तरह है। आप-सब लेना चाहते हैं, मिलाना चाहते हैं, ज्यादा-से-ज्यादा कमाना चाहते हैं। लेना तो आप जानते हैं, पर क्या छोड़ना भी आता है? आप अर्जन ही अर्जन करते रहो और विसर्जन नहीं करो तो ....? आप खाते-ही-खाते रहो और विसर्जन नहीं करो तो हॉस्पिटल तो नहीं जाना पड़ेगा?

अर्जन के साथ विसर्जन जरूरी है। क्योंकि लोभ की यह प्रवृत्ति सब गुणों का नाश करने वाली है। क्रोध-मान-माया-लोभ ये सभी कषाय आत्म-गुणों का नाश करने वाले हैं।

आप देवनगर में आचार्यश्री की सेवा-सन्निधि में आए हैं तो मानकर चलिये-गुरु जैसा दाता दूसरा नहीं होता। आप भोजन-पानी-वस्त्र-मकान देते हैं। ये सब दान में शुमार है, पर गुरु जैसा दानी दूसरा नहीं हो सकता। गुरु क्या देते हैं? गुरु संयम देते हैं, ज्ञान देते हैं। संयम का दान सर्वश्रेष्ठ है। मुझे 43 साल पहले आचार्यश्री हस्ती ने संयम का दान दिया, वे गुरुदेव तो अब नहीं रहे और संयम-साधना में बढ़ने की जिन्होंने आज्ञा-अनुमति दी, वे माता-पिता भी नहीं रहे, पर गुरु के पट्टधर हैं जो गुरु के पद चिह्नों पर चल रहे हैं। गुरु हस्ती पट्टधर गुरु हीरा मुक्तहस्त से दे रहे हैं। तप और दान का विशिष्ट पर्व हो या गुरु हस्ती का पुण्य-स्मृति-दिवस आचार्य श्री हीरा ने आपके आग्रह-अनुरोध को मान देकर स्वीकृति दे दी है। गुरु देते हैं, दाता हैं। आपने माँगा तो गुरुदेव ने देने में उदारता रखी, आप अक्षयतृतीया हो या आचार्यश्री हस्ती का पुण्य-स्मृतिदिवस अथवा परम्परा के मूलपुरुष पूज्य श्री कुशलचन्द्रजी म.सा. का स्मृतिदिवस या उपाध्यायप्रवर का दीक्षा-दिवस आप त्याग-तप में क्या करेंगे यह तो बताएँ।

आप-सब देव बनना चाहते हैं। गुरुदेव तो कहते हैं-आप जिस घर में रहते हैं, जिस परिवार के सदस्य हैं जिस संघ के अङ्ग हैं उसे स्वर्ग बना लें तो फिर आगे स्वर्ग-प्राप्ति का सपना भी साकार हो सकेगा। मैं लम्बी-चौड़ी बात के बजाय जीवन-व्यवहार के सूत्र बताकर आपसे अपेक्षा रखूँ कि आप कमाओ तो नीति से, खर्च करो तो रीति से और रहो तो प्रीति से इन सूत्रों को आप घर-परिवार और संघ-समाज में अपना लें तो आपका जीना सार्थक हो सकेगा, इन्हीं शब्दों के साथ....।

■

10 सितम्बर 2021
जिनवाणी 19
ISSN 2249-2011

प्रवचन

शिष्य का समर्पण ही गुरुपूजा

मधुर व्याख्यानी श्रद्धेय श्री गौतममुनिजी म.सा.

पूज्य आचार्यप्रवर श्री हीराचन्द्रजी म.सा. के आज्ञानुवर्ती मधुरव्याख्यानी श्रद्धेय श्री गौतममुनिजी म.सा. द्वारा मानसरोवर-जयपुर, चातुर्मास में 24 जुलाई, 2021 को फरमाए गए प्रवचन का संकलन श्री पदमचन्दजी गाँधी, जयपुर ने किया।

-सम्पादक

प्रभु महावीर को अनन्त वन्दन, आराध्य गुरु हस्ती के गुण स्मरण तथा आचार्यप्रवर एवं उपाध्यायश्री को वन्दन-नमन।

धर्मानुरागी बन्धुओं! आज सुबह से ही कई सारे लोगों ने गुरु पूर्णिमा का दिन बताते हुए गुरु वन्दन किया। मैंने विचार किया कि अपने जैन इतिहास अथवा आगमों में इस दिन का कहीं उल्लेख नहीं है। मगर गुरु की महिमा का वर्णन तो आगम और जैन इतिहास में कई स्थानों पर देखने और पढ़ने को मिल जायेगा। यह तो निश्चित है कि इस आर्य संस्कृति में और जिनशासन में गुरु का गौरव अनादि से रहा है। गुरु है तो ज्ञान है, गुरु है तो जिनशासन का सम्मान है। गुरु ही तो त्राण है, गुरु ही तो धर्म-परम्परा का प्राण है। इस जिनशासन में तो गुरु को ही प्रथम प्रणम्य **'नमो अरिहंताणं'** कहकर बताया। तरक्की के नाम पर, समृद्धि के नाम पर और विज्ञान के नाम पर भारत ने भले ही इतिहास बनाया होगा, परन्तु गुरु के गौरव का इतिहास यदि उस इतिहास से निकाल दिया जाये तो पीछे केवल शव ही बचेगा। कहने का आशय इतना ही है कि भारत के इतिहास में गुरु-तत्त्व ही प्राण है। भारत ने विश्व-गुरु का गौरव प्राप्त किया। इसके पीछे कारण यही रहा कि यहाँ की संस्कृति में उदार और उदात्त विचार रहे। आध्यात्मिकता, नीति-नियम, मर्यादा, प्रामाणिकता, सेवा और त्याग-वैराग्य का वातावरण हमेशा बना रहा। इसमें मुख्य कारण गुरु-शिष्य की परम्परा रही। स्वामी विवेकानन्द जब विदेश से भ्रमण कर भारत लौटे तो पत्रकारों ने उनसे प्रश्न किया कि आपने विदेशों की समृद्धि, वैभव आदि देखा अब इस गरीब भारत के बारे में क्या विचार आया? स्वामी विवेकानन्द ने कहा-''अब तक तो मैं भारत की इज्जत करता था, अब मैं भारत की पूजा करूँगा।'' भारत के एक प्रसिद्ध संन्यासी के यह अनुभव की कहानी के पीछे मुख्य कारक तत्त्व है, गुरु-शिष्य की परम्परा से उपजे आध्यात्मिक ज्ञान का भारतीय संस्कृति पर प्रभाव, जो आज भी जीवन्त है। गुरु-महिमा को लेकर किसी ने कितना सच कहा है-

जो बात दवा से नहीं होती, वो बात दुआ से होती है।
क़ाबिल गुरु मिले तो, हर बात ख़ुदा से होती है।

कहते हैं कि गुरु बने बगैर मोक्ष पाया जा सकता है मगर गुरु बनाये बगैर कभी कोई मोक्ष नहीं जा सकता। क्योंकि गुरु एक तरफ शक्ति का स्रोत होता है, तो दूसरी तरफ भक्ति का आधार होता है। गुरु ही तो मुक्ति का मन्त्रदाता होता है। साधकों का तारक एवं त्राता होता है गुरु चेतना का सारथि, संस्कारों का संवाहक और प्रेम का प्रतिनिधि होता है। लोगों ने कहा-आज गुरु-पूर्णिमा है, पर मैं यह कहना चाहता हूँ कि गुरु पूर्ण माँ है। गुरु की कोई होड़ नहीं, कोई जोड़ नहीं। जन्म देने वाली माँ भी कई बार धोखा दे जाती है। अपनी ही सन्तान के प्रति निष्ठुर बनकर उसे झाड़ियों के बीच में फेंक जाती है। इसलिये आज जन्मदात्री माँ की ममता पर भी प्रश्नचिह्न खड़ा हो गया है। पर गुरु तो पूर्ण माँ है, जिनका प्रेम, उदारता और अपनत्व अनन्त होता है। जो तलहटी से शिखर तक पहुँचाने में रक्षक बनकर खड़े रहते हैं। गुरु और शिष्य का रिश्ता ही अद्भुत होता है। संसार के रिश्ते

पिता-पुत्र, भाई-बहिन आदि के रूप में होते हैं। वे खून के रिश्ते भी कई बार एक-दूसरे का खून कर बैठते हैं। पर गुरु-शिष्य का रिश्ता तो ज्ञान का, लाभ का, प्रेम का, श्रद्धा एवं समर्पण का आधार होता है जो अद्भुत एवं अवर्णनीय कहलाता है। इसीलिए तो हमारा जिनशासन बोलता है-

जे गुरु उपदेश थी, पाम्यो केवलज्ञान।
गुरु रह्या छद्मस्थ पण विनय करे भगवान।।

अर्थात् जिस गुरु के मार्गदर्शन में शिष्य ने केवलज्ञान अर्जित किया, पर वह केवली बना हुआ शिष्य भी गुरु का विनय करता है। कृतज्ञता ज्ञापित करता है और गुरु के उपकारों को नहीं भूलता है। ज्ञाताधर्मकथाङ्गसूत्र में वर्णन आता है-

मिच्छत्तमोहियमणा पावसत्ता वि पाणिणो विगुणा।
फरिहोदगं व गुणिणो हवंति वरगुरुप्पसायाओ।।

-अध्ययन 12

अर्थात् जिनका मन मिथ्यात्व से मूढ़ बना हुआ है, जो पापों में अतीव आसक्त हैं और गुणों में शून्य हैं, वे प्राणी भी श्रेष्ठ गुरु का प्रसाद (कृपा) पाकर गुणवान् बन जाते हैं। जैसे-सुबुद्धि अमात्य के प्रसाद से खाई का गन्दा पानी भी शुद्ध, सुगन्धित और उत्तम जल बन गया।

गुरु ही परम गुरु से मिलाते हैं। गुरु की महिमा अपरम्पार है। जहाँ आकर भक्ति करनी न पड़े स्वत: हो जाए, वही गुरु है।

एक बात याद रखना। सच्चे गुरु का मिलना दुर्लभ है। गुरु कृपा प्राप्त करना और भी दुर्लभ है, मगर गुरु पर श्रद्धा रखना सबसे अधिक दुर्लभ है। यही श्रद्धा शिष्य के विकास का, प्रगति का इतिहास रचती है। गुरु कभी चमत्कार नहीं करते। जो भी चमत्कार होता है, वह सब शिष्य की श्रद्धा और समर्पण के आधार से होता है। गुरु के पास आशीर्वाद की कोई कमी नहीं होती। जितनी गहरी श्रद्धा उतना ही आशीष मिलता है। जैसे समुद्र के पास पानी की कोई कमी नहीं मगर कोई लोटा ही लेकर गया तो उतना ही पानी मिलेगा। यदि कोई टेंक लेकर जाये तो अधिक पानी मिलेगा। बस इसी तर्ज पर जितना श्रद्धा-समर्पण होगा, उतनी कृपा होगी। कृपा का मतलब भी यही होता है कि कर + पा = कृपा। अर्थात् श्रद्धा-समर्पण कर और आशीर्वाद पा। वही शिष्य गुरु से कुछ अर्जन करने में सफल हो सकता है, जिसके पास जिज्ञासा का भाव हो, समर्पण और श्रद्धा का भाव हो।

सच पूछा जाये तो आज शिष्य कम और गुरु ज्यादा मिलेंगे। कहाँ है हमारा शिष्यत्व का भाव? यदि गुरु शिष्य को खरी-खरी सुना दे, थोड़ा कठोर अनुशासन कर दे, रुख जरा प्रतिकूल कर दे तो देखना शिष्य को बिखरते, गुरु से दूर होते जरा देर नहीं लगती। यहाँ तक कि गुरु से सामना भी करते गुरेज नहीं करेंगे। जरा ध्यान से सुनना। शिष्य किसे कहते हैं? जो शीश देना जानता है, उसे शिष्य कहते हैं। जहाँ मात्र समर्पण, समर्पण, समर्पण के अतिरिक्त कुछ भी सोच नहीं, वही सच्चा शिष्य होता है। यह केवल अन्धभक्ति या अन्धश्रद्धा नहीं है, जहाँ सैद्धान्तिक ज्ञान समझना होता है, वहाँ शिष्य खुलकर तर्क करता है। क्योंकि यह तर्क ही शिष्य के ज्ञान में तरक्की का कारण होता है। पर जब आज्ञा, निर्देश की बात आती है, वहाँ फिर शिष्य दिमाग में कुछ भी तर्क नहीं लाता और वहाँ पूर्णता से समर्पण कर देता है। जो खुद को भुलाकर गुरु में ही स्वयं को समाहित कर देता है वही शिष्य होता है।

श्रद्धा-समर्पण क्या होते हैं? जरा सुनना। एक शिष्य कई दिनों से रुग्णता के कारण रोग-शय्या पर था। गुरु ने भी स्वास्थ्य के कई उपक्रम किये, पर सफलता नहीं मिली। एक दिन गुरु बैठे हुए थे और शिष्य सो रहा था। उसी समय शिष्य के पास में से एक सर्प गुज़र रहा था। तत्काल गुरु ने शिष्य से कहा-"वत्स! जरा देख, यह जो साँप जा रहा है, इसके मुँह में कितने दाँत हैं? जरा गिनकर बता दे।" वह शिष्य तत्काल उठा और साँप को पकड़कर उसके मुँह के दाँत गिनने का प्रयास कर रहा था

कि साँप ने उसको डस लिया। शिष्य बेहोश हो गया। गुरु जड़ी-बूँटियों के विशेषज्ञ थे। वे जानते थे कि जैसे लोहे से लोहा कटता है, वैसे ही ज़हर से ज़हर भी कटता है, नष्ट होता है। उन्होंने तत्काल जड़ी-बूँटियों से निर्मित औषधियों से उपचार किया। शिष्य धीरे-धीरे स्वस्थ होने लगा। गुरु निरन्तर औषध-दवा से उपचार करते रहे और शिष्य को होश आ गया। जब देखा कि शिष्य अब पूर्णरूपेण स्वस्थ हो गया है, तब गुरु ने शिष्य से आज पहला प्रश्न किया कि वत्स! जब मैंने तुझे साँप के मुँह में दाँत गिनने का निर्देश दिया, तब तेरे मन में क्या विचार आया? शिष्य ने जो उत्तर दिया, उसमें शिष्य का शिष्यत्व और अनन्त समर्पण की झलक मिलती है। शिष्य ने कहा-''गुरुदेव! मेरी तो एक ही सोच है कि गुरु जो भी आज्ञा-निर्देश देंगे, वो सब मेरे हित के लिए ही देंगे।'' कहने का तात्पर्य यही है कि शिष्यत्व की पूर्णता तो समर्पण में ही है। एक बात याद रखना-मेरे गुरु महावीर बनें या नहीं, परन्तु मैं जब तक गौतम नहीं बनूँगा, तब तक लक्ष्य में सिद्धि प्राप्त नहीं कर सकता। गुरु क्या कर रहे हैं, क्या नहीं? यह मेरा विषय नहीं है। मेरा तो एकमात्र विषय है-गुरु की आज्ञा को शिरोधार्य करना और समर्पण को जीवन्त रखना। गुरु हस्ती एक बात फरमाया करते थे-''गुरु करे ज्यूँ नहीं करणो, गुरु केवे ज्यूँ करणो।''

गुरु की आशातना करने वाला, गुरु के प्रति द्वेष या ईर्ष्या करने वाला और गुरु के प्रति कलुषित भाव रखने वाला कभी अपने कार्य में सफल नहीं हो सकता। गुरु हस्ती के श्रीमुख से एक दोहा सुना था-

काम दहन क्रिया करे, गुरु सूँ राखे द्वेष।
फले न फूले 'माधवा', करणी करो विशेष।।

अर्थात् कितनी ही तप-संयम की करणी कर ले, कितना ही उत्कृष्ट ब्रह्मचर्य का पालन कर ले, परन्तु यदि शिष्य गुरु-द्रोही है, गुरु से द्वेष रखता है तो वह शिष्य कभी फल-फूल नहीं सकता है। कहते हैं कि गोशालक, जिसने अपने गुरु महावीर की आशातना की, उनसे द्वेष रखा, वही गोशालक आगामी कई भवों के बाद जिस दिन केवली बनेगा, उस दिन अपनी प्रथम देशना में उपस्थित श्रोताओं से इस बात का जिक्र करेगा और कहेगा कि कभी भूलकर भी गुरु की आशातना मत करना। पिछले भवों में गोशालक के भव में की गई गुरु की आशातना और द्वेष का वर्णन करते हुए कहेगा कि कैसे उस आशातना के फलस्वरूप वह एक-एक नारकी में दो-दो बार गया? कितनी-कितनी और भी दुर्गति के दु:ख सहन करने पड़े। अत: भूलकर भी कभी गुरु की आशातना मत करना। शिष्य की पहचान तो कृतज्ञता से है। शिष्यत्व का अर्थ है गहन विनम्रता। शिष्य वही होता है, जो अपने को झुकाकर स्वयं के हृदय को पात्र बना लेता है। ऐसी समर्पण की साधना होती है। जो अपने गुरु-चरणों में समस्त अहंकार भाव को विसर्जित कर देता है। जो तत्त्व को पाने के लिए तैयार और तत्पर रहता है। सत्य को समझने के लिए प्रतिबद्ध रहता है। उसका मन लालसाओं के लिए नहीं ललकता है, उसकी चेतना कामनाओं से कीलित नहीं होती है, वासनाओं के पाश उसे कभी नहीं बाँधते हैं। वह अपनी अनघड़ प्रकृति को सुघड़ और सुसंस्कृत करने की प्यास रखता है। वह गुरु के मार्गदर्शन में स्वयं की प्रकृति का परिशोधन एवं परिमार्जन करता रहता है।

अब जरा हम यही भी समझ लेते हैं कि सच्चा गुरु कौन होता है? क्योंकि योग्य गुरु के अभाव में और तथाकथित गुरु के पास में भटकाव के अलावा कुछ भी नहीं होता है।

बिल्ली गुरु बगुलो कियो, दशा ऊजली देख।
कहो कालू कैसे तिरे, दोनों की गति एक।।
गुरु लोभी चेलो लालची, दोनों खेले दावँ।
दोनों डूबे बापड़ा, बैठ पत्थर की नाव।।

इन दोनों दोहों की व्याख्या करने की जरूरत नहीं है, क्योंकि दोनों का सब अर्थ स्पष्ट है। भला जो कनक

और कामिनी से जुड़े हुए हैं, जहाँ केवल बाह्य प्रदर्शन, आडम्बर तथा सत्ता, सम्पत्ति की ही लालसा सञ्जोकर रखते हैं, ऐसे गुरु कभी न तो खुद तिर सकते हैं और न दूसरों को तार सकते हैं। अनुभवी कबीरदासजी ने कितनी सटीक बात कही है-

साधु होय संग्रह करे, दूजे दिन को नीर।
तिरे न तारे वो कभी, कह गये दास कबीर।।

जब अगले दिन के पानी में संग्रह की लालसा रखने वाला साधु (गुरु) भी तिर नहीं सकता और तार नहीं सकता तो फिर जो जमीन, जायदाद, मठ, सम्पत्ति के संग्रह की भावना रखते हैं, वे कभी सच्चे गुरु हो ही नहीं सकते हैं। सच्चा गुरु कौन? जो व्यवहार में अपनत्व रखता है और निश्चय में एकत्व में जीता है। जिसके भीतर में सम्पूर्ण विश्व के लिए अजस्र मंगल भावना बहती रहती है, जो निष्काम, नि:स्वार्थ जीवन जीता है, वही सच्चा गुरु होता है। जिनशासन तो कहता है कि सच्चा गुरु वही होता है, जो पञ्च-महाव्रतधारी और पाँच समिति तथा तीन गुप्ति का सच्चा आराधक होता है। **'सुसाहुणो गुरुणो'** वही सुसाधु गुरु के योग्य होता है। श्रीमद् रायचन्दजी कहते हैं कि गुरु वह है जो-

आत्मज्ञान समदर्शिता, विचरे उदय प्रयोग।
अपूर्व वाणी परमश्रुत, सद्गुरु लक्षण योग।।

अर्थात् आत्मज्ञान में जिसकी स्थिति है, अर्थात् जो परभाव की इच्छा से रहित हो गया है तथा शत्रु-मित्र, हर्ष-शोक, नमस्कार-तिरस्कार आदि भावों के प्रति जिसमें समता रहती है, मात्र पूर्वकृत कर्मों के उदय के कारण जिसकी विचरना आदि क्रियाएँ होती हैं, अज्ञानी की अपेक्षा जिनकी वाणी प्रत्यक्ष भिन्न है और जो षड्दर्शन के तात्पर्य को जानते हैं-ये सद्गुरु के उत्तम लक्षण हैं।

मैं अपने आपको बहुत भाग्यशाली मानता हूँ कि मुझे इन्हीं लक्षणों से युक्त सच्चे और अच्छे गुरु के रूप में गुरु हस्ती मिले। आज भी दृश्य और अदृश्य रूप में उनकी कृपा बरसती रहती है। ऐसे ही गुरु को पाकर शिष्य बोलता है कि-

गुरु के मिले चरण कि मेरे रोम खिल गये,
पुलकित हुआ ये मन 3, कि मेरे रोम खिल गये।
नमन करूँ मैं सौ-2 बार, श्रद्धा भक्ति चित्त में धार,
रग-रग का अभिमान घटे, रोम-रोम गुण करे विहार।
पाया सुबोध धन 3, कि मेरे रोम खिल गये।।
गुरु के मिले.....।।

तो हम सच्चे और अच्छे गुरु को पाकर अपने सम्पूर्ण शिष्यत्व भाव को प्रकट कर कृतज्ञता का भाव लिये हुए आराधना-साधना में आगे बढ़ेंगे तो एक दिन लक्ष्य की सिद्धि अवश्य मिलेगी। इन्हीं मंगल भावनाओं के साथ.....

गुरु ने राह दिखाई, अभी चलना है बाकी।
राही तुम भूल न जाना, अभी मञ्ज़िल है बाकी।।

प्रेरक वाक्य

श्री श्रीकान्त गुप्ता

1. जीतने वाले कुछ अलग चीज़े नहीं करते।
   बस वे चीज़ों को अलग तरीके से करते हैं।।
2. जब तक किसी काम को किया नहीं जाता तब तक वह असम्भव ही लगता है।
3. सफलता के लिए किसी भी ख़ास समय का इन्तज़ार मत करो।
   बल्कि अपने हर समय को ख़ास बनालो।।
4. मिट्टी का मटका और परिवार की क़ीमत सिर्फ बनाने वाले को ही पता होती है, तोड़ने वाले को नहीं।

-संस्थापक निदेशक, आई.आई.सी.एस.
जोधपुर (राज.)

10 सितम्बर 2021
जिनवाणी 23
ISSN 2249-2011

प्रवचन

आत्मा को पवित्र करे सो पुण्य

तत्त्वचिन्तक श्रद्धेय श्री प्रमोदमुनिजी म.सा.

पूज्य आचार्यप्रवर श्री हीराचन्द्रजी म.सा. के आज्ञानुवर्ती तत्त्वचिन्तक श्रद्धेय श्री प्रमोदमुनिजी म.सा. द्वारा जोधपुर में वर्ष 2019 के चातुर्मास में 'सुपुण्यशाली की होती धर्म में मति' विषय से सम्बद्ध अनेक प्रवचन फरमाए गए थे। उनमें से इस प्रवचन का आशुलेखन जिनवाणी के सह-सम्पादक श्री नौरतनमलजी मेहता, जोधपुर द्वारा किया गया है। **-सम्पादक**

यथार्थवादी, यथार्थकारी और यथार्थ परिणामी अनन्त-अनन्त उपकारी वीतराग भगवन्त और यथार्थ के इस युग के अधिकृत प्रवक्ता आचार्य भगवन्त, उपाध्याय भगवन्तों के चरणों में वन्दना करने के पश्चात्-

जैनियों का वैशिष्ट्य पुण्य को हेय बताना नहीं, अपितु पुण्य के नाम पर जुड़ने वाले, पुण्य के वेश में छिपे हुए पाप से सजग रहकर पुण्य तत्त्व को अपनाते हुए पाप से, मोहनीय से पूरी तरह छुटकारा पाना है।

पुण्य तत्त्व अलग है, आस्रव तत्त्व अलग है, बन्ध तत्त्व अलग है। मिथ्यात्व से छुटकारा पाने के समय पुण्य तत्त्व है, छुटकारा मिलने पर पुण्य तत्त्व के साथ संवर तत्त्व है और बन्ध में अशुभ का प्रभाव घटते जाना उस पुण्य और संवर के साथ निर्जरा तत्त्व है।

पुण्य का प्रारम्भ प्रथम गुणस्थान से है। यद्यपि जहाँ भी पुण्य तत्त्व है वहाँ पापास्रव और पापबन्ध पर कुछ न कुछ प्रभाव पड़ता ही है तथापि वहाँ उसकी गणना संवर-निर्जरा तत्त्व में नहीं होती। अकाम निर्जरा के रूप में होने से, प्रतिक्षण अनन्तगुणी विशुद्धि तो यथाप्रवृत्तकरण में भी होती ही है, तथापि राग-द्वेष की दुर्भेद्य ग्रन्थि नहीं खुल पाने से उसका महत्त्व नहीं होता। ग्रन्थि-भेदन की क्रिया से अपूर्व स्थितिघात और अपूर्व रसघात होने से वहाँ से जीव का उत्साह, जीव की उमङ्ग विशेष-विशेष बढ़ती जाती है, मिथ्यात्व की सत्ता लड़खड़ाने लगती है। अपूर्व गुणश्रेणी ही सार्थक पुरुषार्थ की द्योतक है। अनन्तानुबन्धी कषाय की प्रधानता से 16 ही कषाय की अन्त: कोटाकोटि स्थिति (कतिपय लाख करोड़ सागर की स्थिति) से अधिक स्थिति और तत्प्रायोग्य अनुभाग तक तो अभवी जीव भी पहुँच सकता है। भव्य जीव भी अनन्त बार ऐसी स्थिति में पहुँच जाता है। यहाँ तक जो शुभयोग, शुभ लेश्या, प्रशस्त अध्यवसाय, शुभ परिणाम, विशुद्धि लेकर आये, उनकी ऊर्ध्वगामी परिणति है, उसके आगे बढ़ने की धारा रुक जाती है। जीव श्रुत अज्ञान का क्षयोपशम बढ़ाता जाता है। मोहनीय कर्म का यथार्थ क्षयोपशम या उपशम नहीं होने पर भी कमी पड़ती जाती है। 'उवसंत-मोहणिज्जो, सरइ पोराणियं जाइं' से जातिस्मरण ज्ञान (मति अज्ञान का क्षयोपशम) होने के समय मिथ्यादृष्टि के भी मोहनीय के कुछ ढ़ीला पड़ने को ज्ञानियों ने अपेक्षा विशेष से मोहनीय के उपशान्त होने के रूप में कह दिया। उत्तराध्ययनसूत्र के नवम अध्ययन की प्रथम गाथा में-

चइऊण देवलोगाओ उववन्नो माणुसंमि लोगंमि।
उवसंत-मोहणिज्जो, सरइ पोराणियं जाइं।।

अर्थात् देवलोक से च्युत होकर नमिराज का जीव मनुष्यलोक में उत्पन्न हुआ, उसका मोह उपशान्त हुआ, जिससे पूर्व जन्म (जाति) का उसे स्मरण हुआ।

उत्तराध्ययनसूत्र के 19वें अध्ययन की 7वीं गाथा भी इसी प्रकार कह रही है-

साहुस्स दरिसणे तस्स, अज्झवसाणंमि सोहणे।
मोहं गयस्स सन्तस्स, जाइसरणं समुप्पण्णं।।

अर्थात् साधु के दर्शन होने के अनन्तर मोहकर्म के कुछ दूर होने पर अन्त:करण में सुन्दर भावों के उत्पन्न होने से मृगापुत्र को जातिस्मरण ज्ञान हो गया। ज्ञाताधर्मकथाङ्ग के पहले अध्ययन में जातिस्मरण ज्ञान

मेघकुमार अणगार को कैसे हुआ, बताया-'**सुभेहिं परिणामेहिं, पसत्थेहिं अज्झवसाणेहिं, लेस्साहिं विसुज्झमाणीहिं, तयावरणिज्जाणं कम्माणं खओवसमेणं ईहावोह-मग्गण गवेसणं करेमाणस्स सन्निपुव्वे जाइसरणे समुपन्ने।**' अर्थात् शुभ परिणामों के कारण, प्रशस्त अध्यवसायों के कारण, विशुद्ध होती हुई लेश्याओं के कारण जातिस्मरण को आवृत्त करने वाले ज्ञानावरण कर्म के क्षयोपशम के कारण ईहा, अपोह, मार्गणा और गवेषणा करते हुए संज्ञी जीवों को प्राप्त होने वाला जातिस्मरण ज्ञान उत्पन्न हुआ।

ज्ञाताधर्मकथाङ्ग के 8वें अध्ययन में जितशत्रु प्रमुख छहों राजाओं को जातिस्मरण ज्ञान भी '**सुभेणं परिणामेणं, पसत्थेणं अज्झवसाणेणं, लेसाहिं विसुज्झमाणीहिं**' अर्थात् शुभ परिणामों से, प्रशस्त अध्यवसायों से विशुद्ध होती हुई लेश्याओं से ही प्राप्त हुआ।

ज्ञाताधर्मकथाङ्ग के 13वें अध्ययन में भी मेंढ़क को शुभ परिणाम के कारण, प्रशस्त अध्यवसाय और विशुद्ध लेश्या से ही जातिस्मरण ज्ञान होने की बात कही।

इसी ज्ञाताधर्मकथाङ्ग के 14वें अध्ययन में तेतलीपुत्र अनगार को शुभ परिणाम, प्रशस्त अध्यवसाय, लेश्याओं की विशुद्धि होने से ज्ञानावरणीय कर्मों के क्षयोपशम से जातिस्मरण ज्ञान की बात कही।

शुभ परिणाम, प्रशस्त अध्यवसाय, विशुद्ध होती लेश्या ये तीनों शब्द केवल जातिस्मरण ज्ञान में होते हों, ऐसा नहीं है, अवधिज्ञान प्रकट होने के लिए पंचम गुणस्थानवर्ती आनन्द गाथापति के लिए उपासकदशाङ्ग में भी आए हैं और कर्म रज को बिखेरने वाले अपूर्वकरण द्वारा शुक्लध्यान में प्रवेश करते समय तेतलीपुत्र जी के जीवन में ज्ञाताधर्म अध्ययन 14 तथा गजसुकुमाल जी के जीवन प्रसङ्ग में अंतगडदसासूत्र 3/8 में भी आए हैं। सयोगी, सलेश्यी अवस्था तक गुणश्रेणी उत्थान के प्रत्येक अवसर पर इन तीनों का शुभयोग, पुण्य तत्त्व रहने ही वाला है तो पुण्य तत्त्व 1 से 13वें गुणस्थान तक होता है।

मिथ्यात्व में यह दान, सेवा, दया, करुणा, उदारता आदि भलाई के कार्यों से सम्बन्धित होता है। बुराई करे नहीं, भलाई का फल चाहे नहीं, भलाई का अभिमान करे नहीं। इनके परिणाम से सातावेदनीय, शुभ नाम, उच्च गोत्र आदि अघाती पुण्य प्रकृतियों का मध्यम अनुभाग के साथ बन्ध होता रहता है। संक्लेश में जीव लम्बे समय तक रह नहीं सकता, बीच-बीच में स्वभाव का प्रभाव पड़ता है, मिथ्यात्व एवं अनन्तानुबन्धी की तीव्रता से वह स्वभाव धर्म में रूपान्तरित तो नहीं हो पाता। '**वत्थुसहावो धम्मो**' से जीव द्रव्य का चैतन्य धर्म टिमटिमाता प्रकाश अवश्य देता रहता है। एक स्तर की ऊँचाई नहीं मिल पाने से वह संवर-निर्जरा की श्रेणी में नहीं आता और पुण्य तत्त्व कहलाता है। आत्मा को पवित्र करे सो पुण्य। आंशिक पवित्रता होने से इसकी गणना भी आंशिक पुण्य में ही हो पाती है। सूक्ष्म अवस्था, निगोद अवस्था, अपर्याप्त अवस्था में जीव स्वभाव की इस अभिव्यक्ति से सातावेदनीय, मनुष्य आयु, शुभ नाम और उच्चगोत्र को बाँध लेता है। सातवीं नरक के जीव, तेऊकाय और वायुकाय, मिथ्यात्व की घटाटोप से मनुष्य सम्बन्धी, गति, आयु आदि और उच्चगोत्र तो नहीं बाँध सकते, किन्तु तिर्यञ्च के साथ त्रस चौक आदि शुभ नाम और प्रत्येक अन्तर्मुहूर्त्त में साता वेदनीय तो बाँधते ही हैं। इनके जितनी पवित्रता तो वे भी प्राप्त कर ही लेते हैं। ये अल्प पुण्य, नाम मात्र का पुण्य, छोटा पुण्य जीव के 563 भेदों में अभिव्यक्त होता रहता है। मनुष्य पर्याय, देव पर्याय, अच्छा कुल, अच्छी जाति, अच्छा रूप, अच्छा बल, श्रुत, तप, अच्छा लाभ और अच्छा ऐश्वर्य कभी इनमें से 1-2 चीजें, कभी 5-7 चीजें, सामग्री, सुख, सत्ता, ऋद्धि, रस, गौरव, श्रेष्ठी, राजा, साहूकार, मन्त्री, प्रधानमन्त्री, राष्ट्रपति, पूजा, सत्कार, वैभव, सम्मान, पुरस्कार आदि विविध उपलब्धियाँ इसी शुभ की देन हैं। इनकी प्राप्ति पूर्व के स्वभाव, पूर्व की पवित्रता, पूर्व के पुण्य तत्त्व का फल है, प्रभाव है।

वर्तमान में यदि इनका दुरुपयोग हो रहा है तो वह विभाव, वह गलत उपयोग, वर्तमान में पुण्य तत्त्व नहीं, अपितु पाप तत्त्व है। मनुष्य का बन्ध किया उस समय पुण्य तत्त्व हो सकता है, अभी तो आतंकवादी बन जीवन लूट रहा है, वेश्या बन लोगों को गलत रास्ते भटका रही है तो वह अभी पुण्य नहीं है।

रायप्पसेणीसूत्र में प्रदेशी का जीवन आया। राजा प्रदेशी अधर्मी, अधर्मप्रेमी, अधर्म का कथन और प्रचार करने वाला, अधर्म का अवलोकन करने वाला, अधर्म का प्रचार करने वाला, अधर्म मय स्वभाव और आचार वाला तथा अधर्म से ही आजीविका चलाने वाला था। उसके हाथ सदा रक्त से भरे रहते थे। वह सदैव 'मारो, छेदन करो, भेदन करो' इस प्रकार की आज्ञा का प्रवर्तक था। वह साक्षात् पाप का अवतार था।

दु:ख विपाक के प्रथम अध्ययन में इकाई राठौड़ आदि भी इसके उदाहरण हैं। उत्तराध्ययन के तेरहवें अध्ययन में ब्रह्मदत्त चक्रवर्ती को छ: खण्ड का साम्राज्य भी मिल चुका था, 9 निधियाँ, 14 रत्न, देवता जिनकी सेवा में हाजिर अर्थात् सातिशय पुण्य को छोड़कर धर्म में मति उत्पन्न करने वाले पुण्य को छोड़कर मनुष्य भव प्रायोग्य सामग्री विपुल और अच्छी से अच्छी थी, पर इसको पुण्य तत्त्व नहीं कहा, मिलना पूर्व पुण्य का फल है। उत्तराध्ययनसूत्र 13/10वीं गाथा **'आया ममं पुण्णफलोववेए।'** अर्थात् मेरी आत्मा पुण्य फल से युक्त रही है। परीक्षा परिणाम लेकर लौटा है विद्यार्थी, इसको परीक्षा नहीं कह सकते। परीक्षा में प्रथम स्थान पर रहा, पर यह परीक्षा का अच्छा परिणाम है। खेती लहलहा रही है, फसल अच्छी है यह अच्छे बीज, खाद, पानी और किसान की मेहनत का परिणाम है। यहाँ भी चक्रवर्ती की सम्पदा पूर्वोपार्जित पुण्य कर्म का परिणाम है। 11वीं गाथा में चित्त को भी पुण्यफल मिलने की बात है। पर सम्भूत (ब्रह्मदत्त) उस सामग्री का दुरुपयोग कर पाप-तत्त्व में सम्मिलित है और चित्त उसी पुण्यफल वाली सामग्री के सदुपयोग से पुण्य तत्त्व में है।

उदित उदित में पहला उदित पूर्वभव-पूर्वक्षण का द्योतक शब्द है, दूसरा उदित उस पूर्वफल के उपयोग, सदुपयोग से पुण्य तत्त्व, सम्यक् पुरुषार्थ, पण्डित वीर्य से आत्मोत्थान का द्योतक है। न पूर्व का पुण्य तत्त्व हेय कहा जा सकता है, न वर्तमान का स्वभाव रूपी, सदुपयोग रूपी पुण्य हेय ठहराया जा सकता है। उत्तराध्ययनसूत्र 13/21 **धणियं तु पुण्णाइं अकुव्वमाणो** एवं उत्तराध्ययनसूत्र 13/32 **जइ तं सि भोगे चइऊं असत्तो, अज्जाइं कम्माइं करेहि रायं-** यह गाथा स्पष्ट कह रही है वह ब्रह्मदत्त चक्रवर्ती अभी पाप कर रहा है। उसे पुण्य की प्रेरणा मुनिराज कर रहे हैं।

अल्प पुण्य से संसार के परिभ्रमण का अन्त नहीं हुआ, आत्महित नहीं सधा, मोक्षमार्ग नहीं मिला, संवर और निर्जरा का तत्त्व नहीं प्रकटा, अत: मोक्षमार्ग में इसकी सीधी उपयोगिता नहीं, पर इसने संसार में रोका नहीं। जिनको पाप के तीव्र उदय से प्रदेशी, इकाई, ब्रह्मदत्त जैसी अनुकूलताएँ नहीं मिलीं, उन सबने तो फिर मिथ्यात्व का अन्त कर ही लिया होगा? जिनको मनुष्य भव, पञ्चेन्द्रिय पर्याय, संज्ञीपना रूप पुण्य मिलने पर भी पद, प्रतिष्ठा, पदार्थ रूपी पुण्य नहीं मिला वह सब तो धर्मी बने ही होंगे, मुक्ति पा ही चुके होंगे? बचपन में सांख्यिकी (स्टेटिस्टिक्स) की पुस्तक में पढ़ा था समंक (आंकड़े) तो गीली मिट्टी के समान है, चाहे तो आप देवता बना लो, चाहे तो आप दानव बना लो।

इसीलिए सुख का भोग हेय है और दु:ख का भय हेय है। सुख-दु:ख (साता-असाता) का उदय कर्म बन्ध का कारण नहीं है।

सुख अर्थात् यहाँ साता वेदनीय का उदय है, सांसारिक विकास है, भौतिक विकास है। अनुभवियों के शब्द देखे जाएँ। भौतिक विकास तथा आध्यात्मिक जीवन एक ही जीवन के दो पहलू हैं, इनमें विभाजन करना भूल के अतिरिक्त और कुछ नहीं है। मानव-मात्र को सुख और शान्ति चाहिए। सुख यदि भौतिक विकास है, तो शान्ति अध्यात्म जीवन है। शान्ति रहित सुख और

सुख रहित शान्ति किसी को भी अभीष्ट नहीं है। यद्यपि सुख के भोगी को शान्ति नहीं मिलती, परन्तु शान्ति के पुजारी को सुख अवश्य मिलता है। पर यह रहस्य वे ही मानव जानते है, जिन्होंने सत्संग के द्वारा सुख की दासता तथा दु:ख के भय का अन्त कर चिर शान्ति तथा नित्य योग से अभिन्नता प्राप्त की है।

सुख लोलुपता योग में भले ही बाधक है, किन्तु लोलुपता-रहित सुख योग में बाधक नहीं है।

किसी भी जीव के लिए पुण्य तत्त्व हेय नहीं। यही पुण्य जब विशिष्ट होता है तो धर्म में मति उत्पन्न होती है (धम्मे उप्पज्जए मई)। यह संवर, निर्जरा तक पहुँचाने वाला है, शुभयोग मोक्षमार्ग दिलाने वाला है, शुभयोग सभी दु:खों का अन्त कराने वाला है। भटकाव हुआ है अशुभ योग पाने से, शुभयोग के स्थायी नहीं हो पाने से। बिना व्यवधान के शुभयोग तेरहवें गुणस्थान में देशोन क्रोड़ पूर्व तक रह सकता है। तेरहवें गुणस्थान के नीचे शुभयोग अन्तर्मुहूर्त्त से अधिक कभी रह ही नहीं सकता। 48 मिनट से कुछ कम जितने उत्कृष्ट काल तक शुभयोग रह जाये, मनुष्य भव में प्रशस्त लेश्या विशुद्धता टिक जाये तो मञ्ज़िल के निकट तेरहवाँ गुणस्थान प्रकट हो जाए, केवलज्ञान, केवल दर्शन मिल जाए।

पुण्य से प्राप्त सामग्री ने ही तो अटकाया है। पद, प्रतिष्ठा, परिवार, पैसा, पदार्थ नहीं मिलते तो अटकाते ही नहीं। यदि ऐसा प्रश्न उठाकर कहो कि इसलिए तो हम पुण्य को हेय कहते हैं तो भइया! (अ) जिन्हें ये सब नहीं मिले वे तो सभी आपके मत के अनुसार सम्यग्दृष्टि बन ही गए होंगे? (ब) जिन्हें यह विपुल मात्रा में मिला, संसार अवस्था की सर्वोच्च मानवीय उपलब्धि हुई, वे सभी चक्रवर्ती तो नरकगामी ही बनने चाहिए?

जिसने पाप, आस्रव, बन्ध का अवलम्बन लिया, जो भोगों को छोड़ नहीं पाते, सामग्री का समुचित सदुपयोग कर नहीं पाते, वे महारम्भ महापरिग्रह रूपी पद से दुर्गति में जाते हैं।

इस अवसर्पिणी काल के 10 चक्रवर्ती तो सदुपयोग करके संवर, निर्जरा की आराधना से मोक्ष पधार चुके हैं। अत: सामग्री सम्यग्दर्शन में बाधक नहीं है। सामग्री की ममता, सामग्री की आसक्ति सामग्री का दुरुपयोग बाधक हैं और ये सभी पाप हैं, पुण्य नहीं।

तत्त्वार्थसूत्र के छठे अध्याय में भले ही तीसरे सूत्र में **'शुभ: पुण्यस्य'** कहकर शुभयोग को पुण्य का आस्रव कह दिया गया हो, पर आगे के सूत्रों पर दृष्टिपात करें तो ऐर्यापथिक आस्रव तो अवश्य पुण्य आस्रव दिखेगा, 2 समय का सातावेदनीय का आस्रव। शेष (1) 5 इन्द्रियों के विषय विकार (2) 4 कषाय (3) 5 अव्रत (4) तत्त्वार्थ की 25 क्रिया (सिद्धान्त की 25 क्रिया में से ईर्यापथ सम्बन्धी असाम्परायिक क्रिया को छोड़कर) ये सभी पापास्रव के हेतु हैं। 2 समय से अधिक स्थिति कषाय से ही बन्धती है। दूसरी बात और भी है। बाहर में कोई भी कर्म होता नहीं, कार्मण वर्गणा होती है। जीव के साथ कार्मण वर्गणा का सम्बन्ध आस्रव और प्रकृति, स्थिति, अनुभाग रूपी 4 भेदों में बँटना बन्ध है। उत्तराध्ययनसूत्र 33/18 में भी कहा गया-**'सव्वं सव्वेणं बद्धगं'** अर्थात् कर्म का बन्ध सम्पूर्ण आत्मप्रदेशों के साथ होता है। नीर-क्षीर वत्, लोह-अग्निवत् जीव के साथ हुए बन्ध को पूर्व में स्पष्ट किया जा चुका है। आस्रव के बाद होने वाले बन्ध में 42 पुण्य प्रकृतियाँ बताई गई हैं। बन्ध रूपी कार्य का कारण आस्रव है, अस्तु कार्य का उपचार कारण में करके पुण्यास्रव कह दिया, वरना आस्रव से कर्म नहीं, वर्गणा का सम्बन्ध ही जुड़ता है। उसी बन्ध के कारणों को तत्त्वार्थसूत्र के छठे अध्याय में अलग-अलग कर्मप्रकृति के आस्रव के कारण में दिखा दिया।

बन्ध के कारणों में कषाय की प्रधानता है, आस्रव योग से होता है। कषाय सहित योग को सावद्य योग कहते हैं। जिसमें कषाय की प्रधानता है, योग की गौणता, ऐसा योग अशुभ ही होता है। और इसीलिए पच्चीस बोल में अशुभ योग को आस्रव में रखा गया है। कषाय रहित शुभयोग अर्थात् केवल शुभ योग अटकाता

नहीं, रोकता नहीं। अस्तु, उसे आस्रव नहीं कहा और संवर निर्जरा का सहकारी, सहवर्ती होने से संवर तत्त्व में दिखा दिया, जिसकी कुछ चर्चा शुभ प्रकृतियों का, पुण्य प्रकृतियों के होने वाले बन्ध का कारण होने से उन उन प्रकृतियों में जो जो कार्मण वर्गणा लगी, उनके आने को पुण्यास्रव कह दिया गया, तो दसवें गुणस्थान तक एक भी समय ऐसा नहीं होगा जबकि पुण्य-पाप की कुछ न कुछ प्रकृतियाँ न बँधती हों। उत्कृष्ट संक्लेश के समय भी शरीर, अङ्गोपाङ्ग, वर्ण, त्रस चौक, अगुरुलघु आदि नाम कर्म की 20 कोटाकोटि सागर की स्थिति वाली कतिपय प्रकृतियाँ जघन्य अनुभाग के साथ बँधती ही हैं। जीव के स्वभाव का एक अंश नित्य उद्घाटित रहने से ये नाम मात्र की पुण्य प्रकृतियों के अनन्त प्रदेश उस समय भी पुण्यास्रव ही कहलायेंगे, किन्तु उस समय योग बिल्कुल अशुभ ही होगा, कषाय तीव्रतम होने से सावद्ययोग ही होगा, पुण्य तत्त्व बिल्कुल नहीं हो सकता।

नरक प्रायोग्य 28 प्रकृति बन्ध में-पञ्चेन्द्रिय जाति, 3 शरीर, 1 अङ्गोपाङ्ग, 4 शुभ वर्णादि, अगुरुलघु, पराघात, उच्छ्वास, निर्माण, त्रस चौक आदि 17 प्रकृति पुण्य की बँधती हैं, किन्तु ये न तो शुभयोग से बँधी, न ही पुण्य तत्त्व से बँधी हैं। धवला की 12वीं पुस्तक में स्पष्ट लिखा है-मिथ्यात्वी के उत्कृष्ट संक्लेश के समय शुभ प्रकृतियों का बन्ध नहीं होता, अशुभ ही बँधती हैं, क्योंकि जीव का स्वभाव पूरी तरह आवृत्त नहीं हो सकता। उत्कृष्ट संक्लेश के कारण से बालवीर्य, सावद्य योग, अशुभ योग ही रहेंगे और पुण्य के अन्तर्गत समाविष्ट ये 17 प्रकृतियाँ उत्कृष्ट स्थिति की बँधती हुई नाममात्र की अर्थात् जघन्य अनुभाग वाली होंगी, कहलाएगी तो शुभ ही, पर उसका कारण शुभ योग नहीं, अनावृत्त जीव स्वभाव ही है।

इसलिए 'शुभः पुण्यस्य' यह सूत्र अपेक्षा विशेष तक ही सीमित है। यदि इस सूत्र की अपेक्षा से रहित होकर कोई शुभ को ही पुण्य प्रकृति के आस्रव का कारण कहे तो कषाय युक्त जीव के किसी समय तो एक भी पुण्य प्रकृति नहीं बँधने का अवसर प्राप्त होना ही चाहिए, क्योंकि शुभ तो हमेशा रहता नहीं। अशुभ, उत्कृष्ट संक्लेश में केवल अशुभ योग के समय एक भी पुण्य प्रकृति नहीं बँधनी चाहिए, पर ऐसा कभी होता नहीं। अस्तु, 'शुभः पुण्यस्य' की सीमा समझे बिना, उसकी अपेक्षा समझे बिना उसे मात्र आस्रव समझ हेय मानना और इसी आधार पर पुण्य तत्त्व को हेय ठहराना धर्म से विमुख होना है, आत्मा का पतन करना है। जिनवाणी की आशातना से दुःख-दुर्गति को बढ़ाना है। सम्यग्दर्शन के नाम पर मिथ्यात्व बढ़ाना है। भगवन्! आपकी कृपा से बचें हम इस पाप से।

चतुर्थ और पञ्चम गुणस्थानवर्ती अविरत अथवा देशविरत जीव अव्रती की सेवा, दान, दया आदि से अपनी मर्यादानुसार लाभ अर्जित करते हैं। भगवान ऋषभदेव के जीव ने पूर्वभव में क्या किया था? देखें इतिहास के स्वर्णिम पृष्ठों से-दिव्य भोगों को भोगकर वज्रजंघ का जीव, जम्बूद्वीप के विदेह क्षेत्र के क्षितिप्रतिष्ठित नगर में, सुविधि नाम के वैद्य के यहाँ 'जीवानन्द' नाम के पुत्र रूप में उत्पन्न हुआ। लगभग उसी समय उस नगर में अन्य पाँच बच्चे उत्पन्न हुए यथा-1. ईशानचन्द्र नरेश का महीधर नामक पुत्र 2. सुनाशीर मन्त्री का सुबुद्धि पुत्र 3. सागरदत्त सार्थवाह का पूर्णभद्र पुत्र 4. धनश्रेष्ठि का गुणाकर पुत्र 5. ईश्वरदत्त सेठ का केशव नामक पुत्र हुए।

ये छहों बालक सुखपूर्वक बढ़ते हुए किशोरवय को प्राप्त हुए और परस्पर मित्ररूप खेल-कूद में साथ रहने लगे। इनकी मैत्री एक शरीर की पाँच इन्द्रियाँ और मन के समान एकता युक्त थी। उनमें से जीवानन्द वैद्य, आयुर्वेद में निष्णात हुआ। वह अन्य सभी वैद्यों में विशेषज्ञ एवं सम्माननीय था। एक बार वह अपने अन्य मित्रों के साथ घर बैठा हुआ था, उस समय एक गुणाकर नाम के राजर्षि तपस्वी मुनिराज भिक्षार्थ पधारे। उनका देह कृश हो गया था। वे कुष्ठ रोग से पीड़ित थे। उनके

तन में कीड़े पड़ गये थे। उनका सारा शरीर कृमिकुष्ठ व्याधि से व्याप्त हो गया था। असह्य पीड़ा होते हुए भी वे औषधोपचार नहीं करते थे और शान्त भाव से सहन करते हुए संयम का पालन कर रहे थे।

तपस्वी मुनिराज बेले के पारणे हेतु आहार के लिए पधारे थे। उन्हें देख राजकुमार महीधर ने व्यंग्यपूर्वक कहा-''मित्र जीवानन्द! तुम कुशल वैद्य हो। तुम्हारा औषध-विज्ञान भी अद्वितीय है। किन्तु तुम्हारे हृदय में दया नहीं है। तुम वेश्या के समान पैसे के बिना आँख उठाकर भी रोगी की ओर नहीं देखते। तुम्हें धर्म को नहीं भूलना चाहिए और अपनी योग्यता का उपयोग, परोपकार में भी करना चाहिए और ऐसे त्यागी तपस्वी सन्त की भक्तिपूर्वक चिकित्सा करनी चाहिए।''

जीवानन्द ने कहा-''मित्र! आपने मुझे कर्त्तव्य का भान करा कर मेरा उपकार किया। मैं इन महामुनि की चिकित्सा करना चाहता हूँ। किन्तु अभी मेरे पास इनकी औषधि की सामग्री नहीं है। औषधि में काम आनेवाला 'लक्षपाक तेल' तो मेरे पास है, किन्तु गोशीर्षचन्दन और रत्नकम्बल नहीं हैं। यदि आप ये दोनों वस्तुएँ ला दें, तो इनका उपचार हो सकता है।

जीवानन्द की बात सुनकर सभी मित्रों ने कहा-''हम दोनों वस्तुएँ लायेंगे।'' वे बाजार गये। एक वृद्ध सेठ के निकट जाकर उन्होंने दोनों वस्तुएँ माँगी। प्रत्येक वस्तु का मूल्य लाख सौनेया था। वृद्ध ने पूछा-आप इन वस्तुओं का क्या उपयोग करेंगे? उन्होंने कहा-एक तपस्वी मुनिराज की औषधि में आवश्यकता है। सेठ ने कहा-''महानुभाव! कृपा कर ये दोनों चीजें आप ले लें। मूल्य की आवश्यकता नहीं है। आप धन्य हैं कि युवावस्था में भी धर्म का सेवन करते हैं। आपके प्रताप से मुझे धर्म का लाभ मिला। इसलिए मैं आपका आभारी हूँ।'' सेठ ने दोनों वस्तुएँ दे दीं और परिणामों में वृद्धि होने पर दीक्षा लेकर मुक्ति प्राप्तकी।

वह मित्र-मण्डली औषधि आदि सभी सामग्री लेकर मुनि के पास वन में गयी। मुनिराज वटवृक्ष के नीचे कायोत्सर्ग कर रहे थे। मित्र-मण्डली ने तपस्वीराज को वन्दन किया और निवेदन किया कि ''हम आपके ध्यान में विघ्न करके चिकित्सा करेंगे, अतएव क्षमा करें। वे तत्काल की मरी हुई गाय का शव लाये और उसे एक ओर रख दिया। फिर उन्होंने लक्षपाक तेल से मुनिवर के शरीर के प्रत्येक अङ्ग का इस प्रकार मर्दन किया कि जिससे वह तेल शरीर की प्रत्येक नस में व्याप्त हो गया। उस अति उष्ण वीर्य वाले तेल से मुनि मूर्च्छित हो गए। तेल के प्रभाव से व्याकुल हुए कीड़े, शरीर के भीतर से बाहर आ गए। कृमि के बाहर आने पर जीवानन्द ने रत्नकम्बल से शरीर को आच्छादित कर दिया। रत्नकम्बल की शीतलता पाकर, तेल की गर्मी से तप्त बने हुए कृमि, रत्नकम्बल में आ गये। फिर धीरे से रत्नकम्बल को लेकर उसके कीड़े गाय के कलेवर पर छोड़ दिये। इसके बाद तपस्वीराज के शरीर पर गोशीर्षचन्दन का लेप किया, इससे मुनि को शान्ति मिली। इसके बाद फिर तेल का मर्दन करके मांस के भीतर तक तेल पहुँचाया। उससे मांस के भीतर तक पहुँचे हुए कृमि बाहर आ गये। उन्हें भी पूर्ववत् रत्नकम्बल में लेकर गाय के कलेवर पर छोड़ दिया। पुनः चन्दन का लेप करके शान्ति पहुँचाई और पुनः तेल का मर्दन कर हड्डी तक पहुँचे हुए कृमि को बाहर निकाल कर पहले के समान रत्नकम्बल में लेकर गाय के मृत शरीर पर छोड़ा। चन्दन के विलेपन से तपस्वीराज को शान्ति मिली और वे नीरोग हो गये। इसके बाद मुनिवर से क्षमायाचना करके मित्र मण्डली अपने स्थान पर आई और मुनिवर विहार कर गए। कालान्तर में छहों मित्र संसार त्यागकर प्रव्रजित हो गए और बहुत वर्षों तक संयम और तप का सेवन करके अनशनपूर्वक देह त्याग कर बारहवें देवलोक में इन्द्र के सामानिक देव हुए। वहाँ से च्यवकर राजा वज्रसेन का वज्रनाभ नामक प्रथम पुत्र हुआ और चक्रवर्ती पद प्राप्त किया।

मिले हुए का सदुपयोग,
सदुपयोग, सदुपयोग.....
जीव को आगे ही बढ़ाने वाला है।
मेरे प्रभु, प्रभु का हूँ मैं..... ◆

10 सितम्बर 2021
जिनवाणी 29
ISSN 2249-2011

काव्य

श्रावक छत्तीसी

महासती श्री भाग्यप्रभाजी म.सा.

(पूज्य आचार्यप्रवर श्री हीराचन्द्रजी म.सा. की आज्ञानुवर्तिनी महासती श्री ज्ञानलताजी म.सा. की शिष्या महासती श्री भाग्यप्रभाजी म.सा. द्वारा शक्तिनगर, जोधपुर चातुर्मास सन् 2021 में प्रवचन में प्रतिदिन गायी जा रही इस 'श्रावक छत्तीसी' का संकलन श्री गजेन्द्रजी चौपड़ा, जोधपुर ने किया है) -सम्पादक

(तर्ज :: ओ गुरुवर थारो चेलो बणूँ मैं.....)

ओ प्रभुवर! तेरी वाणी सुनूँ, तेरी वाणी रमूँ मैं,
हर पल आज्ञा आराधन करूँ मैं.....।।

वीर हिमाचल से निकली, आगम वाणी गंगा,
उस वाणी का आस्वादन करूँ मैं.....।।1।।

वैशाख सुदि ग्यारस आई, बरसी प्रभु वाणी,
चार तीरथ गुणगान गाऊँ मैं.....।।2।।

श्रमण का उपासक, कहलाता श्रमणोपासक,
गुरु दर्शन, पहली सीढ़ी चढ़ूँ मैं.....।।3।।

जिनवाणी श्रवण को मिलती, देशना लब्धि,
प्रवचन सुन, मोक्षमार्ग पाऊँ मैं.....।।4।।

श्रावक मन की माँग है, सामायिक करना
पञ्चम गुणस्थान का रक्षण करूँ मैं.....।।5।।

तीर्थङ्कर देवों की वाणी, कहलाती जिनागम,
जिज्ञासा भाव से स्वाध्याय करूँ मैं.....।।6।।

अतिचार रहित होवे, बारहव्रत की पालना,
सुबाहुकुमार जैसा चिन्तन करूँ मैं.....।।7।।

मेरे आँगन गुरु पधारे, द्वार पे प्रतीक्षा
गोचरी बहराते भव से तिर जाऊँ मैं.....।।8।।

उठना, सोना, खाना-पीना सब यतना से होवे,
हर एक जीव का ध्यान रखूँ मैं.....।।9।।

आठम, चौदस पर्व तिथियाँ, त्याग से मनाऊँ,
साधना में ऊँची उड़ान भरूँ मैं.....।।10।।

रात्रि में भोजन करना, पाप है कमाना,
तिविहार चौविहार, धारण करूँ मैं.....।।11।।

एक शरीर अनन्त जीवा, जमींकन्द कहलाता,
यावत् जीवन जमींकन्द का त्याग करूँ मैं....।।12।।

भगवतीसूत्र क्रिया पाँच बतलाई,
आत्मा का इनसे बचाव करूँ मैं.....।।13।।

शील की यशोगाथा, देवों ने भी गाई।
ब्रह्मचर्य उपवन, रमण करूँ मैं.....।।14।।

पूर्व के सञ्चित कर्मों को, तप से जलायें
उपवास बेला और अठाई करूँ मैं.....।।15।।

पौषध-आराधना से, आत्मा का पोषण,
अवसर आए, दया पौषध करूँ मैं.....।।16।।

नवकार की धुन लगे, मन को अति प्यारी,
लोगस्स जाप कर, शक्ति पाऊँ मैं.....।।17।।

दृढ़धर्मी प्रियधर्मी, बनूँ दृढ़ संकल्पी,
आठों याम धरम रमण करूँ मैं.....।।18।।

अनर्थ के पापों से चिकने कर्म बँधते,
हर प्रसङ्ग में विवेक रखूँ मैं.....।।19।।

प्रभु वीर ने बारह वर्ष किया मौन आराधन,
वचन विवेक और मौन रखूँ मैं.....।।20।।

परिवार का हर सदस्य बने वीर उपासक
प्रभु के भक्तों के संग रहूँ मैं.....।।21।।

समकित को सुरक्षित रखे, घर का हर दृश्य,
हर दृश्य से वैराग्य पाऊँ मैं.....।।22।।

धर्मी का सर्वप्रिय स्थान है स्थानक,
यतना से सार सम्भाल करूँ मैं.....।।23।।

सन्तों की सेवा करता, भव से नैया खेता,
श्रमणों का भाव, सत्कार करूँ मैं.....।।24।।

साधर्मी सेवा को करके, धन्य मैं हो जाऊँ,
सहयोग कर पुण्यशाली बनूँ मैं.....।।25।।
दोष दर्शन दोष वर्णन, दूर से ही तजना
सबका हितैषी बन गम्भीर बनूँ मैं.....।।26।।
मोहमाया के दलदल में, कमल बन जीना
साधना गगन पंछी बन जाऊँ मैं.....।।27।।
निर्भयता के सिंहासन पर आसन है लगाना
भय के समुद्रों के पार जाऊँ मैं.....।।28।।
प्रभावना ले जिनशासन की, भावना ये भाऊँ,
श्रेष्ठ पुरुषार्थ ऐसा, प्रगटाऊँ मैं.....।।29।।
मेरे श्रीसंघ में बजे शान्ति की सरगम
आत्मीयता का व्यवहार करूँ मैं.....।।30।।
मेरी श्वास, मेरे प्राण, मेरा जिनशासन,
शासन में प्राण कुर्बान करूँ मैं.....।।31।।
श्वेत वस्त्र रजोहरण, पाने को मन तरसे,
हर दिन संयम का अभ्यास करूँ मैं.....।।32।।
इस भव का पाप अगले भव न ले जाना,
गुरु के समक्ष आलोचन करूँ मैं.....।।33।।
जीवन का जब अन्त आवे, पूरी हो सजगता,
पण्डित मरण का, वरण करूँ मैं.....।।34।।
चार लाख सतत्तर हजार श्रावक एवं श्राविका,
वीर के उपासकों के गुण गाऊँ मैं.....।।35।।
श्रावक छत्तीसी पालन आराधक बनाए,
हस्ती हीरा गुरुवर का 'ज्ञान' पाऊँ मैं.....।।36।।

सन्तोष के सुख का हो भरण

श्रीमती अभिलाषा हीरावत

परिग्रह लोभ तृष्णा को ना दिल से पालिए
जो मिला है उसी को यतना से सम्भालिए
जो चाहा मिल जाना पुण्य की प्रबलता है
जो मिला उसमें सन्तोष रखना ही समता है
सन्तोष का गुण जीव को सुखी बनाता है
लोभ का दमन कर पुण्य को वर्धाता है
सन्तोष का सुख सदैव ही शान्ति आवास है
निर्लोभता में नित समता का सहवास है
न रहे चक्रवर्ती, ना राजा, ना राजपाट
लोभ, मोह को छोड़ रे जीव। नहीं शाश्वत ठाट-बाट
लोभ भाव में पड़कर तू निज स्वभाव को भूल गया
मुट्ठी बाँध के आने वाला, खाली हाथ भव-भव रूल गया
स्व की विमुखता पर के रस को जागृत करती है
पर में सुख समझना ही मिथ्यात्व की धरती है
लोभ से बढ़ता पाप, क्यों करता अपने पुण्य का संहार
लोभवश स्वयं नष्टकर रहा अपने शुभ संस्कार
चेत! ओस बिन्दु सा जीवन तेरा,
साँसों का क्या आधार
सन्तोष का अमृत ही करेगा, पुण्य का विस्तार
लोभ मोह तृष्णा का अब करना है जड़ से नाश
बन नि:स्वार्थ, नहीं रहे ममत्व भी पास
धर्म पर रखना दृढ़ श्रद्धा, सन्तोष बचाने वाला है
भव ताप मिटाकर, सुख शान्ति समता बढ़ाने वाला है
धन वैभव बढ़ाया तूने,
पर सही सम्पदा को पहचाना नहीं
लोभ आसक्ति ले डूबेंगे तुझे, कभी ये विचारा ही नहीं
सुखोपभोगी, लोभी के लिए इच्छा निरोध दुष्कर है
जागृत सन्तोषी के लिए, सदा सहज सरल सुकर है
विषयों में सुख नहीं, करते हम सुख प्रतीति हैं
सुख प्रीति सङ्ग दु:ख आएगा, ये ही कर्म नीति है
सन्तोष से बढ़कर कोई सुख नहीं ये जान
लालच से बढ़कर कोई दु:ख नहीं ये मान
लोभ का हर क्षण करें अब क्षरण
सन्तोष के सुख का हृदय में हो भरण
जिनोपदिष्ट धर्म का हो सम्यक् अनुसरण
जैन जीवनशैली का हो अन्तर्मन से आचरण।।

-मुम्बई (महाराष्ट्र)

10 सितम्बर 2021
जिनवाणी 31
ISSN 2249-2011

प्रासङ्गिक

रत्नसंघ की गतमाह दो सजग दीर्घ तपस्याएँ

डॉ. धर्मचन्द जैन

स्थानकवासी जैन परम्परा की शाखा 'रत्नसंघ' के अष्टम पट्टधर जिनशासनगौरव पूज्य आचार्यप्रवर श्री हीराचन्द्रजी म.सा. के संघनायकत्व में अगस्त माह में दो बड़ी तपस्याएँ सम्पन्न हुई हैं। जोधपुर के नेहरुपार्क में विराजित सन्तप्रवर श्रद्धेय श्री यशवन्तमुनिजी म.सा. की सन्निधि में श्रद्धेय श्री जितेन्द्रमुनिजी म.सा. ने 36 दिवसीय तपस्या सजग साधना के साथ पूर्ण की है। चातुर्मास के पूर्व 7 जुलाई से प्रारम्भ की गई इस तपस्या का 11 अगस्त, 2021 को पूर था। पूर के अवसर पर जोधपुर में 150 से अधिक तेले की तपस्याएँ हुईं।

दूसरी तपस्या पीपाड़ में परम पूज्य आचार्यप्रवर की सन्निधि में तत्र विराजित महासती श्री खुशबूजी म.सा. द्वारा सम्पन्न की गई। उन्होंने मासखमण की तपस्या पूर्ण की, जिसका पूर 9 अगस्त, 2021 को सम्पन्न हुआ।

श्रद्धेय श्री जितेन्द्रमुनिजी की सजग तपस्या के सम्बन्ध में मैंने जोधपुर में अनेक श्रावकों के मुख से प्रशंसा के वचन सुने। इस तपस्या से सभी अभिभूत एवं प्रमुदित नज़र आए। 16-17 अगस्त को जब मैं जोधपुर में था, तब 17 अगस्त को श्रद्धेय श्री जितेन्द्रमुनिजी से मैंने उनकी इस सात्त्विक एवं सजग तपस्या के सम्बन्ध में चर्चा की। प्रश्नोत्तर रूप में चर्चा के कुछ अंश प्रस्तुत है-

प्रश्न- श्रद्धेय मुनिश्री! आपने 36 दिवसीय आदर्श तप किया। आप स्वयं प्रतिलेखना कर साधना में सजग रहे। रत्नसंघ में पूज्य आचार्यप्रवर श्री हीराचन्द्रजी म.सा. के संघनायकत्व में किसी सन्त के द्वारा 36 दिवसीय तप प्रथम बार सम्पन्न हुआ है। इस तपस्या के पीछे आप में क्या प्रेरणा रही?

उत्तर- पत्तेयं पुण्णं पावे-प्रत्येक आत्मा के पुण्य-पाप अलग-अलग हैं। शरीर पर वेदना, विरह, वियोग तीनों के आघात हो चुके हैं। एक बार श्रद्धेय श्री प्रमोदमुनिजी म.सा. ने फरमाया था-''यह आपका शरीर काफी संघर्ष, वेदना और कठिनाई से गुज़रा हुआ है, अत: इसे सेवा एवं तप में लगाएँ। पूज्य आचार्य भगवन्त ने पूज्य उपाध्यायप्रवर (श्री मानचन्द्रजी म.सा.) के चरणों में रहने का अवसर प्रदान किया। पूज्य उपाध्यायप्रवर का पुण्यातिशय रहा कि उन्होंने चार-चार महापुरुषों की सेवा की। उनकी भी सेवा का अवसर सन्त भगवन्त को मिला। मुझे भी यत्किञ्चित् सौभाग्य मिला। अब चूँकि उपाध्याय भगवन्त सशरीर रहे नहीं, अत: सेवाप्रयोगी कार्य नहीं रहा। अत: पिछले डेढ़ वर्ष से तप का मानस बन रहा था। किन्तु कोविड-19 के कारण दीर्घ तप नहीं हो पाया। 15 दिवसीय तप पर ही विराम हो गया। (उल्लेखनीय है कि गतवर्ष भी 15 दिवसीय तप के अतिरिक्त आपने 7-7 दिवसीय तपस्या तीन बार सम्पन्न की थी एवं प्रत्येक 15 दिनों में तेले की तपस्या निरन्तर कर रहे हैं) मन में आया कि सांसारिक दो भतीजे कोसाणा में पूज्य आचार्य भगवन्त की सन्निधि में सिद्धितप, मासखमण तप कर सकते हैं और पतली-दुबली काया वाली बिन्दु बहन सिन्धु माफिक सार्द्ध शतक (150 दिवसीय) तप कर सकती है तो हम भी हीरा-मान के हनुमान बनकर उनके नाम से तप क्यों नहीं कर सकते। एक बार श्रद्धेय श्री गौतममुनिजी म.सा. ने 13 की तपस्या सुखे-समाधौ होने पर 2019 में कहा था-''इतनी सोरी (सरलता से) तपस्या होती है, जीतू ने मासखमण करा दो।'' इन सबसे प्रेरित होकर यह तपस्या हुई है।

प्रश्न- आपने तपस्या में जो इतनी सजगता एवं

अप्रमत्तता रखी, वह कैसे सम्भव हुआ?

उत्तर– (मुनिश्री)–हमारे समक्ष आदर्श हैं श्रद्धेय श्री महेन्द्रमुनिजी म.सा. जिन्होंने बीजापुर में मासखमण तप करते हुए सम्पूर्ण सजगता एवं अप्रमत्तता रखी। आठों याम गुरुदेव की सेवा में तत्पर रहे, वाचना में बैठे और गोचरी में जाते देखा। उस समय मैं विरक्त अवस्था में था। मूर्तिपूजक सन्त श्री हंसरत्नविजयजी ने सन् 2013–2017 के मध्य 180 दिन की तपस्या चार बार की, उसमें भी पारणे के दिन 3 किलोमीटर जाते एवं वापस आते। (उल्लेखनीय है कि मुनिश्री पारणे के दिन गोचरी हेतु डेढ़ किलोमीटर स्वयं पधारे।) आचार्यश्री रामलालजी म.सा. के आज्ञानुवर्ती तपस्वी श्री अशोकमुनिजी म.सा. ने 98 मासखमण तप किए। रत्नसंघ के तपस्वी श्री प्रकाशमुनिजी ने 33 दिवसीय तपस्या की। एक दिगम्बर मुनि ने दस-दस दिवसीय चौविहार-त्याग के साथ तपस्या की। इन सबसे सजग तपस्या करने की प्रेरणा मिली।

प्रश्न– इस सुदीर्घ तपस्या में आपको कैसा अनुभव हुआ?

उत्तर– तपस्या की अवधि में खूब स्वाध्याय हुआ, अनुप्रेक्षा हुई। चौबीसी, पद, दोहे आदि की रचना हुई। पुराने सीखे तत्त्वज्ञान का पुनरावर्तन हुआ। मैंने सोचा–Busy (व्यस्त) रहेंगे तो Easy (सरल) रहेंगे। श्रमणसंघ की महासती श्री ऊर्जाश्री जी ने कहा है–तप में नन्दीसूत्र का स्वाध्याय सहयोगी रहता है।

इस तपस्या में सन्त प्रवर महापुरुषों का अत्यन्त स्नेह, सहयोग एवं वात्सल्य रहा।

तपस्या में कर्म-निर्जरा तो होती ही है। लगता है तन हवा में उड़ रहा है। आलोचना करने का अधिक अवसर मिलता है। प्रह्लादभाव का अनुभव होता है। तप में किसी प्रकार के विघ्न का अनुभव नहीं हुआ। जितना कवलाहार कम करते हैं तो रोमाहार बढ़ जाता है। ऐसा आभास होता है कि पूज्य उपाध्यायप्रवर की देवलोक से भी सहाय रही।

मासखमण जब पूर्ण हुआ तो आगे चौदस की तिथि पर दृष्टि गई और 33 तक पहुँचने का मानस बनाया, फिर लगा तीन ही तो घट रहे हैं 36 तक पहुँचूँगा तो पूज्य आचार्य भगवन्त को भेंट हो जाएगी। इस तरह यह 36 दिवसीय तप पूर्ण हुआ। तपस्या में महासती श्री चन्द्रकलाजी और महासती श्री ज्ञानलताजी का भी प्रेरक सहयोग रहा है।

प्रश्न– आप तपस्या के लिए क्या प्रेरणा देंगे?

उत्तर– तपस्या में तन भले ही मुरझाए, किन्तु मन मुस्कराता रहना चाहिए। मन का दृढ़ संकल्प होगा तो तपस्या हो सकेगी। तपस्या में ज्ञान का भी जागरण कर सकते हैं। पेट में वेट (भोजन का भार) जाता है तो चित्त प्रमाद से घिर जाता है। जो चीज आपको Challenge करती है वही Change करती है।

प्रश्न– अत्र विराजित सन्तप्रवरों का सहयोग आपको किस रूप में मिला?

उत्तर– आत्मार्थी श्रद्धेय श्री यशवन्तमुनिजी म.सा. अन्तर्मुखी होने के सूत्र फरमाया करते हैं। 'प्रसन्न रहो' की साधना इनसे मिली। इन्हीं का एक सूत्र-'वेदना में खेद ना, यही प्रभु की देशना। जगाएँ अन्तर की चेतना।' श्रद्धेय श्री अभयमुनिजी म.सा. का संकल्पमय जीवन हृदय को प्रेरित करता है। श्रद्धेय श्री अशोकमुनिजी, जो जन-मानस में Cool-Cool बनकर छा गए, उनकी शान्ति, वात्सल्य और सेवा का पूरा सहकार रहा।

श्रद्धेय श्री जितेन्द्रमुनिजी म.सा. 36 की तपस्या के दिन घोड़ों का चौक स्थित सामायिक-स्वाध्याय भवन में महासती श्री चन्द्रकलाजी म.सा. के पेट में दर्द की सुखसाता पूछने पधारे और पारणे के पूर्व 12 अभिग्रह किए जो पौरसी के पहले ही पूर्ण हो गए।

श्रद्धेय श्री अशोकमुनिजी से इस तपस्या के सम्बन्ध में मैंने चर्चा की तो उन्होंने फरमाया-"मुनिश्री वन्दना, प्रतिक्रमण, प्रतिलेखना, गरम जल लाना आदि समस्त क्रियाएँ स्वयं करते थे। आने वाले श्रावक-श्राविकाओं को भी प्रेरणा देते रहे। तपस्या का प्रारम्भ

भयंकर गर्मी में हुआ। तेले से प्रारम्भ की गई यह तपस्या संकल्प बल के कारण निरन्तर आगे बढ़ती रही। तपस्या के दौरान मुनिश्री ने उत्तराध्ययनसूत्र की परीक्षा भी दी।''

श्रद्धेया महासती श्री खुशबूजी म.सा. द्वारा व्यक्त विचार

18 अगस्त को परम पूज्य परम श्रद्धेय आचार्यप्रवर श्री हीराचन्द्रजी म.सा., महान् अध्यवसायी सरस व्याख्यानी श्रद्धेय श्री महेन्द्रमुनिजी म.सा. आदि सन्तप्रवरों के दर्शन-वन्दन, प्रवचन आदि का लाभ लेने के पश्चात् तत्र विराजित व्याख्यात्री महासती श्री निष्ठाप्रभाजी म.सा. आदि ठाणा-3 के जयमल जैन महिला स्वाध्याय भवन में दर्शन करने गया तब तपस्विनी महासती श्री खुशबूजी म.सा. से थोड़ी चर्चा हुई। आपने फरमाया-''मेरा विचार 11 दिवसीय तपस्या का ही था। क्योंकि तीन सतियों की संख्या में आगे बढ़ना सम्भव नहीं लग रहा था। पूज्य गुरुदेव के दर्शन-वन्दन हेतु जब मुणोत स्वाध्याय भवन गए तब श्रद्धेय श्री महेन्द्रमुनिजी म.सा. ने फरमाया-जब तक शरीर में साता है तो आगे बढ़ते रहो। सतियों की संख्या सम्बन्धी चिन्ता मत करो। गुरुदेव के सान्निध्य में सब आराम से हो जाएगा। पूज्य गुरुदेव ने भी फरमाया-साता है तो आगे बढ़ सकते हो। उसी समय पारणे का मानस तप में परिवर्तित हो गया। फिर तपस्या सहज रूप से आगे बढ़ती चली गई, कोई पित्त विकार भी नहीं हुआ और मासखमण सहज रूप में पूर्ण हो गया।''

मैंने पूछा-आपको तपस्या में कैसा अनुभव हुआ?

उन्होंने फरमाया-''जीवन में तपस्या एक बार अवश्य करनी चाहिए। इससे मुझे बहुत हल्केपन का अनुभव हुआ। चित्त में विकार नहीं उठे, बहुत आनन्द रहा। निर्भयता का अनुभव हुआ।''

सुज्ञ श्रावकरत्न श्री सुमतिचन्दजी मेहता से बात करने पर विदित हुआ कि महासती श्री खुशबूजी म.सा. नियमित रूप से पूज्य गुरुदेव एवं सभी सन्तों के दर्शन एवं विधिवत् वन्दन का लाभ लेते रहे। प्रवचन में भी उनका अनेक दिन नियमित पधारना हुआ। प्रतिलेखना आदि कार्य स्वयं करती थी तथा तपस्या की सफलता में महासती श्री निष्ठाप्रभाजी एवं महासती श्री प्रतिष्ठाप्रभाजी म.सा. का भी पूरा सहकार रहा।

गोटन में भी तपस्या-गोटन में व्याख्यात्री महासती श्री पद्मप्रभाजी म.सा. द्वारा 1 से 17 अगस्त तक 17 दिवसीय तपस्या भी इसी प्रकार पूर्ण सजग साधना के साथ की गई, जिसमें तत्त्वचिन्तक श्रद्धेय श्री प्रमोदमुनिजी म.सा. की सेवा में अध्ययन करते हुए 15 अगस्त को मैंने देखा। दिन में तीन बार सन्त-सेवा में पहुँचना एवं सहजता रखना-यह दृढ़ मनोबल एवं आत्मबल से ही सम्भव होता है।

उल्लेखनीय है कि साधु-साध्वियों, श्रावक-श्राविकाओं द्वारा तपाराधन किया जाता है, किन्तु तपस्या पूर्ण सजगता एवं विकार-विजय की साधना के रूप में हो, तो उसका फल विशेष होता है। तपस्या से किस प्रकार कर्मों की निर्जरा होती है, इसका अनुभव भी सम्भव है।

-पूर्व प्रोफेसर, संस्कृत विभाग, जयनारायण व्यास विश्वविद्यालय, जोधपुर एवं प्रधान सम्पादक-जिनवाणी हिन्दी मासिक पत्रिका

- धर्म तीन तरह से हो सकता है, स्वयं करना, कराना और करने वालों का अनुमोदन करना। अनुमोदन करने वाला भी लाभ उठाता है।
- आत्मा के भीतर अनन्त शक्ति और सामर्थ्य है, अनन्त ज्योति है, पहचानिये। इसको पहचानने का माध्यम है-स्वाध्याय। इसलिये कहा गया है कि बिना स्वाध्याय के ज्ञान नहीं होता। ज्ञान की ज्योति जगाने के लिए, आत्मा की ज्योति जगाने के लिए, स्वाध्याय एक अच्छा माध्यम है। **-आचार्यश्री हस्ती**

10 सितम्बर 2021
जिनवाणी 34
ISSN 2249-2011

जीवन-व्यवहार

वाणी-संयम और मौन-साधना : श्रेष्ठ जीवन की कला

डॉ. के. एल. पोकरना

मानव की जिह्वा दो कार्य करती है, एक कार्य है बोलना, बातचीत करना, वार्त्तालाप करना। दूसरा कार्य है स्वाद लेना एवं भोजन को निगलना। जिह्वा का पहला कार्य-बोलना, वाणी का प्रयोग बहुत महत्त्वपूर्ण है। कड़वा बोलना, कटु बोलना, दु:खद बोलना, अरुचिकर न चाहने वाले शब्द बोलना, ऐसी वाणी शत्रुता उत्पन्न करती है। इसके विपरीत मधुर और आनन्ददायक वाणी बोलने से मित्रता स्थापित होती है तथा सामाजिक सम्बन्धों पर सकारात्मक प्रभाव पड़ता है। जिह्वा का दूसरा कार्य स्वाद का है यदि हम विवेकपूर्ण खाना खाते हैं, भोजन में भी आत्म-संयम का पालन करते हैं तो हमको स्वास्थ्य सम्बन्धी कोई समस्या नहीं होगी। अत: भोजन पर, स्वाद पर नियन्त्रण रखना भी बहुत महत्त्वपूर्ण है। खाने और बोलने में जिह्वा का सही प्रयोग करे या दुरुपयोग, यह मानव के स्वयं के हाथ में है। भोजन और वाणी से मानव की पहचान होती है। अत: जिह्वा के उपर्युक्त दोनों कार्यों पर नियन्त्रण रखने से व्यक्तिगत प्रसन्नता, आनन्ददायक स्थिति प्राप्त की जा सकती है। इस दुनिया में सबसे भयंकर विष (ज़हर) और सबसे मीठा अमृत जिह्वा में ही मौजूद है। जिस जिह्वा से सत्य, हितकर और प्रिय शब्दों का उच्चारण होता है उस जिह्वा में अमृत समाया हुआ है और जिस जिह्वा से कटु, असत्य और मर्मभेदी शब्द बोले जाते हैं, उस जिह्वा में ज़हर भरा हुआ है।

वाणी की महत्ता

वाणी अमूल्य निधि है, अत: प्रत्येक मानव में वाणी विवेक होना बहुत आवश्यक है। जिसको वाणी का सम्यक् उपयोग करना आता है उसके लिए वाणी सञ्जीवनी बूटी है। वाणी का सम्यक् प्रयोग मानव को गौरव-गिरि के उत्तुंग शृङ्ग पर आरूढ़ कर सकता है। वाणी कल्पलता के तुल्य कही जा सकती है। किन्तु वचन के, वाणी के विशिष्ट महत्त्व को समझने की आवश्यकता है। एक वाणी, एक बोली, एक वचन औषध (दवा) का कार्य करता है, तो दूसरी वाणी या बोली दिल पर गहरा घाव कर देती है। एक बोली प्रीतिकारक और दूसरी अप्रीतिकारक होती है। एक वचन, एक बोली, एक वाणी क्लेश का काम करती है, दूसरी बोली समता का वातावरण निर्मित कर देती है। एक बोली, एक वाणी स्वर्ग की भूमिका तैयार कर देती है तो दूसरी बोली या वाणी नरकागार की शय्या तैयार कर देती है। एक वाणी आत्मशुद्धि की जनक होती है, दूसरी वाणी आत्मा को मलिन करने का काम करती है। एक बोली या वाणी से शत्रु भी मित्र बन जाते हैं। एक वचन-प्रवाह से आत्मा संसार सागर में गोते लगाती है और एक वचन से आत्मा मोक्ष के परमानन्द को प्राप्त कर लेती है, अत: वाणी में, वचन में, बोलने में विवेक होना आवश्यक है।

जीवन विकास में वाणी की भूमिका

जीवन के विकास में वाणी की महत्त्वपूर्ण भूमिका है। वाणी में वह ताकत है, वह शक्ति है जो मुर्दा दिलों में नवजीवन का सञ्चार कर देती है। कार्यक्षेत्र, कर्मक्षेत्र से दूर हो जाने या हट जाने की इच्छा रखने वाले, निराश होने वाले व्यक्तियों में आशा और उत्साह की तरङ्ग पैदा कर देती है। श्रेष्ठ और जीवन-उपयोगी वाणी भोग-वासनाओं के कीचड़ में फँसे हुए मनुष्यों के हृदय में दिलों और दिमागों में वैराग्य के अंकुर प्रकट कर देती है। धर्मस्थानकों में, उपाश्रयों में प्रार्थनाएँ, भजन, प्रभुभक्ति एवं उद्‌बोधन की ध्वनियाँ जीवन को श्रेष्ठ और उन्नत बनाने वाली होती है। वाणी पारस्परिक जीवन को साधने वाली भी है। सम्बन्धों को जोड़ने वाली वाणी है। वाणी

प्रत्येक युग की अनिवार्यता है। यद्यपि पशुओं के भी जिह्वा है, वे भी भौंकते हैं, गर्जन करते हैं, आवाज करते हैं, किन्तु उनके गर्जन में, उनके भौंकने में, आवाज करने में ध्वन्त्यात्मक भाषा का सीमित प्रयोग होता है। समस्त प्राणिजगत् में मानव की जिह्वा अमूल्य है। एकेन्द्रिय जीव के पास वचन का प्रयोग एवं श्रवण का साधन नहीं है, अत: उनके पास वचन की शक्ति भी नहीं है। बेइन्द्रिय, तेइन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय एवं तिर्यञ्च पञ्चेन्द्रिय में शब्दात्मक वचन या वाणी नहीं है, किन्तु ध्वन्यात्मक वचन या वाणी का प्रयोग है। इससे स्पष्ट है कि वचन या वाणी की शक्ति बहुत महत्त्वपूर्ण है, तथा मानव जीवन विकास में वाणी का बहुत महत्त्व है।

मधुर वाणी का प्रभाव

कोयल के मीठे शब्द अच्छे लगते हैं, कौवे के कड़वे, कर्कश शब्द कान में चुभते हैं। अत: यह सत्य है कि वाणी की मधुरता से मानव जीवन प्रभावित होता है, यह प्रभाव दीर्घकालीन रहता है। मीठी वाणी मस्तिष्क को शान्ति प्रदान करती है, हृदय और मन को प्रसन्नता प्रदान करती है, मीठी वाणी में मानव के व्यक्तित्व की झलक दिखाई पड़ती है, उसके सद्गुण प्रकट होते हैं। मीठी वाणी केवल आपसी अन्त: या बातचीत, संवाद और प्रस्तुति का ही जरिया नहीं है, बल्कि एक अमूल्य निधि है। मधुर वाणी से जीवन में सफलताएँ प्राप्त होती हैं। मीठी वाणी से दूसरे व्यक्ति की मानसिकता और सोच में भी परिवर्तन आ जाता है। अगर नाराज़गी है तो वह भी मीठी वाणी से छूमन्तर हो जाती है। मीठी वाणी मित्रता, प्रेम और प्रसन्नता को बढ़ाती है। अगर वाणी में, वचनों में, बोली में मधुरता और समझदारी है तो व्यक्ति दुनिया के किसी भी कोने में, किसी भी क्षेत्र में चला जाए, सुख से जीवन गुज़ार लेता है।

कटुवाणी का प्रभाव

कटुवाणी-कड़वे बोल हृदय को आघात पहुँचाते हैं। कटु-ज़बान से कड़वा बोलने से आपसी मनमुटाव, क्रोध, झगड़ा, द्वेषता पैदा हो जाते हैं। कटुवाणी से बातचीत में तीखापन, कठोरता और रूखापन उत्पन्न हो जाता है, कभी-कभी तो अस्थायी दुश्मनी और बदले की भावना पैदा हो जाती है। कड़वी वाणी, कर्कश वाणी झगड़ों की जन्मदात्री है, इससे अशान्ति, कलह और संघर्ष उत्पन्न होते हैं। कड़वे शब्द हर क्षण काँटे के समान चुभन तथा तकलीफ़ देते हैं। तीखे और कटु शब्द मन को चूर-चूर कर देते हैं।

कटु व्यंग्यात्मक वाणी से जीवन की बरबादी

शस्त्र के घावों को सहज ही सहन किया जा सकता है, किन्तु वचन रूपी घावों को सहन करना बड़ा ही कठिन है। शस्त्र के घाव तो थोड़े समय में भर जाते हैं, मिट जाते हैं, लेकिन वचन रूपी घाव जीवन पर्यन्त पीड़ा देते रहते हैं। कमान से निकला तीर और ज़बान से निकला शब्द वापस नहीं आते हैं। इतिहास गवाह है कि संसार में जितने भी अनर्थ और युद्ध हुए, उनके पीछे सबसे बड़ा कारण वाणी का ही रहा है। जैसे द्रौपदी अगर एक कटु वचन और व्यंग्यात्मक वचन **'अन्धे के बेटे अन्धे ही होते हैं'** नहीं बोलती तो महाभारत की विनाश लीला नहीं होती। कुरुक्षेत्र में रक्त की नदियाँ नहीं बहती। अठारह अक्षौहिणी विशाल सेना का विनाश भी द्रौपदी के व्यङ्ग भरे वचन के कारण ही हुआ। मन्थरा ने कैकेयी को मर्मभेदी शब्द कहकर कैकेयी के हृदय में राम के प्रति जो गहरा स्नेह था, उस को जार-जार कर दिया और राम को वनवास जाना पड़ा। आज भी वाणी और बोली के कारण घर-घर में रामायण और महाभारत हो रही है। वाणी का दुरुपयोग पतन के गहरे गर्त में गिराने का कारण भी बन सकता है। रसना-वाणी के संयम से जहाँ पूजा की जाती है वहाँ उसके असंयम से सिर पर जूते का प्रहार भी सहना पड़ता है। कवि रहीम ने कहा है-

रहिमन जिह्वा बावरी, कह गई सरग-पाताल
आपु कह भीतर गई, जूती खाय कपाल

वाणी कैसे एवं कैसी बोलें ?

शिष्टता एवं शालीनता से बोलो। पहले तोलो फिर बोलो। वाणी का दुरुपयोग मत करो, कम बोलो, नपे तुले शब्द बोलो। जिस वचन, विचार और व्यवहार

से दूसरों को पीड़ा पहुँचती हो, कष्ट होता हो ऐसे वचनों का प्रयोग मत करो। कर्कश एवं कठोर भाषा सत्य होते हुए भी दूसरों के हृदय को, उनके चित्त को आघात पहुँचाने वाली होने से बोलने योग्य नहीं है। सबके प्रति सदैव शान्त एवं सम्मानजनक मृदु वाणी का उपयोग करें। बोलें तो मिठास घोलें। कोई कटुवचन बोले तो उसे सहन कर लें, यह भी अहिंसा की उपासना है। वाणी का सदुपयोग सरस्वती का अनुष्ठान है। चिल्लाकर, गरजकर, आक्रोश युक्त, अश्लील, अशिष्ट और कड़वे वचन कभी नहीं बोलें। वचन कर्म से किसी प्रकार की कटुता उत्पन्न न करें। ज्वालामुखी न बनकर सौम्य बनें। किसी की निन्दा न करें और न ही अपनी प्रशंसा का डंका पीटें। वचन-व्यवहार में सदैव सरलता रखें। असत्य एवं मिश्र भाषा बोलना निषिद्ध है। क्रोध, लोभ, भय एवं हास्य के वशीभूत होकर असत्य बोलने का भी तीर्थङ्कर भगवान ने निषेध किया है। वाणी से शुभ, प्रिय, शान्त, मधुर एवं सर्व जीवों को साता सुख देने एवं सद्राह दिखाने वाले वचन बोलने से सुस्वर नामकर्म का बन्ध होता है। सुस्वर नामकर्म के उदय से कड़वी-मीठी कैसी भी बात कहने पर वह किसी को भी बुरी नहीं लगती, उसका स्वर सबको प्रिय लगता है। वचन की शक्ति का दुरुपयोग करने से जीव गूँगा, बहरा, तोतला बन जाता है। कटु, कर्कश, मर्म-भेदक, व्यंग्यात्मक, तुच्छ, मृषा एवं हिंसक वचन बोलने से व्यक्ति दुस्वर नामकर्म का बन्ध कर लेता है, इस कर्म के उदय से उस जीव का स्वर किसी को भी प्रिय नहीं लगता। उसकी वाणी कोई भी सुनना पसन्द नहीं करता। जीवन को सरस, सफल और श्रेष्ठ बनाने के लिए सदैव मीठी वाणी बोलिए।

मीठी वाणी बोलिए, मन का आपा खोय।
औरों को शीतल करे, आपहु शीतल होय।।

वाणी के आठ गुण

नीतिकारों ने वाणी के निम्नलिखित आठ गुण बताये हैं-

(1) कार्यपतित-बुद्धिमान काम पड़ने पर बोलते हैं, बिना कार्य नहीं। जो बिना काम बोलता है, उसकी मित्रों में, परिवार में, समाज में, सबमें प्रतिष्ठा उठ जाती है। उसकी बात पर कोई ध्यान नहीं देता। एक अरबी कहावत है-जिसकी जीभ लम्बी है, उसकी ज़िन्दगी छोटी है। जो ज्यादा बोलता है, कभी वह मुसीबत में, संकट में पड़ सकता है, पिटने की नौबत आ सकती है। महापुरुष जितने भी हुए उन्होंने बिना कार्य अपनी वाणी का उपयोग नहीं किया। वाणी का प्रथम गुण है कार्य होने पर बोलना, अन्यथा चुप रहना।

(2) गर्वरहित-वाणी का दूसरा गुण है गर्वरहित, विनम्र एवं लघुतापूर्ण शब्द बोलना। वाणी से गर्व करना, वाणी का दुरुपयोग है। गर्वयुक्त वाणी वचन का पाप ही नहीं, मन का पाप भी है। गर्व मान कषाय का भेद है जो कि मोहनीय कर्म के अन्तर्गत होने से संसार वृद्धि का भी कारण है।

(3) अतुच्छ-वाणी में तुच्छता का प्रयोग अशिष्टता एवं अज्ञान का हेतु है। हमें प्रत्येक व्यक्ति के लिए सम्मानजनक शब्दों का प्रयोग करना चाहिए। सम्मानजनक शब्दों का प्रयोग कुलीनता, शालीनता को उजागर करता है। मनुष्य की वाणी, उसकी बोली उसकी पद प्रतिष्ठा की पहचान कराती है।

(4) धर्म-संयुक्त-वाणी का चतुर्थ गुण है-वह धर्म से युक्त होनी चाहिए। धर्महीन वाणी से न्याय की जगह अन्याय बढ़ता है। तथ्यपूर्ण वाणी ही समझदारों को पसन्द रहती है और वे ऐसी ही वाणी बोलना पसन्द करते हैं। वर्तमान में लोग बोलते तो हैं, परन्तु धर्मयुक्त वाणी नहीं बोलते। निन्दा-विकथा में लगे रहते हैं। घण्टों आलोचना में व्यतीत कर देते हैं। वाणी का धर्म सत्य बोलना है। हम जब भी बोलें सत्य वाणी बोलें। सत्य वाणी की आत्मा है। वाणी में ही उसका निवास है। वाणी मन्दिर है तो सत्य भगवान है।

(5) निपुण-वाणी का एक गुण है निपुणता। जो जितना चतुर एवं बुद्धिमान होता है उसकी वाणी में उतनी

ही दक्षता होती है। दक्षता के अभाव में बोली गई वाणी से कार्य सिद्ध नहीं होते। जो बोलने में निपुण होते हैं वे बिगड़ी बात भी सुधार लेते हैं और सर्वत्र यश, प्रशंसा एवं सम्मान प्राप्त कर लेते हैं।

(6) स्तोक–स्तोक का अर्थ है थोड़े शब्दों में अपनी बात कह देना। श्रेष्ठ व्यक्तित्व की पहचान अधिक शब्दों में थोड़ी एवं सामान्य बात कहना नहीं है, बल्कि थोड़े शब्दों में अधिक एवं बड़ी-बड़ी बात कह देना है। शब्द भी एक शक्ति है। बुद्धिमान मानव शब्दों की शक्ति को व्यर्थ नहीं गँवाते। शब्द की शक्ति को समझने वाले व्यर्थ में शब्दों का दुरुपयोग नहीं करते हैं। नीतिकारों ने कम बोलने के चार गुण बताये हैं–1. झूठ छूटता है, 2. परनिंदा छूटती है, 3. व्यर्थ की चर्चा छूटती है, 4. वाणी में शक्ति आती है। जो कम बोलता है, वह सर्वत्र आदर प्राप्त करता है, सुखी रहता है।

कहा भी गया है–''सीमित खाने वाला, सीमित बोलने वाला, सीमा में कमाने और सीमा में खर्च करने वाला कभी परेशान नहीं होता।'' अत: हमें सीमा में रहना चाहिए। कम शब्दों में सम्पूर्ण बात कह देना बुद्धिमत्ता की निशानी है। इसलिए महान् व्यक्तियों की जिह्वा कम बोलती है, जीवन ज्यादा बोलता है। समझदारी का परिचय जिह्वा से नहीं, जीवन-पद्धति से मिलता है।

(7) पूर्वसंकलित–विचारों की तराजू पर तौलकर बोलना। पूर्व में उल्लेख किया है कि–''पहले तौलो फिर बोलो'' तौलकर बोलना बुद्धिमत्ता है, विवेक है। मानव अधिक बोलकर, अविवेकपूर्वक बोलकर दु:खी है।

(8) मधुर–वाणी का अन्तिम गुण है मधुरता, मिठास युक्त वचन। वाणी की मधुरता के बारे में पूर्व में उल्लेख किया गया है। मधुर वाणी से मनुष्य ही क्या दैत्य, दानव, सुरासुर, चोर, डाकू भी वश में हो सकते हैं। वाणी में माधुर्य युक्त व्यक्ति सर्वत्र सम्मान पाता है, उसके सबसे मैत्री सम्बन्ध स्थापित हो जाते हैं। नम्रता और मधुर वचन दो ऐसे वशीकरण मन्त्र हैं जिनसे समस्त विश्व को वश में किया जा सकता है। भगवान महावीर ने कहा है-**'वइज्ज बुद्धे हियमाणुलोमियं'** बुद्धिमान, हितकारी एवं आनुलोमिक अर्थात् प्रिय वाणी बोलें। यही बात अथर्ववेद के सूक्त में व्यक्त की गई है-**अन्योऽन्यस्मै वल्गु वदन्** अर्थात् एक-दूसरे के साथ प्रेमपूर्वक मधुर सम्भाषण करना चाहिए। कहा भी है-**वशीकरण इक मन्त्र है तज दे वचन कठोर।** मधुर वाणी से कही गई कड़वी से कड़वी बात भी श्रोता के गले उतर जाती है जैसे कि शुगर कोटेड कड़वी दवा।

इस प्रकार पूर्व वर्णित कार्यपतित, गर्वरहित, अतुच्छ, धर्मसंयुक्त, निपुण, स्तोक, पूर्वसंकलित और मधुर इन आठ गुणों से सम्पन्न निरवद्य वचनों का जो प्रयोग करते हैं वे वचन-पुण्य का अर्जन करते हैं और जगत् में सर्वत्र पूजनीय होते हैं।

मौन साधना

वाणी को प्रभावशाली बनाने में मौनसाधना का बड़ा महत्त्व है। मौन मानव की सर्वप्रियता का एक अचूक साधन है। मौन एक रक्षा कवच है ज्ञानियों का भी और मूर्खों का भी। ज्ञानी का मौन उसका वह गुण है, भूषण है जिससे वह अपने सत्यव्रत की रक्षा करता है एवं अपनी लोकप्रियता को बनाए रख सकता है।

उत्तराध्ययनसूत्र में भगवान ने कहा-वचनगुप्ति से जीव में निर्विकारता का भाव आता है। मन में उठने वाली वाणी की हलचल शान्त हो जाती है। शान्त सरोवर में जैसे लहरें नहीं उठतीं उसी प्रकार मौनपूर्ण मन में विचारों की लहरें शान्त रहती हैं और मौनी का मन अध्यात्म भाव में लीन हो जाता है। मौन जप को वाणी का तप कहा जाता है। मौन ही मुनित्व है।

मौन का अर्थ और मौन साधना का महत्त्व–चुप रहना, नहीं बोलना मौन नहीं है। मानो किसी से वैर-विरोध हो जाता है, मन मुटाव हो जाता है तथा पूरे जीवन भर व्यक्ति उससे बातचीत नहीं करता, बोलता नहीं है तो यह मौन नहीं है, यह एक त्रासदी है। अत: मौन का

अर्थ केवल वाणी का निरोधमात्र ही नहीं है। जिन प्राणियों को, जीवों को वचन पर्याप्ति नहीं मिली है वे भी नहीं बोल सकते हैं, परन्तु उन्हें मौनी नहीं कह सकते हैं। मौन तब होता है जब हम अविवेकपूर्ण वचन का संवरण करें। मन में वचनों के विकल्प चलते रहें, विचारों की उथल-पुथल मची रहे, हाथों के इशारे और संकेत भी होते रहें तो यह वचन निरोध पूर्ण मौन नहीं होता। पूर्ण मौन का अर्थ है-मन की विकल्प शून्य अवस्था अर्थात् निर्विकल्पता। जो कठिनाई, अड़चन, उलझन का समाधान करे, ज्ञान में वृद्धि करे, आपसी मनमुटाव को समाप्त करे, वह सच्चा मौन है। मौन से वाणी का संयम प्राप्त होता है, जिससे मानव के अन्दर व्याप्त असुर वृत्तियों पर नियन्त्रण प्राप्त करने की ऊर्जा प्राप्त होती है। वाणी को प्रभावशाली बनाने में मौन साधना का बड़ा महत्त्व है। कहावत है-इतना बड़ा सिर हिलाने में जितनी शक्ति लगती है, उससे भी ज्यादा शक्ति ढ़ाई इञ्च की जिह्वा हिलाने में लगती है। मौन का जीवन सुधारने और जीवन को उपयोगी बनाने में महत्त्वपूर्ण योगदान है। यद्यपि बोलना सरल है, चुप रहना, मौन रहना कठिन है। मानव न केवल अपने मुख से बोलता है, बल्कि चुप रहकर भी मन ही मन में लगातार उसके विचार, संवाद जारी रहते हैं। मौन का जुड़ाव केवल मुख से ही नहीं, बल्कि मन से, चित्त से भी है। मौन धारण करना मानव के लिए सबसे कठिन चुनौती है। मानव बिना भोजन के रह सकता है, किन्तु बिना बोले रहना बहुत मुश्किल होता है। प्रभु महावीर ने वाणी संवर द्वारा वचन की, बोली की ऊर्जा शक्ति को सुरक्षित रखने का श्रेष्ठ सन्देश दिया है। शोध और अनुसन्धानों ने यह प्रमाणित कर दिया है कि बहुत अधिक बोलने वालों, वाचालों की उम्र घट जाती है, अधिक बोलना व्यक्ति के स्वयं के स्वास्थ्य के लिए भी नुकसानदायक होता है, साथ ही अन्य व्यक्तियों के लिए क्लेश कारक होता है। प्रभु महावीर ने फरमाया-"आत्मा की भाषा मौन है।" क्योंकि वह वाणी पर निर्भर नहीं है। अत: प्रतिदिन कम से कम एक घण्टा मौन साधना अवश्य करना चाहिये तथा स्वयं के और अन्य के विकास, प्रगति एवं उत्थान तथा श्रेष्ठ जीवन हेतु प्रतिदिन कल्याणकारी शब्द बोलने चाहिये।

सन्दर्भ

1. आत्म चिन्तन की अमृत धारा-लेखिका जैन साध्वी राजमती 'शास्त्री', वर्ष 2004, पृष्ठ 4, 7, 10, 14, 17, 22, 44, 88, 106
2. किं पुण्यम्-आचार्य श्री विजयराजजी म.सा., 2013, जैन श्रावक संघ-उदयपुर।

-बी 174, मालवीय नगर, जयपुर-302017

प्रभो! करें भव से पार, अब की बार

श्री देवेन्द्रनाथ मोदी

हे, वीतराग सर्वज्ञ प्रभो! आप हैं मेरे आराध्य
मैं आपका आराधक।
आप हैं सर्वश्रेष्ठ विभो, आप पर है अटूट विश्वास।
आपमें है अद्भुत क्षमता
आपकी है महिमा अपरम्पार।
आपने बतलाया-आत्मा में अपनापन रख
जगत् से तोड़ें अपनापन,
विषय-कषाय से, राग-द्वेष से मोड़ें अपना मन।
आप बतलाते हैं-स्वयं को जानो सहज
जानना होने दो सहज, जानने का मत करो तनाव
सहजभाव से ही होते ज्ञान, ध्यान और आराधन
सहजता ही है जीवन का अनन्त आनन्द।
आप बतलाते हैं भव से मुक्ति का सन्मार्ग
मुझे भी होना है इस भव से पार, अबकी बार।
मैं हूँ परम भक्त आपका नाथ,
प्रकट कर निर्मल मन की भावना भक्तिभाव के साथ,
नमाकर तव चरणों में माथ,
आपको है वन्दन शत-शत बार, मेरे नाथ।

-'हुकुम' 5-ए/1, सुभाष नगर, पाल रोड़, जोधपुर-342008 (राजस्थान)

10 सितम्बर 2021
जिनवाणी 39
ISSN 2249-2011

आत्म-चिन्तन

जानें अपने आपको

श्रीमती शान्ता मोदी

देखो अपने आपको, जानो अपने आप,
अपने को जाने बिना, मिटे न भव सन्ताप।

जीव स्वयं को जाने बिना संसार से मुक्त नहीं हो सकता है। कवि ने मानव को सन्देश दिया कि स्वयं को जानना आत्म-साधना का अङ्ग है, वीतरागता की ओर बढ़ने का साधन है, धर्म का वास्तविक स्वरूप है। अपने दोषों को जानकर स्वयं से परिचित होता है तभी वह सत्य धर्म के मार्ग पर अग्रसर हो सकता है और जीवन की शुद्धि करता हुआ आगे बढ़ सकता है। संसार की अनेक क्रियाएँ करता हुआ भी वह पापकारी क्रियाओं से बचता रहेगा। जिससे वह कल्याण-मार्ग पर अग्रसर होता रहेगा। स्वयं के दोषों को देखते-देखते उसे जीवन की सही स्थिति का ज्ञान होने लगेगा। धीरे-धीरे यथार्थता से रुबरू होने लगेगा और परम सुख की ओर बढ़ने लगेगा। परम सुख की प्राप्ति निर्दोषता पर आधारित है।

परम सुखी बनने के लिए दृष्टि बदलनी होगी। दृष्टि को प्रतिक्षण जागरूक रखने पर आने वाली परिस्थितियों से सजग रहना होगा। आने वाली बाधाओं को जानकर उन्हें शुभ कार्यों में लगाना होगा। क्योंकि मनुष्य जीवन को सार्थक करना हो तो अपनी त्रुटियों को जानकर उन्हें यू-टर्न देना होगा, जिससे अन्तर्मुखी बनने में समय नहीं लगेगा। इससे आत्मा की अनन्त शक्ति, आनन्द, प्रेम, प्रीति, दया, करुणा, सरलता, समता आदि गुण प्रकट होने लगेंगे। पापों का ढ़ेर धीरे-धीरे समाप्त होता रहेगा और अपनी ऊर्जा का सही उपयोग होगा।

मैंने मनुष्य जीवन को प्राप्त करके क्या किया, क्या पाया, क्या खोया, क्योंकि मैंने जीवन का क्या लक्ष्य बनाया है? कभी चिन्तन किया नहीं। इसीलिये समय बीतता जा रहा है और मैं स्वयं आगे की राह तय नहीं कर रहा। समय तो अपनी गति से निकल रहा है। जब अन्त समय आ जायेगा, तब केवल पश्चात्ताप ही कर पाऊँगा। क्षण-क्षण निकलते-निकलते कई वर्ष निकल गये, पर अभी मैं कुछ भी नहीं कर पाया।

अपने जीवन को उन्नत मार्ग पर लगाना है, एक-एक पल को सार्थक करना है और एक-एक पल को जागृत करना है। संकल्प ऐसा होना चाहिए कि जिससे किसी की भी हानि न होने पावे। संकल्प जीवन के लिए आवश्यक है। लेकिन वह संकल्प कैसा है और किस रूप में आ रहा है? उस संकल्प से हमारा मन पवित्र हो रहा है, निर्मल हो रहा है कि नहीं हो रहा है। जीवन में किसी तरह की आशान्ति तो पैदा नहीं हो रही है, इस पर पूरा चिन्तन कर लेना चाहिए। यह संकल्प शक्ति इस शरीर का नियन्त्रण करती है और इन्द्रियों पर भी शासन करती है। अपनी विशाल दृष्टि से वह हमारे जीवन को पूर्ण रूप से नियन्त्रित कर देती है।

संसार में जितने भी धर्म और परम्पराएँ हैं सब का दृष्टिकोण यही है है कि अपने आप पर पूर्ण नियन्त्रण होना चाहिये। हम अपने जीवन के दास या गुलाम नहीं हैं, बल्कि भाग्य विधाता हैं, स्रष्टा हैं और ठीक ढ़ंग से चल रहे हैं तो अपने जीवन में परम आनन्द उपलब्ध हो जायेगा। हमारे शुभ संकल्प हैं, पवित्र भाव और उच्च विचार हैं तो स्वर्ग का वातावरण यहीं पैदा हो जाएगा। भगवान महावीर को एक बार एक साधक ने पूछा- ''देवलोक में कौन जाते हैं? स्वर्ग में कौन जाते हैं? देवता कौन बनते हैं?'' उन्होंने अपनी लाक्षणिक भाषा में कहा-''देवता ही देवता बनता है।'' फिर दूसरी जगह प्रश्न किया-''देवता मरकर देवता बन सकता है?'' उन्होंने इन्कार की भाषा में कहा-''देवता मरकर देवता नहीं बन सकता'' इन प्रश्नों के उत्तर में प्रभु ने फरमाया-

जिस देवलोक की हम बात करते हैं और जिस देवता बनने की हम बात कहते हैं, वहाँ मनुष्य पहले इस जीवन में देवता बन जाता है, देवता का वह संकल्प उसके अन्दर यहीं जाग्रत हो जाता है। इसी जीवन के अन्दर दैवीय शक्तियों का विकास हो जाता है, तो वह यहीं देवता बन जाता है। यहाँ देवता बना है, तो आगे भी देवता बनेगा। अगर यहाँ देवता नहीं बना है तो आगे का जीवन भी अन्धकारमय हो जायेगा। यहाँ काम, क्रोध, मद, लोभ और अहंकार के अन्दर जीवन डूब जायेगा।

मालाएँ फेरने से, अमुक ढ़ंग से धार्मिक क्रिया करने से स्वर्ग मिल जायेगा, कदापि नहीं। हम जहाँ पर हैं वहाँ अपने आपको जानें तथा दृष्टि केवल स्वयं पर रहे तो स्वर्ग क्या जन्म-मरण से भी छुटकारा मिल सकता है। तुम अपने आप में पूर्ण हो, अपने जीवन के स्रष्टा स्वयं हो। जो पाया जाता है वह स्वयं के प्रयास और पुरुषार्थ से ही पाया जा सकता है। कषाय को स्वयं मिटाना होगा। स्वयं को उच्च मान लेने से अहंकार आ जाता है, व्यक्ति अपने आपको ही श्रेष्ठ मानने लगता है। यही तो मिथ्यादृष्टि है जिससे सम्यग्दर्शन नहीं होता है। वह सारी क्रिया बाहरी शरीर के लिए करता है। इससे सही दिशा की ओर नहीं बढ़ पाता है। जब तक आध्यात्मिक जीवन में रुचि पैदा नहीं करता तब तक जीवन में परिवर्तन नहीं आ सकता। पहले अपनी आत्मा से प्रेम एवं प्रीति करें तब दूसरों से प्रीति प्रेम कर सकेंगे। प्रीति का साम्राज्य बनाना है तो क्रोध एवं अहंकार को मिटाना होगा। जीव मात्र पर आदर और प्रीति होनी चाहिये। द्रव्य आत्मा उपयोग अवस्था में रहना चाहिये। संवेग से आत्मा में जागृति आयेगी। संवेग गुण है तो निर्वेद तो स्वयं ही आ जायेगा। अपने में दोष दिख जाएँ तो साधना के क्षेत्र में स्वत: आगे बढ़ जायेंगे। जितने अंशों में मोह कम होगा दु:ख उतना कम हो जायेगा। संग, मेरापन, ममता ये सब दु:ख के कारण हैं।

जो आत्मा को जानता है वह स्वभाव को जानता है, वह ज्ञानी है। वह पुद्गल में रमण करेगा तो दु:ख कम नहीं होगा। जो अपने स्वभाव का विस्मरण कर देता है वह विभाव में आ जाता है तब दु:ख स्वत: आ जायेगा। जब स्वयं में रमण करेगा तब ही वह अपनी वास्तविकता को समझ पायेगा। अपने दोषों को देखने से समता आती है। जो द्रष्टा होता है वह निर्दोष होता है। देखने वाला अलग है दोष अलग हैं।

जो द्रष्टा बन जायेगा उसे उपदेश की भी जरूरत नहीं होगी। द्रष्टा बनकर दोषों को जानना है एवं स्वयं को जानना है।

ज्ञान के द्वारा स्वयं का जानना ज्ञान है।
देव, गुरु से प्रेम भक्ति दर्शन है।
जीव मात्र से प्रेम करना चारित्र है।

-सी 26, देवनगर, टोंक रोड़, जयपुर-302018 (राज.)

एक ही है मुक्ति का आधार

श्री सुशील चाणोदिया

(तर्ज :: मेरा जीवन कोरा कागज....)

एक ही है मुक्ति का आधार जिनवाणी,
जीव अनन्ता को लगाए पार जिनवाणी।
एक ही है मुक्ति का आधार जिनवाणी।।
गहन अर्थों गूढ विषयों से सुसज्जित जो,
केवलज्ञानी केवलदर्शी से है भाषित जो।
वीतरागों का परम उपकार जिनवाणी।
एक ही है मुक्ति का आधार जिनवाणी।।
अनुत्तर प्रतिपूर्ण तत्त्वों से भरी न्यारी,
न्याययुक्त है मार्ग यह, एकान्त हितकारी।
कर्मों के महारोग का उपचार जिनवाणी।
एक ही है मुक्ति का आधार जिनवाणी।।
सिद्धि का और मुक्ति का, निर्वाण का मग भी,
सर्व दु:ख से हीन यह निर्वाण का मग भी।
तथ्य है, और सत्य का संचार जिनवाणी।
एक ही है मुक्ति का आधार जिनवाणी।।

-3-6-20, हिमायतनगर, हैदराबाद-500029

10 सितम्बर 2021
जिनवाणी 41
ISSN 2249-2011

जीवन-व्यवहार

विनय : एक चुम्बकीय शक्ति

श्री पारसमल चण्डालिया

'विनयति इति विनयः' अर्थात् जो विशेष प्रकार के मोक्ष-परमानन्द की ओर लेकर जाए उसे 'विनय' कहते हैं। विनय वह सद्गुण है जो व्यक्ति को धर्म के मार्ग पर ले जाता है। **'धम्मस्स विणओ मूलं'** (दशवैकालिकसूत्र, अध्ययन 9, गाथा 2)-धर्म रूपी वृक्ष का मूल विनय है और उसका सर्वोत्कृष्ट फल मोक्ष है।

आत्मा का स्वभाव विनय है-विनय आत्मा का स्वभाव है, विभाव नहीं। स्वभाव सहज होता है। हर समय के लिए होता है, विभाव तो आते-जाते रहते हैं। यह बात अलग है कि विभाव उस बादल की तरह है जो सूर्य को ढक लेता है, किन्तु जैसे बादल सूर्य के अस्तित्व को हानि नहीं पहुँचा सकता वैसे ही आत्मा का विभाव भी कभी आत्मा के धर्म-विनय गुण को समाप्त नहीं कर सकता। क्रूरता के कारण कुछ क्षण के लिए विनय आवृत्त भले ही हो जाए, लेकिन कभी इसके स्वरूप की हानि नहीं हो सकती। ऐसा कभी नहीं हो सकता कि विनय के स्थान पर क्रूरता आत्मा का स्वभाव बन जाए।

विनय की महिमा-विनय से बड़ा धर्म नहीं, क्योंकि विनय सबको झुकना सिखाता है। जैसे फलों से लदे वृक्ष स्वतः झुक जाते हैं वैसे ही विनय के कारण व्यक्ति का स्वभाव तरल रहता है। वह कभी आक्रोश में नहीं होता है। वह सदैव सहज रहता है। सहजता को सबसे बड़ा गुण भी माना गया है। जो जितना सहज होगा उतना ही आगे बढ़ता जाएगा।

विनय अहंकार हटाता है-अहंकार को जीवन के लिए अभिशाप माना गया है, क्योंकि **'माणो विणय-णासणो'** (दशवैकालिक सूत्र, अध्ययन 8, गाथा 38)-मान, विनय का नाश करता है। अहंकारी व्यक्ति कभी नहीं झुकता। अहंकार की आरी सम्बन्धों को काट डालती है जिस प्रकार नींबू के रस की एक बून्द हजारों लीटर दूध को बर्बाद कर देती है उसी प्रकार मनुष्य का अहंकार भी अच्छे से अच्छे सम्बन्धों को बर्बाद कर देता है। अहंकारी को एरण्ड वृक्ष की उपमा दी गयी है। कहा है-

नमे तो आम्बा आमली, नमे तो दाड़म दाख।
एरण्ड बिचारा क्या नमे, जिसकी ओछी जात।।

रावण जैसे विद्वान् और प्रतापी राजा का पतन यदि किसी कारण से हुआ तो वह अहंकार ही था। यह अहंकार का ही दुष्परिणाम था कि कृष्ण के हाथों कंस मारा गया। अहंकार के मद में चूर दुर्योधन ने भी भाइयों के राज्य को हड़पने की कोशिश की और अहंकार के वशीभूत होकर आधे राज्य को देने की बात तो दूर सूई की नोंक के बराबर जमीन नहीं दूँगा, ऐसा कहने वाले दुर्योधन का भी वही हाल हुआ जो रावण का हुआ था। इसीलिए कहा जाता है-

मान करंता मर गया, रह्या न जिनका वंश।
तीनों टीले देख लो, रावण, कौरव, कंस।।

रावण के बाद लक्ष्मण में अहंकार का आभास होते ही राम ने उन्हें विनय का पाठ पढ़ाया। क्योंकि **'माणं मद्दवया जिणे'** (दशवैकालिकसूत्र, अध्ययन 8, गाथा 39) विनय से ही मान को जीता जा सकता है।

विनय की चुम्बकीय शक्ति-दशवैकालिकसूत्र में प्रभु फरमाते हैं-'विवत्ती अविणीयस्स संपत्ती विणीयस्स य' (दशवैकालिकसूत्र, अध्ययन 9, उद्देशक 2, गाथा 22) अर्थात् अविनीत पुरुष के सभी सद्गुण नष्ट हो जाते हैं और विनय में मानो चुम्बकीय शक्ति है जो सभी गुणों को अपनी ओर खींच लेता है। विनय को पाकर ही सभी गुण फलते-फूलते हैं। विनय सम्पूर्णता

का प्रतीक है, कमजोरी का नहीं, पौरुष का प्रतीक है, परावलम्बन का नहीं, स्वालम्बन का प्रतीक है। कहना श्रेयस्कर होगा कि विनय मोक्ष प्राप्ति का श्रेष्ठमार्ग है। कहा भी है–

हीरा तजे कड़कता, होत नगीना फिट।
विनयवान को झट मिले मोक्ष नगर की सीट।।

विनीत–अविनीत कैसे होता है?

कबीरदासजी ने विनय रहित–अविनीत की तुलना खजूर के पेड़ से करते हुए कहा है–

बड़ा भया तो क्या भया जैसे पेड़ खजूर।
पंथी को छाया नहीं फल लागे अति दूर।।

खजूर के पेड़ से न तो पथिक और न पंछी को छाया मिलती है और न ही वे फल का स्वाद ले पाते हैं क्योंकि फल अति दूर लगते हैं। इसी तरह अविनीत से किसी को लाभ नहीं होता। उत्तराध्ययनसूत्र अध्ययन 1 में प्रभु ने विनीत को शिक्षित घोड़े की एवं अविनीत को सड़े कान की कुतिया, सूअर और मृग की उपमा दी है। जैसे सड़े कानों वाली कुतिया सभी स्थानों से निकाल दी जाती है वैसे ही दुष्ट स्वभाव वाला अविनीत सभी स्थानों से निकाला जाता है। जैसे सूअर चावल को खाना छोड़कर विष्ठा खाने के लिए चला जाता है इसी प्रकार अविनीत, विनय को छोड़कर अविनय में रमण करता है। जैसे–मृग तृण–घास आदि के प्रत्यक्ष सुख को देखता है, किन्तु पाश (बन्धन) के दु:खों का विचार नहीं करता इसी प्रकार अविनीत भी वर्तमान में सुखों को देखता है, किन्तु अविनय के बुरे एवं दु:खदायी फल का विचार नहीं करता। विनीत इस लोक में कीर्ति, श्लाघा, प्रशंसा को प्राप्त होता है और अन्त में मोक्ष को प्राप्त कर लेता है। परन्तु अविनीत को न तो इस भव में सुख मिलता है और न परभव में ही, अत: जो व्यक्ति अपना ऐहिक और पारलौकिक हित चाहता है वह अविनय के दोषों को जानकर उसका त्याग करे और **'विणए ठवेज्ज अप्पाणं'** (उत्तराध्ययनसूत्र, अध्ययन 1, गाथा 6) अर्थात् विनय में अपनी आत्मा को स्थापित करे।

–7/14, उत्तरी नेहरु नगर, बिद्रुल बस्ती, ब्यावर–305901 (राज.)

तनाव-रहित जीवन

डॉ. धर्मचन्द जैन

तनाव को दूर रखने के लिए अपने मन को समझाना होता है। उसे ज्ञान से भी समझाया जा सकता है तो भक्ति से भी। मैं एक परिचित ठेले पर सब्जी और फल खरीद रहा था। अन्त में जब भुगतान कर अपना सामान लेने लगा तो ध्यान आया कि डेढ़ किलो केले की थैली नहीं दिखी। मैंने सब्जी वाले को कहा कि केले कहाँ हैं? दो ठेलों पर पिता–पुत्र एक साथ सब्जी बेच रहे थे। बीच में कोई ग्राहक एक किलो केले लेने आया था, वह डेढ़ किलो केले की थैली उठाकर ले गया। पिता–पुत्र ने बिना किसी तनाव के कहा–कोई बात नहीं। पिता ने डेढ़ किलो केले पुन: तौल कर दिए। एक फल–सब्जी वाला भी किस तरह अपने को तनाव में नहीं आने देता।

दूसरा उदाहरण भी मुझे प्रभावित कर गया। एक मिठाई की दुकान पर रक्षाबन्धन के पूर्व मैं मिठाई लेने के लिए खड़ा था। तभी एक भक्त आया और उसने दो सौ इक्यावन रुपये की मावे की मिठाई तौलने के लिए कहा। उसने पाँच सौ रुपये दिए, उसमें से सम्भवत: एक किलो के तीन सौ चालीस रुपये काटकर दुकानदार ने शेष लौटा दिए। उसने एक बार तो कहा कि कितने रुपये काट लिए, मैंने तो दो सौ इक्यावन की मिठाई का कहा था। फिर तुरन्त ही भक्ति के वशीभूत होकर ग्राहक ने कहा–कोई बात नहीं उसने (प्रभु ने) जितने कटवा दिए वही सही है। उतने की ही मिठाई कर दो। सहज रूप से बिना किसी तनाव के उसे प्रभु की इच्छा मानकर उस घटना को स्वीकार कर लिया। उसे कोई तनाव नहीं था।

–सम्पादक, जिनवाणी

10 सितम्बर 2021
जिनवाणी 43
ISSN 2249-2011

English-section

How to overcome adversities in Life as depicted in 3rd Adhyayan of Acharang Sutra.

Varsha Shah

महावीर ने भय को पार करने के लिए और लोक के स्वरूप को जानने और 'अ-भय' की स्थिति में प्रवेश के लिए क्या सूचन किया है? उन्होंने कहा है कि अप्रमादी व्यक्ति को भय क्यों नहीं रहता है?

In this article, I will be reflecting on cause of fear and how to overcome it.

सव्वओ पमत्तस्स भयं, सव्वओ अपमत्तस्स नत्थि भयं –(Ayaro 3. 4. 74 / Samaṇa Suttam, 166).

प्रमादी व्यक्ति को सभी और से भय रहता है, अप्रमादी व्यक्ति को भय रहता नहीं है।

Meaning : A man is engulfed in fear when he is in state of negligence. There is no fear to a man who is in state of vigilance.

Let us know the 3rd adhyayan of Acharanga sutra सीओसणिज्जं (शीत और उष्ण)

Subject matter of 3rd Adhyayan is on physical-mental adversities.

"F-E-A-R has two meanings: 'Forget Everything And Run' or 'Face Everything And Rise'.

From the time we're infants, we are equipped with the survival instincts necessary to respond with fear when we sense danger or feel unsafe. Like all emotions, fear can be mild, medium, or intense, depending on the situation and the person.

Difference between Fear and Phobia

Fears and phobias are related, but they are quite different in some ways. A phobia is an intense fear reaction to a particular thing or a situation. Some phobias develop when we have a scary experience with a particular thing or situation. Anxiety experienced in such situation tend to become so strong that it interferes with the quality of life and its ability to function. Whereas Fear is an emotional response to a real or perceived threat.

Science provides knowledge and insight into why we experience fear and why sometimes our fears seem out of control.

Let us scrutinize fear through myriad lenses as mentioned in Jaina ĀgamaĀcāraṅga with respect to fear factors. Mahavira has given comprehensive assessment of fear in all of its ramification. Fear is a great enemy of success. Clinging to life and body or sensuous pleasure are the main causes of all fear.

पास लोए महब्भयं - Ayaro - 6.1.14

Mahavir is saying look! (perceive) world is full of extreme fear. When Mahavir got enlightened he saw through his *kevaljñāna* that everyone is within the periphery of fear!!

As per Jainism, fear is one among four *saṃjñās* (Jivābhigam) or ten *saṃjñās* (Sthānāṅga). Among the four *saṃjñās* mentioned are *āhāra* (food), *bhaya* (fear), *maithun* (sensual pleasure), *parigraha* (possession). In Sthanaṅga one finds ten types of *saṃjñās* which is extension to the common four *saṃjñās*. Fear is one among the four *saṃjñās*. *Saṃjñās* is an instinctual sensation.

It arises due to udaya bhāva. It occurs without the assistance of sense organ and mind. All types of worldly beings have *saṃjñās* in a minimum-maximum intensities. Though all the beings have all the four *saṃjñās,* it is generalised that animals have *āhāra saṃjñā*, Hellish beings have fear *saṃjñā*, humans have *maithuna saṃjñā* and celestial beings have *parigraha saṃjñā*. The hellish being are in a constant state of fear due to their own wrong deeds. It's our own normal day to day experiences that when we act ill-legally or unethically we are in fear of being caught red-handed.

When we crave beyond the level of necessities of life, saṃjñās creeps in. We are never aware how we get succumbed to a foreign element which tends to become an inbuilt mechanism within us. This happens due to our deluded state of mind. So with respect to *bhaya saṃjñā*, what paralysis does to the physical body, fear does to the mind. It is a most destructive emotion. It breaks down the nervous system and undermines health. It creates worry and renders happiness and peace of mind practically impossible.

Seven states of fear as mentioned in Dasāśrutaskhanda, Āvaśyaka (Saman-sutra), Sarvārthasidhi, Sthanaṅga, Samavayāṅga sutras etc.

Seven bhaya sthāna or seven states where possibility of fear exists as found in several sutra are -

I. *Iha loka-bhaya:* Fear of present world and fear from same species. Same species means fear among animals within themselves (lion-deer, cat-mouse). Fear within human beings like thief, enemy, cruel people. Fear also exists within various relationships like employer-employee, teacher-student, husband-wife relationships etc. indirectly this state of fear, leads to himsā (violence). Among the five types of himsā as quoted in Ācāraṅga sutra 4th chapter of samyak darśan, when you are ruling over someone (śāsan) is also a form of himsā. The word used is śāshan not anuśāsan (discipline).

The fear of society is included in this category. It is true, women are mostly used as a scapegoat in the name of religion and culture because they are considered physically and mentally weak. Weakness is the pandora of fear.

Separation from our loved ones is an inevitable fact of life.We fear of loosing the companionship of our dear ones be they family members or be they friends. We are all like the logs of wood floating in the endless ocean of samsāra. For some period of time, we come in contact with a few logs termed as (ṛnānu-bandha/bonding) with our friends and relatives, but then we drift apart. In the future, we will come in contact with the same beings (logs) again and then drift apart again. This is the true nature of this world, a reality that we should not deny.

ii. *Para-loka-bhaya :* Fear of the next world or fear from other species between animal and human, between celestial and human. This fear can be factual like fear of lizard, snake, lion (for humans) or fear from celestial beings (evil spirits). Or it can also be a kind of hallucination. In terms of present situation, we humans are facing the fear of virus which is a form of *para-loka bhaya.*

iii. *Ādāna-bhaya :* Fear of losing property due to theft etc. The third cause of fear is that of losing our possessions or financial security out of theft, fraud or such ill-legal means. This fear can be overcome by thoroughly planning our lives so that the chances of loss are minimized. The second solution of this type of fear is to understand through law of dharma and karma, that the possessions are never permanent. Money is like a rotating wheel that travels from one place to another. Change is a fact of life. If we are rich today, we may be poor tomorrow or vice versa. This understanding should make us become less attached to our material possessions, which can never be our constant companions.

iv. *Akasmāt bhaya :* Griped with sudden fear without any external cause.People are always suffering either what happened yesterday or what may happen tomorrow. Being fearful means you are suffering that which does not exist. So the suffering is always about that which does not exist, simply because we are not rooted in reality, we are always rooted in our mind. In deep contemplation one gets the insight that the attachment to the known and the unwillingness to let go, also breeds fear.

"One is never afraid of the unknown; one is afraid of the known coming to an end." J. Krishnamurti.

v. *Ājivikā-bhaya :* Fear of loosing means of livelihood. In the current pandemic situation many have faced the hardship of livelihood. It also involves fear from the non- living which means earthquakes and other natural calamities where we tend to lose our livelihood.

vi. *Aśloka-bhaya* or *Apayash bhaya :* Fear of the society, one's reputation, fear of loosing one's status and what others would say and think about one self.It is stated in Ācāraṅga sūtra, 1st chapter, four reasons as to why we tend to do himsā. Four reasons are -

a. livelihood,
b. for fame and status,
c. for holding wrong notions with respect of birth, death and liberation and
d. Self-preservation. So one reason for himsā among the four is to maintain one's status. Himsā always lead to fear. When one gives fear to others, he or she has to endure its repercussion.

vii. *Maraṇa bhaya :* Fear of death. Self-preservation is a basic trait of all living beings. No one wants to die or to get harmed. Accordingly, the fear of death or injury is the major cause of fear in human beings. Death of the body is merely a milestone in the journey of the soul. This journey completes when the soul achieves liberation and arrives at the abode of the liberated beings, located at the final frontier of the universe. Before death catches one off-guard, it is one's duty to keep purifying the soul. The purer the soul is at the time of death, the better the chances are to get a more favorable next birth to continue the journey of purification. Only with 100 percent purity based on 100 percent nonviolence a soul can achieve liberation.

One should not fear death but celebrate it as the ultimate demonstration of minimizing consumption and violence. Fear of death should encourage a life that is compassionate towards other living beings.

The above seven factors are briefly enumerated, but there are several types of fears which a living being undergoes and can be classified in any of these seven. We tend to face all seven *bhayas* in the present pandemic scenario.We can overcome unnecessary fears by giving ourselves the chance to learn and

gradually get used to the thing or situation we are afraid of.

How to overcome fear ?

A therapist might teach relaxation practices such as specific ways of breathing, muscle relaxation training, or soothing self-talk. These can help people feel comfortable and bold enough to face the fears on their list. As somebody gets used to a feared object or situation, the brain adjusts how it responds and the phobia is overcome.When fear gets transformed in its opposite (*pratipakṣa*) 'nirbhaya' state, it functions as a vital, life-saving force for eg., many successful leaders survived through the instinct with the fear of failure.

As per Jainism,Nir-bhaya and A-bhaya are both 'Fear Free Zones' where one experiences state of fearlessness but how to reach these states, what is the difference between the two?

To find out the real solution one needs to do *anuprekṣā* (mindfulness) and try to find permanent solutions. Indeed, fear itself may act as a powerful motivator. 'There is no courage without fear' and transforming from the 'fear barrier' may be less frightening than living with our underlying and long-term fears.

In order to come in the zone of 'nirbhaya' one should develop the attitude of compassion, feeling of gratitude which is opposite (pratipakṣa) of fear. It makes more sense for us to co-operate rather than compete in fact, our survival as a species depends on it. Dāna helps us in inculcating the virtue of sharing and giving. It also helps in developing our inner compassionate virtue. There are nine types of dāna or merit done out of compassion or kindness mentioned in the *punya tattva,* like *anna-punya* (offering food), *pāna-punya* (offering water), offering clothes, *layan-śayan* punya (giving dwelling places), involving oneself in good thought, speech and action and attitude of reverence. In 9th Sthānāṅga sūtra it is said that *dāna* (charity) if done out of fear then such a *dāna* is useless with respect to inculcating the virtue of compassion.The 18th chapter of Uttaradhyayana sutra which is considered as the last sermon of Mahavir, enlightens about cause of fear and technique to enter in the state of *Abhya*, the fear-less zone. We come across in *Namothuṇam sutra*, the seven *dāna* i.e. giving knowledge to others, saving someone's life etc among which *'abhaya-dayāṇam'* is considered as the highest and the best of all merits and charity in freeing oneself and others from all kinds of fears. Similarly Bhagawat *Gītā* 4th, 11th chapters also explain about fear and how to overcome it.

Though both *Abhaya* and *Nirbhaya* are states where there is no fear, but *nirbhaya* is restricted. It is relative. There are chances that we come back from *nirbhaya* fearlessness to the state of *bhaya* (fear). Whereas Abhaya is that state where we do not return back to the state of fear. It is an absolute state of fearlessness.

Mahavir has given us key to enter into the state of nirbhaya in the present scenario.

पुरिसा तुममेव तुमं मित्तं, किं बहिया मित्तमिच्छसि ?

-Ayaro 3. 2. 62

Meaning : Man! You are yourself a friend, why search outside for a friend?

Today we truly not only understand but also experiencing this fear in the form of covid-19. If we can grasp the true meaning of this sutra, then we voluntarily can observe all the norms of covid like masking, maintaining social distancing etc. If taken positively we have been given the opportunity to delve within ourself and find out who we are what is our goal.

Whether it is a fear of spiders, a fear of the dark, a fear of heights or the pandemic current scenario, to understand the physical and emotional responses that we call fear and

using our ancient knowledge and wisdom of seers, is the first step toward conquering it. One should ponder, and get insights about all other fears mentioned above. Gradually (and safely) facing fear helps to overcome it. One should neither live in fear nor put other living beings in a state of fear. With the right coaching and support it can be surprising how quickly fear can melt away.

Ravindranath Tagore in his Gitanjali has quoted a beautiful poem, " Where the mind is free and the head is high "[1]

Jacques Derrida (1930–2004) French philosopher and the founder of deconstruction says, "Rendering delirious that interior voice that is the voice of the other in us." Fear is the shackle holding us captive.It is important for the mind to be free of fear. Just as food is essential so is essential that the mind be free of fear. Being fear-free is a must for being humanitarian as well as for equality.

सव्वओ पमत्तस्स भयं, सव्वओ अपमत्तस्स नत्थि भयं

Meaning : A man is engulfed in fear when he is in state of negligence. There is no fear to a man who is in state of vigilance.

The sutra given by Mahavir to transcend the fear and enter into the state of 'A-bhaya'.When one is in a state of aparigraha and living in absolute moment (*vartamān kṣana*), one perceives that there is no fear.

Conclusion :

Physical adversities Parisaha are 22 in number — Winning over forms of obstacles and torments encountered in worldy or spiritual journey, keeping cool in adverse conditions like Thirst. Hunger, Cold, Heat etc.

Mental parishaha is due to माई (maya), पमाई (pramada) and गब्भं (परिभ्रमण) transmigration पासियआउरे (अनुभव) experiencing thus the mental and physical pain,Mahavir advices us thus-

The 3rd Adhyayan teaches us in life

I. सिउसिणच्चाई to overcome adversities

ii. अरइरइ–सहेगमो– to overcome attachment/ cravings

iii. फरुसयं नो वेएइ– to overcome hardships

iv. जागर– to overcome spiritual lethargy

v. वेरोवरए– to be beyond enemity.

1. Where the mind is without fear and the head is held high;
Where knowledge is free;
Where the world has not been broken up into fragments by narrow domestic walls;
Where words come out from the depth of truth;
Where tireless striving stretches its arms towards perfection;
Where the clear stream of reason has not lost its way into the dreary desert sand of dead habit;
Where the mind is led forward by thee into ever-widening thought and action
Into that heaven of freedom, my Father, let my country awake.

-B-3/16; Pereira Sadan, Opp:- Natraj Studio, M.V. Road, Andheri East, Mumbai - 400069. (MH)

जिनवाणी पर अभिमत

श्री विनोद कोठारी

जिनवाणी के 10 अगस्त, 2021 के अंक में सम्पादकीय पढ़ा। डॉ. धर्मचन्दजी जैन ने संघ एवं समाज के भेद को बहुत ही अच्छे तरीके अभिव्यक्त किया है। वाकई में आज संघ एवं समाज को एक ही समझने से अनेक बार वाद-विवाद, वैमनस्य एवं कटुता का माहौल बन जाता है। पूरा लेख बहुत ही ज्ञानवर्धक एवं समयोचित है।

ISSN 2249-2011

तत्त्व-चर्चा

जैनदर्शन में गर्भज जीव की अवधारणा

सी.ए. डॉ. ओ. पी. चपलोत

भगवतीसूत्र शतक 1, उद्देशक 7 में प्रभु महावीर ने गर्भज जीव के बारे में गौतम स्वामी को सम्बोधन करते हुए जो बताया है वह आज की चिकित्सा विज्ञान की दृष्टि से बहुत महत्त्वपूर्ण जानकारी प्रदान करता है-

प्रश्न- क्या गर्भ में उत्पन्न हुआ जीव इन्द्रिय वाला उत्पन्न होता है या बिना इन्द्रिय का उत्पन्न होता है?

उत्तर- गर्भ में उत्पन्न हुआ जीव द्रव्येन्द्रियों की अपेक्षा बिना इन्द्रियों का उत्पन्न होता है तथा भावेन्द्रियों की अपेक्षा इन्द्रियों सहित उत्पन्न होता है।

प्रश्न- क्या गर्भज जीव शरीर सहित उत्पन्न होता है या शरीर रहित उत्पन्न होता है?

उत्तर- गर्भ में उत्पन्न हुआ जीव औदारिक, वैक्रिय और आहारक शरीर की अपेक्षा शरीर रहित उत्पन्न होता है तथा तेजस और कार्मण शरीर की अपेक्षा शरीर सहित उत्पन्न होता है।

प्रश्न- जीव गर्भ में उत्पन्न होते ही सर्वप्रथम क्या आहार करता है?

उत्तर- आपस में एक दूसरे से मिला हुआ माता का आर्तव और पिता का जो वीर्य है उसका जीव, गर्भ में उत्पन्न होते ही आहार करता है।

प्रश्न- गर्भ में उत्पन्न हुए जीव का आहार क्या होता है?

उत्तर- गर्भ में उत्पन्न हुआ जीव माता द्वारा खाये हुए अनेक प्रकार के रसविकारों के एक भाग के साथ माता का आर्तव खाता है।

प्रश्न- क्या गर्भ में गये हुए जीव के मल, मूत्र, कफ, नाक का मेल, वमन और पित्त होता है?

उत्तर- गर्भ में गये हुए जीव के मल, मूत्र, कफ आदि नही होते हैं, चूँकि गर्भ में जाने पर जीव जो आहार करता है, जिस आहार का चय करता है, उस आहार को स्रोत के रूप में यावत् स्पर्शेन्द्रिय के रूप में, हड्डी के रूप में, मज्जा के रूप में, बाल के रूप में, दाढ़ी के रूप में, रोमों के रूप में और नखों के रूप में परिणत करता है। इसलिए गर्भ में गये जीव के मल, मूत्रादि नहीं होते हैं।

प्रश्न- क्या गर्भ में उत्पन्न हुआ जीव, मुख से कवलाहार करने में समर्थ है?

उत्तर- गर्भ में गया हुआ जीव, सर्व आत्म (सारे शरीर) से आहार करता है, सर्व आत्म से परिणमता है, सर्व आत्म से उच्छ्वास लेता है, सर्व आत्म से निश्वास लेता है, बार-बार आहार करता है, बार-बार परिणमता है, बार-बार उच्छ्वास लेता है, बार-बार निश्वास लेता है, कदाचित् आहार करता है, कदाचित् परिणमता है, कदाचित् उच्छ्वास लेता है, कदाचित् निश्वास लेता है तथा पुत्र जीव को रस पहुँचाने में कारणभूत और माता के रस लेने में कारणभूत जो ''मातृ जीव रस हरणि'' (नाभिका नाल) नाम की नाड़ी है, वह माता के जीव के साथ सम्बद्ध है, और पुत्र के जीव के साथ स्पष्ट जुड़ी हुई है, उस नाड़ी द्वारा पुत्र का जीव आहार लेता है और आहार को परिणमाता है। एक दूसरी और नाड़ी है (पुत्र जीव रस हरणि) जो पुत्र के जीव के साथ सम्बद्ध है और माता के जीव के साथ स्पृष्ट जुड़ी हुई होती है, उससे पुत्र का जीव आहार का चय करता है और उपचय करता है। इस कारण गर्भ में गया हुआ जीव मुख द्वारा कवलाहार लेने मे समर्थ नहीं है।

द्रव्येन्द्रिय और भावेन्द्रिय

इन्द्रिय के दो भेद हैं-द्रव्येन्द्रिय और भावेन्द्रिय। पौद्गलिक रचना विशेष को द्रव्येन्द्रिय कहते हैं। द्रव्येन्द्रिय के दो भेद हैं-निवृत्ति द्रव्येन्द्रिय और उपकरण द्रव्येन्द्रिय। इन्द्रियों की बाहरी आकृति को 'निर्वृत्ति' कहते हैं और उसके सहायक को 'उपकरण' कहते हैं।

भावेन्द्रिय के भी दो भेद हैं-लब्धि और उपयोग। 'लब्धि' का अर्थ है-शक्ति। जिसके द्वारा आत्मा शब्दादि का ज्ञान प्राप्त करने में समर्थ होता है उसे लब्धि इन्द्रिय कहते हैं। उपयोग का अर्थ है ग्रहण करने का व्यापार।

गर्भज जीव के अङ्गादि

गर्भगत जीव के माता के तीन अङ्ग कहे गये हैं- मांस, रक्त और मस्तक का भेजा। पिता के भी तीन अङ्ग कहे गये हैं-हड्डी,मज्जा और केश, दाढ़ी, रोम तथा नख। शेष सभी अङ्ग माता तथा पिता दोनों के पुद्गलों से बने हुए होते हैं। जब तक सन्तान का भवधारणीय शरीर बना रहता है तब तक माता-पिता के पुद्गल सन्तान के शरीर में कायम रहते हैं एवं समय-समय पर हीन होते हुए समाप्त हो जाते हैं।

गर्भ में जीव की स्थिति

गर्भ में रहा हुआ जीव, गर्भ की अवस्था में उत्तान आसन से भी रहता है, यानी ऊपर की ओर मुख किये हुए चित सोता है, करवट लेकर भी सोता है, आम्रफल की तरह टेढ़ा होकर भी रहता है, खड़ा रहता है, बैठा रहता है, सोता रहता है, ये सब बातें माता पर आश्रित रहती हैं। अर्थात् माता के खड़े रहने पर, खड़ा रहता है, बैठने पर बैठता है और सोने पर सोता है। तात्पर्य यह है कि माता की क्रिया पर बालक की क्रिया निर्भर है।

सन्तान की प्रसव क्रिया

किसी-किसी बालक का प्रसव सिर की ओर से होता है और किसी का पाँव की ओर से। इस तरह कोई सम होकर जन्मता है और कोई तिरछा होकर। जब बालक तिरछा होकर जन्मता है तो बालक एवं माता को असह्य वेदना होती है। उस समय योग्य उपाय करने पर यदि बालक सीधा हो जाय तो ठीक है, अन्यथा बालक और माता दोनों की मृत्यु हो जाने की सम्भावना रहती है। कई बार तो माता की रक्षा के लिए गर्भ के बालक को काट-काटकर निकाला जाता है।

सन्तान का शुभ-अशुभ होना

जिस जीव ने पूर्व भव में शुभ कर्म उपार्जित किये है वह यहाँ भी शुभ होता है, सुरूप होता है, सुवर्ण, सुगन्ध, सुरस और सुस्पर्श वाला होता है। इष्ट, कान्त, प्रिय, शुभ एवं मनोज्ञ होता है। उसका स्वर भी इष्ट, कान्त आदि होता है। वह आदेय वचन वाला होता है। सभी लोग उसके वचन को मान्य करते हैं। जिस जीव ने पूर्वभव में अशुभ कर्म उपार्जित किये हैं, वह कुरूप, कुवर्ण, दुर्गन्ध, दुरस और दुस्पर्श वाला होता है। वह अनिष्ट, अकान्त, अप्रिय, अशुभ और अमनोज्ञ होता है। वह हीन स्वर वाला एवं अनादेय वचन वाला होता है।

प्रश्न- क्या कृत्रिम रूप से सन्तान को उत्पन्न किया जाना सम्भव है?

उत्तर- इस विषय में भगवतीसूत्र शतक 2, उद्देशक 5 के गर्भ विचार पद में प्रभु ने यह फरमाया है कि मनुष्य और तिर्यञ्च का वीर्य बारह मुहूर्त्त तक योनिभूत गिना जाता है अर्थात् मानुषी या पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चणी की योनि में गया हुआ वीर्य बारह मुहूर्त्त तक सचित्त रहता है। उस वीर्य में बारह मुहूर्त्त तक सन्तानोत्पादक शक्ति रहती है।

जैनदर्शन के अनुसार देवों का जन्म उपपात रूप में होता है। नारकियों का जन्म कुम्भियों में होता है तथा मनुष्य और तिर्यञ्च के जीव ही गर्भज होते हैं। गर्भ में रहा हुआ जीव यावत् जब माता दुःखी हो तो दुःखी होता है एवं माता के सुखी होने पर सुखी होता है।

गर्भज जीवों मे योनि-संग्रह

त्रस जीवों में आठ प्रकार से योनि-संग्रह कहा गया है, यानी त्रस जीव आठ प्रकार की योनियों से उत्पन्न होते हैं।

1. **अण्डज**-अण्डे से पैदा होने वाला जीव जैसे पक्षी आदि।
2. **पोतज**-पोत यानी कोथली सहित पैदा होने वाला जीव जैसे हाथी आदि।
3. **जरायुज**-जरायु सहित पैदा होने वाले जीव जैसे मनुष्य, गाय, मृग, भैंस आदि जिनके जन्म लेते समय झिल्ली शरीर पर रहती है, जिसे जरायु कहते हैं। इससे निकलते ही शरीर पर हलन-चलन शुरू

हो जाती है।

4. **रसज**–दूध, दही, घी आदि तरल पदार्थ के विकृत हो जाने पर उनमें पड़ने वाले जीव।
5. **संस्वेदज**–पसीने से पैदा होने वाला जीव यथा–जूं, लीक आदि।
6. **सम्मूर्च्छिम**–शीत–उष्ण आदि का निमित्त मिलने पर आस–पास में उत्पन्न होने वाला जीव जैसे मच्छर आदि।
7. **उद्भिज्ज**–जमीन को फोड़कर उत्पन्न होने वाले जीव जैसे पतंगिया, टिड्डी आदि।
8. **औपपातिक**–उपपात जन्म से उत्पन्न होने वाले जीव जैस देव शय्या पर एवं नारकीय जीव कुम्भी में पैदा होते हैं। (स्थानाङ्गसूत्र, अष्टम स्थान)

पाँचों स्थावरकाय के जीव तथा तीनों विकलेन्द्रिय जीव (बेइन्द्रिय से चतुरिन्द्रिय के जीव) अगर्भज यानी सम्मूर्च्छिम होते हैं।

जीवों द्वारा लिये जाने वाले आहार के प्रकार

आहार तीन प्रकार के कहे गये हैं–ओज आहार, लोम आहार और प्रक्षेप आहार। कार्मण शरीर द्वारा पुदगलों को ग्रहण करना 'ओज' आहार कहलाता है। त्वचा के स्पर्श से लोम आहार होता है और मुँह में डालकर खाने को प्रक्षेप (कवल) आहार कहा है।

सामान्य रूप से सभी संसारी जीव प्रति समय निरन्तर आहार (पुद्गल) ग्रहण करते हैं। जीव उत्पत्ति के समय प्रथम 'ओज' आहार करता है, फिर शरीर स्पर्श द्वारा 'लोम' आहार करता है, तदुपरान्त उसे परिणमाता है और उसके बाद विशेष शरीर बन्ध करता है। जिन जीवों के रसनेन्द्रिय है वे जीव ही प्रक्षेप आहार करते हैं।

(भगवतीसूत्र शतक 19, उद्देशक 3)

–377 के वन रोड, भूपालपुरा, उदयपुर (राजस्थान)

जिनवाणी पर अभिमत

श्री डी. गौतमचन्द टोडरवाल

हमारे जैन समाज की जिनवाणी पत्रिका एक श्रेष्ठ पत्रिका है। इसमें बहुत सुन्दर ज्ञानवर्धक लेख आते हैं जो हमें नई–नई जानकारी देते हैं। इससे ज्ञान में वृद्धि होती है।

मैं लगभग 10–12 साल से जिनवाणी पढ़ता आ रहा हूँ। हर माह की पत्रिका का बेसब्री से इन्तज़ार करता हूँ। पत्रिका पढ़कर मुझे बहुत आनन्द प्राप्त होता है और ज्ञान–ध्यान भी बढ़ता है। मन सुहावनी रचनाएँ पढ़कर आनन्द की लहर आती है। मन शान्त और हृदय तृप्त हो जाता है।

जिनवाणी दिसम्बर 2020 में 'जैन जीवनशैली विशेषांक' एवं आचार्य हस्ती दीक्षा वर्ष का अंक बहुत ही शिक्षाप्रद था। इसमें एक–एक विषय पर श्रावक विद्वानों ने अपने भाव रखें। इन दोनों अंकों की महिमा जितनी लिखी जाये उतनी कम है।

जिनवाणी फरवरी और मार्च 2021 के अंक में न्यायाधिपति श्री जसराजजी चौपड़ा साहब का लेख 'व्यक्तित्व विकास एवं समस्याओं के समाधान में स्वाध्याय तथा सामायिक की भूमिका' लेख अति सुन्दर लगा। इसमें 2021 में 21 दिन का लॉकडाउन जिसमें 'मेरी वसीयत' यह मेरे बाऊजी की अन्तिम निशानी है, पढ़कर बहुत अच्छा लगा। 21 दिन में 21 बातों का विश्लेषण दिया, बहुत सुन्दर लगा। ऐसे भाव रखे आनन्द आ गया। ऐसे संस्कार हर माता–पिता अपने पुत्र को अवश्य दे तो धर्म की दीप्ति होती रहेगी।

अप्रेल 2021 महावीर जयन्ती अंक में मधुरव्याख्यानी श्रद्धेय श्री गौतममुनिजी म.सा. द्वारा रचित महावीर चालीसा भी पढ़कर मन मोहित हुआ। जिनवाणी प्रतिमाह हमें नये–नये ज्ञानवर्द्धक लेख से अनुगृहीत करती रहती है।

–विद्यानगर, ओसवाल गॉर्डन, थर्ड फ्लोर, आर. ब्लॉक–301, कोरूकपेठ, चेन्नई–600021

10 सितम्बर 2021
जिनवाणी 51
ISSN 2249-2011

जीवन-व्यवहार

व्यावहारिक जीवन के नीति वाक्य (8)

श्री पी. शिखरमल सुराणा

29. प्रत्येक मनुष्य में तीन प्रकार के चरित्र होते हैं-एक ...जो वह दिखाता है, दूसरा...जो उसके पास वास्तव में होता है, और तीसरा...जो वह सोचता है कि उसके पास है। हमारा पूरा जीवन इस तरह तिहरे चरित्रों को जीते-जीते सम्भवतः अपने मूल स्वरूप को ही खो देता है। यदि हम सिर्फ दिखावे को त्याग कर ...अपने अन्दर की सच्चाई को पहचाने और उसी सच्चाई में जीवन जीने का साहस करें....तो ये हमारे मूल-चरित्र को निश्चित रूप से पारदर्शी, सहज, सरल एवं सर्व-स्वीकार्य बना सकता है। अपने मूल चरित्र में जीवन को जीने में ही आपके अदम्य साहस का परिचय है। थोड़ा-सा मुश्किल ज़रूर है....लेकिन असम्भव नहीं। प्रयास तो करके देखिए।
30. प्रेम के अभाव में ही लोग भटकते हैं और भटके हुए लोग प्रेम से ही सीधे रास्ते पर लाए जा सकते हैं। प्रेम एक ऐसी भावना है जो आत्माओं को जोड़ती है...बिछड़े हुए एवं बिखरे परिवारों को आपस में सम्मान के साथ वापस मिलाती है ....समाज में सकारात्मकता एवं पूर्ण एकता का सञ्चार भी करती है। जीवन में जिस तरह के प्रभावी और चामत्कारिक परिवर्तन ..प्रेम तथा सद्भावना से लाये जा सकते हैं .... वे किसी अन्य रास्ते से सम्भव नही हैं। अतः जीवन से घृणा एवं नफ़रत जैसी नकारात्मक भावनाओं को दूर रखते हुए... प्रेम एवं सद्भावना जैसी पवित्र तथा सकारात्मक भावनाओं को ही अङ्गीकार करें।
31. लफ़्ज़ इंसान के गुलाम होते हैं, मगर बोलने से पहले। बोलने के बाद इंसान अपने लफ़्ज़ों का स्वयं ही गुलाम बन जाता है। हमारे वे शब्द जो अब तक कहे नहीं गए ...वे तरकश में रखे हुए तीर के समान हैं। वे बस तभी तक हमारे हैं, जब तक हमारे पास हैं और हमारे नियन्त्रण में हैं। हाथ से एक बार निकलते ही ये फिर हमारे नहीं रहते। अतः इनको अपने नियन्त्रण से मुक्त करने से पूर्व उनको अच्छे से परख लेना चाहिए और उनसे होने वाले प्रभाव का पूर्वानुमान भी लगा लेना चाहिए। यह हमको उस स्थिति से भी बचाता है ...जिसमें दूसरे लोग हमारे ही लफ़्ज़ों का भावार्थ तथा प्रभाव बताकर हमको प्रताड़ित कर सकते हैं।
32. मनुष्य का पतन कार्य की अधिकता से नहीं, वरन् कार्य की अनियमितता से होता है। वास्तविकता यही है कि ...इस संसार में अपने-अपने जीवन में सभी लोग अति-व्यस्त हैं और अपने अस्तित्व को बचाने हेतु निरन्तर संघर्ष कर रहे हैं। कोई जीने के लिए अपनी मृत्युशय्या पर पड़ा हुआ एक- एक श्वास के लिए संघर्ष कर रहा है ...तो कोई अपने जीवन-स्तर को बेहतर बनाने के लिए अपनी लड़ाई लड़ रहा है। सच्चाई यही है कि सबके पास एक समान ...अतिसीमित समय है तथा सबके हर एक दिन में सिर्फ 24 घण्टे ही होते हैं। किन्तु कुछ लोग इसी समय में अपने संघर्ष में सफल होकर अपनी लगभग सभी लड़ाइयाँ जीत लेते हैं ...और एक बेहतर संगठित तरीके से अपना, अपने परिवार एवं समाज का निरन्तर उत्थान करते हैं। इसके विपरीत उन्हीं परिस्थितियों में कुछ लोग सिर्फ पराजित होकर निरन्तर पतन की ओर बढ़ते जाते हैं। यह अन्तर कार्यशैली और समय के प्रबन्धन में विशिष्ट भिन्नता होने के कारण होता है। आप अपनी कार्यशैली में वाञ्छित बदलाव करके देखिए ...सफलता स्वयं ही आपके साथ चल देगी।

10 सितम्बर 2021
जिनवाणी 52
ISSN 2249-2011

चिन्तन

पहले धर्म क्षेत्र में हो अणुव्रतों का पालन*

डॉ. अनेकान्त कुमार जैन

अन्यक्षेत्रे कृतं पापं धर्मक्षेत्रे विनश्यति।
धर्मक्षेत्रे कृतं पापं वज्रलेपो भविष्यति।।

अन्य क्षेत्र में किया हुआ पाप धर्म-क्षेत्र में आराधना करने पर सम्भवतः विनाश को प्राप्त हो भी सकता है, किन्तु धर्म-क्षेत्र में किया गया पाप वज्रलेप के समान हो जाता है जिसका नाश करना बहुत कठिन हो जाता है।

यह सुभाषित अर्थ सहित प्रत्येक मन्दिर, तीर्थ, स्थानक, धर्मशाला आदि सभी धर्म-क्षेत्रों में अनिवार्य रूप से लिखवा देना चाहिए। पाँच अणुव्रत हमारे जीवन के हर क्षेत्र में पालने योग्य हैं, किन्तु उनका धर्म-क्षेत्र में पालन अनिवार्य है। जहाँ से हमें इन अणुव्रतों की शिक्षा मिली है उस क्षेत्र में ही यदि उसका पालन नहीं किया जा सकता तो देश-दुनिया को उसके पालन की शिक्षा देना व्यर्थ हो जाएगा।

हम आध्यात्मिकता का दम्भ भर रहे हैं, लेकिन नैतिकता भी नहीं पाल पा रहे हैं। धर्म-क्षेत्र में भी हम प्रामाणिक क्यों नहीं रहना चाहते? धर्म के नाम पर हम अप्रामाणिकता को उचित क्यों मान रहे हैं?

इन बातों पर हमें ईमानदारी के साथ विचार करना है। अपने लिए भी और अपने गौरवशाली जैन समाज, एवं संस्कृति के लिए भी।

अणुव्रत

अहिंसा समाणुभूई अकत्ता परदव्वस्स खलु सच्चं।
परं मम ण इ अस्सेयं अणासत्ति अपरिग्गहो बंभं च।।

सभी जीवों में अपने ही समान अनुभूति अहिंसा है, स्वयं को परद्रव्य का अकर्त्ता मानना ही निश्चित रूप से सबसे बड़ा सत्य है, पर पदार्थ मेरा नहीं है-ऐसा मानना ही अस्तेय है और अनासक्ति ही अपरिग्रह और ब्रह्मचर्य है।

पाँच पाप

ण मण्णदि सयं अप्पा जेट्ठपावं खलु सव्वपावेसु।
तेसु य सादो उत्तं पापिस्स लक्खणं जिणेहिं।।

निश्चित ही स्वयं को आत्मा न मानना सभी पापों में सबसे बड़ा पाप है और जिनेन्द्र भगवान ने पापों में स्वाद लेना ही पापी का लक्षण बताया है।

हिंसा

शास्त्रों में कहा है आत्मा में राग-द्वेष की उत्पत्ति हिंसा है। अतः जब धर्म-क्षेत्र में हम रागवर्धक कार्यक्रम करते हैं तब हिंसा का दोष लगता है। वहीं पर छोटी-छोटी बातों के लिए अपने साधर्मियों से द्वेष भाव करते हैं, उनका अपमान कर देते हैं तब हिंसा का दोष लगता है। अपनी आराधना की क्रियाओं में भी अधिक से अधिक अहिंसा की भावना रखकर आराधना करना चाहिए। हम आत्म-विशुद्धि और पुण्य सञ्चय की भावना से पूजा अभिषेक भजन-कीर्तन आदि कार्य करते हैं, किन्तु कभी-कभी उसमें सामग्री आदि में अशुद्धि के कारण हिंसा का दोष लग जाता है। कार्यक्रमों में अनुपयोगी अत्यधिक लाइट और रोशनी अनन्त जीवों की विराधक हो जाती है। ऐसे स्थानों पर भी हमें अनर्थदण्ड व्रत का प्रयोग अवश्य करना चाहिए। कोई नहीं है फिर भी अनावश्यक रूप से पंखा, एसी, कूलर लाइट आदि हम ही खुले छोड़ देते हैं, इससे अनावश्यक बिजली, पैसे का व्यय और हिंसा होती है। अहिंसाणुव्रत का सर्वप्रथम पालन क्या यहाँ नहीं होना चाहिए?

* यह आलेख यद्यपि दिगम्बर परम्परा को ध्यान में रखकर लिखा गया है, किन्तु यह श्वेताम्बर मूर्तिपूजक परम्परा एवं कुछ अंशों में स्थानकवासी परम्परा पर भी लागू होता है। -सम्पादक

झूठ

अक्सर दूसरों को धर्म की प्रेरणा देने के लिए हम झूठ का सहारा लेते हैं और उसे उचित बतलाते हैं। जैसे 100-200 साल पुरानी मूर्ति को हजारों साल पुरानी बताना, चमत्कार की कोई झूठी कहानी बताकर धर्म की महिमा बताना। जिस क्रिया में कोई धर्म नहीं उसमें भी धर्म बता कर दान के लिए उकसाना। कई स्थलों पर थोड़ा ज्यादा प्राचीन प्रतिमा को यह चतुर्थ काल की मूर्ति है-ऐसा कहते रहते हैं। जबकि इतिहास और पुरातत्त्व की दृष्टि से मात्र एक मूर्ति है जो ईसा पूर्व की है जो लोहानीपुर से मिली थी और पटना संग्रहालय में सुरक्षित है। किसी मन्त्री या विद्वान् ने पहले ही आने की स्वीकृति नहीं दी, फिर भी उनके नाम से पोस्टर छापना और भीड़ इकट्ठी करना, फिर झूठ बोलना कि अचानक उनका फ़ोन आया कि वे आ नहीं रहे हैं। कार्यक्रम 10 बजे से शुरु होना पहले से निश्चित है, लेकिन उसे 9 बजे का कहकर प्रचारित करना। झूठी उद्घोषणाएँ करना करवाना। इस तरह की बहुत सारी बातें ऐसी भी हैं जिन्हें हम आम जीवन में उचित नहीं समझते, किन्तु धर्म-क्षेत्र में बिना किसी डर के बल्कि ज्यादा उत्साह के साथ करते हैं। कुतर्क देते हैं-धर्म की रक्षा के लिए यह जरूरी है। हमारे झूठ बोलने से यदि तीर्थ का विकास हो रहा है तो हम क्या गलत कर रहे हैं? हम अपने लिए तो झूठ बोल नहीं रहे, धर्म के लिए बोल रहे हैं ...आदि। सत्याणुव्रत क्या यहाँ के लिए नहीं है?

चोरी

मन्दिर-निर्माण के लिए नकली कागज तैयार करवाना, सरकारी या श्रावक की जमीन पर कब्ज़ा करना, बिना टैक्स दिए बिना पक्की रसीद के सामग्री खरीदना, मज़दूर राजमिस्त्री को उचित पारिश्रमिक न देना, जितना दान बोला उससे कम देना, किसी और के दान को अपने नाम से बताकर यश लूटना, मन्दिर कमेटी पर अपना प्रभुत्व जमाना, कब्ज़ा करना, हिसाब में हेर-फेर करना, धर्म के धन का प्रयोग अपने व्यापार में करना, जिस मद में धन आया उस मद में उसका व्यय न करके बिना पूछे उसे अन्य मद में खर्च करना। दान दातार को उसकी कच्ची रसीद देना या कुछ भी न देना। कोई दान का अभिलाषी नहीं है, जबरदस्ती उसके नाम की घोषणा करना। ट्रस्ट के पैसे को शेयर बाजार में लगवाना, कमीशन लेना। दूसरे की पुस्तक या निबन्ध को अपने नाम से छपवाना। इसके अलावा भी अनेक प्रकार की चोरियाँ धर्म-क्षेत्र में धर्म के नाम पर होती रहती हैं। क्या इनसे बचा नहीं जा सकता? अस्तेय अणुव्रत क्या यहाँ के लिए नहीं हैं? प्रभावना के नाम पर हम जो यह सब कुछ करते हैं क्या यह धर्म की सच्ची प्रभावना है? विचारना चाहिए। अचौर्याणुव्रत क्या यहाँ नहीं होना चाहिए?

कुशील

पूजा-पाठ के फल में इन्द्रिय-सुखों की कामना करना, धर्म-तीर्थ क्षेत्र में आकर भी लौकिक फिल्में देखना, आपस में काम-भोग की चर्चा करना, पंचकल्याणक जैसे कार्यक्रमों में भी रात्रि में फूहड़ कवि सम्मेलन करवाना, तीर्थ क्षेत्रों में हनीमून मनाना, कार्यक्रमों में नयन-मटक्के करना आदि अनेक कार्य हैं जो हम यहाँ भी वैसे ही करते हैं जैसे संसार के अन्य स्थलों में करते हैं। धर्मशाला का सादा शुद्ध भोजन नहीं रुचता तो बाहर की दुकानों में अशुद्ध और अभक्ष्य पदार्थ का सेवन करते हैं। धर्म-तीर्थ, मन्दिर आदि में भी अमर्यादित वस्त्र पहनकर आते हैं। इसके लिए कुतर्क दिए जाते हैं कि यदि ऐसा नहीं होगा तो नयी पीढ़ी तीर्थ क्षेत्र आएगी ही नहीं आदि आदि। चाहे कोई भी तर्क-कुतर्क दे लीजिये, लेकिन यह भी तो सोचिये यदि यहाँ भी ऐसा ही हो रहा है तब धर्म की शिक्षा देने के लिए तो कोई जगह बचेगी ही नहीं। धर्म तीर्थ क्षेत्र में हम पञ्चेन्द्रिय के भोगों से निवृत्ति सीखने आते हैं या उनकी पूर्ति के लिए? ये हमें ही विचार करना है। हम व्यवस्थाएँ नहीं बदल सकते, लेकिन खुद को बचा तो सकते ही हैं न। क्या यहाँ ब्रह्मचर्याणुव्रत का प्रयोग नहीं होना चाहिए?

परिग्रह

आसक्ति को परिग्रह कहते हैं। लेकिन संस्था, मन्दिर, ट्रस्ट के पदों को अपना मानना, उसके लिए

लड़ना, षड्यन्त्र करना, उस पर जमे रहने के लिए तरह-तरह के अनैतिक उपाय करना-यह सब परम परिग्रह है। जहाँ देह को भी अपना नहीं कहा, अपना खुद का मकान-ज़मीन आदि से भी आसक्ति को परिग्रह कहा वहाँ इन समाज की संस्थाओं में आसक्ति, वह भी लड़ाई-झगड़े के साथ। क्या यह परिग्रह रूपी महापाप नहीं है? जबरदस्ती कभी-भी किसी-भी धार्मिक सामाजिक पद पर नहीं बैठना चाहिए, धर्म-बुद्धि से तब बैठना चाहिए, जब समाज द्वारा जबर्दस्ती आपको बैठाया जाय और पद पर आकर भी बहुत ही निष्पक्ष भाव से, अनासक्त भाव से, ईमानदारी पूर्वक, बिना किसी मद के नौकर बनकर सेवा करना चाहिए, न कि मालिक बनकर और सदैव त्यागपत्र जेब में रखकर घूमना चाहिए। ट्रस्ट और मन्दिरों में अनावश्यक रूप से अत्यधिक धन भी सञ्चय नहीं होना चाहिए। दान लेते समय सिर्फ राशि की अधिकता नहीं बल्कि दाता का व्यवसाय और व्यसन सम्बन्धी जाँच-पड़ताल भी करनी चाहिए। न्यायोपार्जित धन ही सम्यक् साधन है। साधन-शुद्धि से साध्य भी शुद्ध होते हैं। जब हम मन्दिर के लिए अधिक धन इकट्ठा करते हैं तब यह सोचकर हम परिग्रह को उचित मानते हैं कि यह तो धर्म की वृद्धि के लिए है किन्तु हम यह भूल जाते हैं कि कमेटी में अशान्ति भी अन्ततोगत्वा अत्यधिक धन इकट्ठा होने के कारण से ही होती है। क्या परिग्रह-परिमाण व्रत की आवश्यकता यहाँ नहीं है?

निष्कर्ष

जिन व्रतों को हमें घर में पालने की प्रेरणा दी जाती है, उनकी परिभाषाएँ धर्म-क्षेत्र में जाते ही बदल क्यों जाती हैं? जबकि श्रावक वही है। या हमें अपनी अतृप्त कामनाओं की पूर्ति का एक सतर्क बहाना धर्म-क्षेत्र में मिल जाता है और जिन कार्यों को घर, संसार में पाप कहा जाता है उन्हीं कार्यों को धार्मिक फ्लेवर के साथ पुण्य का जामा मिल जाता है? हम किसे धोखा दे रहे हैं? समाज को? धर्म को? भगवान को? नहीं महोदय ...सिर्फ खुद को धोखा दे रहे हैं। हम ऐसा नहीं करेंगे तो धर्म कैसे चलेगा? तीर्थ कैसे बचेंगे? ...अब ये सब बहाने बाज़ी छोड़िये। किसी मनुष्य की हत्या करके उसकी मूर्ति चौराहे पर स्थापित करके उनका गुणगान नहीं किया जाता है। मनुष्य की जान बचाना प्रथम कर्त्तव्य है। धर्म की आत्मा ख़त्म करके उसकी अर्थी को कितना भी सजा लो वह शोभायमान कभी नहीं होगी। इसलिए हम सभी को अपना अहंकार त्यागकर सच्चे मन से, नैतिकता और धार्मिकता के साथ बिना धर्म की मूल भावनाओं और अणुव्रतों की बलि चढ़ाये धर्म-क्षेत्र की सेवा करना चाहिए। याद रखिये जैनधर्म के अनुसार भी आदहिदं कादव्वं अर्थात् आत्मा का हित पहले करना चाहिए ऐसा कहा है। आपके आत्महित की कीमत पर उसे भी आपकी सेवा मञ्जूर नहीं है।

मान की पूर्ति के निमित्त तो कभी भी सेवा नहीं करनी चाहिए। आपके गए बाद आपको कोई याद रखेगा इस भूल में भी रहना भूल ही है।

गर हो शौक सेवा का, जी भर के तुम करना।
मगर कोई याद रखेगा, इस गफ़लत में मत रहना।।

-जैनदर्शन विभाग, श्री लालबहादुर शास्त्री नेशनल संस्कृत विश्वविद्यालय, नई दिल्ली-110016 (दिल्ली)

क्षमा-याचना

जिनवाणी के लेखकों एवं पाठकों से हमारा घनिष्ठ सम्बन्ध है। कभी किसी लेखक की रचना प्रकाशित नहीं हो पाती है, कभी हमारे कारण या तकनीकी कारणों से पाठकों को असुविधा होती है, कभी जिनवाणी रसिकों को उनके पते पर जिनवाणी प्रेषित किए जाने पर भी नहीं पहुँचती है। इस प्रकार की सभी त्रुटियों एवं असुविधाओं के लिए सम्वत्सरी महापर्व पर हार्दिक क्षमा-याचना। **-जिनवाणी सम्पादक, मण्डल एवं कार्यालय सदस्य**

10 सितम्बर 2021
जिनवाणी 55
ISSN 2249-2011

जीवन-दृष्टि

सुखी रहने के सरल तरीके

श्रीमती अंशु संजय सुराणा

प्रवचन सभा में गुरु भगवन्त जिनवाणी का रसपान करा रहे थे। प्रभुवाणी के रसिक श्रोताओं से प्रश्न किया गया-सबसे दुर्लभ गति कौनसी? उत्तर मिला-'मनुष्यगति।' दूसरा प्रश्न किया गया-'इस मनुष्यगति का चरम लक्ष्य क्या?' सभा में से एक स्वर में उत्तर मिला 'मोक्ष।' तीसरा प्रश्न-'मोक्ष क्यों चाहिए?' उत्तर था-'वहाँ जैसा अव्याबाध सुख कहीं भी नहीं।'

इन प्रश्न-उत्तर के माध्यम से हम कह सकते हैं कि प्रत्येक जीव को सुख की ही चाहना है, दुःख की कदापि नहीं। यों तो यह संसार दुःखों का ही भण्डार है, एक दुःख का समापन होता है तो दूसरा मुँह फाड़कर सामने आ जाता है। फिर भी प्रत्येक सांसारिक प्राणी इस दुःख भूत संसार में माने जाने वाले अनित्य सुख की कामना तो रखता ही है। शाश्वत सुख तो संयम में ही मिलने वाला है। वह हर एक के भाग्य में नहीं, हर एक के बस की बात नहीं। विडम्बना तो यह है कि साधन बढ़े, सम्पन्नता बढ़ी, फिर भी 'सुख घटा, शान्ति घटी।' उस अव्याबाध सुख तक पहुँचने के लिए तो अत्यन्त पुरुषार्थ की आवश्यकता है, पर इस मनुष्य जीवन में कुछ सरल तरीके अपनाकर सुख से जीवन व्यतीत किया जा सकता है। 'स' अक्षर से शुरु होने वाले इन छह तरीकों को समझेंगे तो जीवन में सुख का खज़ाना पाएँगे।

1. सुख को बाँटो

हमने आज तक सुना 'बाँटने से दुःख कम होता है।' दुःख बाँटने से मन हल्का हो जाता है। पर आज के युग में इस सूक्ति के सन्दर्भ में नज़रिया बदलना होगा। सुख को बाँटो और दुःख को एकान्त में साधो। कारण कि जब आप अपनी तकलीफ़ किसी के साथ बाँटते हैं तो कुछ बिरले ही होते हैं जो उसका उचित समाधान देंगे, वरना तो आपके दुःख की चर्चा एक मुख से निकलकर सौ मुख तक पहुँच जाती है, कितने ही लोग आपके दुःख को जानकर या तो आपको दीनभावना से देखेंगे या फिर उपहास करेंगे और आपका वही दुःख अब गुणाकार होकर आपके सामने आएगा, फिर भी सहना तो आपको ही है, दूर करने का प्रयत्न भी जब आपको ही करना है तो एकान्त में ही सह लो।

जबकि सुख को वितरित करना इसके बिल्कुल विपरीत स्थिति है। दुःख को अकेले झेलकर आनन्द प्राप्त होगा, क्योंकि दुःख में अकेले रहने से दुःख विस्मृत होने से थम जाता है और सुख में औरों को सम्मिलित करने से सुख विस्तृत हो जाता है। यदि हम प्राप्त साधनों का सदुपयोग कर दूसरों को सुख पहुँचाने का प्रयत्न करते हैं तो निश्चय ही 'साता वेदनीय' का बन्ध करते हैं और सुख-प्राप्ति के अधिकारी बनते हैं।

ग्लानि भाव से प्रतिदिन, क्यूँ दुःख की माला फेरना
बिखेरो खुशियों की सुगन्ध, क्यूँ गम की दुर्गन्ध बिखेरना।
दुःख संसार का और सुख आत्मा का स्वभाव है
दुःख में भी सुख से रहना सिखा दे,
जिनवाणी का ऐसा प्रभाव है।।

2. सहनशीलता

मनुष्य जहाँ रहता है और जिन व्यक्तियों के साथ रहता है, उनके विचारों में, व्यवहार में, इच्छाओं में और संस्कार में विविधता होती है। इस विविधता में ही समता के भाव का अनुसन्धान सहनशीलता है। बहुत कठिन होता है प्रतिकूलता को सहन करना, क्योंकि न जाने कौनसा निमित्त हमें समता से विषमता के मार्ग पर ले जाए। सुखी बनना है तो पहले सहनशील बनना पड़ेगा। जब हम प्रतिकूल परिस्थितियों को सहने में नाकाम हो

जाते हैं तो हमारा दिल-दिमाग अस्थिर और बेचैन हो जाता है। परिणामस्वरूप होती है दु:ख की वृद्धि। प्रश्न उठता है, आखिर कितना सहन करें? आचार्यप्रवर श्रद्धेय श्री हीराचन्द्रजी म.सा. फरमाते हैं-जब तक मुक्ति प्राप्त न हो जाए, तब तक सहन करो। जितना-जितना सहन करते जाओगे उतना-उतना सुख समीप आता जाएगा।

सुखी बनना है तो सहना सीख लेना,
कहीं चुप रहना तो कहीं कहना सीख लेना।
प्रेरणा लेकर महावीर और गजसुकुमाल से,
सहनशील बन सुख के फल चख लेना।।

3. श्रद्धा रखो कर्मसिद्धान्त पर

जब कभी जीवन में लाभ के स्थान पर हानि, सुख के स्थान पर दु:ख और भलाई के स्थान पर बुराई मिले तब निमित्त को दोष देना छोड़कर उपादान का दोष स्वीकार करो। अपने दिल और दिमाग में एक बात पूर्णतया स्पष्ट होनी चाहिए कि यह सब अकारण नहीं है, अपितु मेरे ही पूर्वकृत कर्मों का परिणाम है। हम सभी कर्मों की डोरी के बन्धन में जकड़े हुए हैं। जिस दिन कर्मसिद्धान्त पर सम्पूर्ण श्रद्धा हो जाएगी कि जब मेरे ही कर्म प्रतिकूल हैं तो सामने वाला दोषी नहीं हो सकता। उस दिन सारे दु:खों का भार हल्का हो जाएगा। प्रतिकूलता में सुखी रहने की सबसे श्रेष्ठ राह यही है कि प्रत्येक दु:ख के लिए स्वयं को उत्तरदायी स्वीकार करो।

बीज पाप का बोया है सजा तो भुगतनी है
क्यूँ देना अन्य को दोष, यह तो स्वयं की करनी है
छोड़ निमित्त, उपादान को माने, प्रतिकूलता हँस के झेलनी है।
कर्मसिद्धान्त पर श्रद्धा ही, अनन्त सुखों की जननी है।

4. समभाव रहे अपेक्षा और उपेक्षा में

यह सत्य है कि दूसरों को अपनत्व और प्रेम देने से या दूसरों के लिए कुछ अच्छा करने से हम दु:खी नहीं होते। हम दु:खी होते हैं जब हम उस अपनेपन और प्रेम के पीछे अपेक्षा रखते हैं और जब अपेक्षा टूटती है तब दु:ख अवश्य मिलता है। पारस्परिक तनाव और कलह से बचने का सरल तरीका है-किसी से भी अपेक्षा मत रखो। आध्यात्मिक कवि आनन्दघनजी कहते हैं- 'आशा औरन की क्या कीजै, ज्ञान सुधारस पीजै।' अर्थात् रे मन! तू दूसरों की आशा पर क्यों जी रहा है। इन अपेक्षाओं को छोड़, ज्ञान रूपी अमृत पी तभी सुख शान्ति का अधिकारी बनेगा। तनाव और निराशा का उद्गम बिन्दु अपेक्षा है। अपेक्षा कम रखेंगे तो प्रसन्नता जरूर मिलेगी।

और जब कभी जीवन में उपेक्षा का सामना करना पड़े तब भी उसे नज़रअन्दाज करना सीखना होगा जब किसी कार्य के सन्दर्भ में आपसे कुछ न पूछा जाए तब यही चिन्तन चलना चाहिए, अच्छा हुआ जो मुझसे सलाह नहीं माँगी, नहीं तो व्यर्थ ही कर्मबन्ध होता। यदि बुरा होता तो भी जिम्मेदार ठहराया जाता। इस तरह उपेक्षा की स्वयं ही उपेक्षा करना सीख लो, आनन्द की बरसात में भीग जाओगे।

बिना रखे अपेक्षा किसी से,
बस अपने कर्त्तव्य निभाते जाओ।
फिर सामने कैसी भी हो परिस्थिति,
हर समय प्रसन्नता ही पाओ।।

5. सकारात्मक सोच

अपनी सोच में सकारात्मक भाव लाकर दु:ख, तनाव, डिप्रेशन को कम किया जा सकता है। जो दूसरों के लिए अच्छा करने के भाव रखते हैं वे तनावग्रस्त नहीं होते। 'सर्वे भवन्तु सुखिन: सर्वे सन्तु निरामया:' का उद्घोष हमेशा अन्तर्मन से निकलता रहे। हर जीव के प्रति मैत्री और करुणा की भावना का विकास हो। व्यक्ति के पास देने के लिए बहुत कुछ है, पर चाहिए उदारता के भाव। हर रात को 10 मिनिट के लिए चिन्तन करें कि जिन वस्तुओं पर हमारा स्वामित्व है, जो ज़िन्दगी हम जीते हैं वैसे जीना करोड़ों लोगों का सपना होता है, फिर हम क्यों उससे अधिक की चाह में वर्तमान को दु:ख से भरें। सुख या दु:ख का मुख्य आधार परिस्थिति नहीं मन:स्थिति है। परिस्थिति पुण्य पर निर्भर

है और मन:स्थिति मन पर। यदि प्रतिकूल स्थिति को सहजता से स्वीकारें तो दु:ख भी सुख में परिवर्तित हो सकता है। कई बार अनुकूल परिस्थिति होने पर भी मन विपरीत हो तो सुख में भी दु:ख का ही अहसास होता है, क्योंकि सृष्टि को नहीं दृष्टि को बदला जा सकता है।

सकारात्मक सोच ऊर्जा लाती है,
सकारात्मक सोच जीवन सजाती है।
सकारात्मक सोच दु:ख मिटाती है,
सकारात्मक सोच ही हर राह आसान बनाती है।।

6. साधनों की इच्छाओं को कम करें

सुख वस्तुओं को एकत्रित करने में नहीं वरन् उन्हें सीमित करने में है। वस्तुएँ जीवन में सुविधाएँ देती हैं, पर जीवन वस्तुओं के लिए नहीं बना। जैनदर्शन के अनुसार तो जो सुख सन्तोष में है वह परिग्रह में कदापि हो ही नहीं सकता। तृष्णा का गड्ढा कभी भर ही नहीं सकता। वस्तुएँ बाहर का विषय है और सुख भीतर का। इसलिए अन्त:करण में भीतर की दृष्टि खोलें, तृष्णा कम होते ही सुख की प्राप्ति अवश्य होगी।

सुख तो भीतर ही है,
बस आनी चाहिए उसे खोजने की कला।
आसक्ति छोड़ें साधनों की,
बाहरी वस्तुओं से नहीं होता भला।

या तो मन को धर्म के साथ जोड़कर अपनी समझ को सम्यक् बना ले, या फिर आए हुए दु:खों को तिलाञ्जलि न देकर मन से स्वीकार कर लें तो फिर हम इस जीवन में प्रत्येक क्षण, प्रत्येक परिस्थिति में सुखों से आप्लावित हो सकेंगे।

-एस 149, महावीर नगर, टोंक रोड़, जयपुर (राज.)

धन-दौलत की मदहोशी में, क्यों करता है मनमानी

श्री मोहन कोठारी 'विनर'

धन-दौलत की मदहोशी में, क्यों करता है मनमानी,
भूल गया क्यूँ तू बावरे, घट रही तेरी पुण्यवानी।
धन-दौलत की मदहोशी में.....।।टेर।।

परिणयोत्सव है मंगल कारज,
आडम्बर की क्या जरूरत
अपनी वाह वाही के खातिर,
'प्री वेडिंग' का भोंडा प्रदर्शन।
कहाँ खो गया जैनत्व तुम्हारा?
चाहता क्यों है बरबादी,
धन-दौलत की मदहोशी में.....।।1।।

'कोरियो ग्राफर' को रखना तो, खतरे को आमन्त्रण है,
लाज, शर्म की उड़े धज्जियाँ, नहीं अपना यह वर्तन है।
दु:खियों की सेवा में धन दे, बन जा तू सच्चा दानी,
धन-दौलत की मदहोशी में.....।।2।।

भाँति-भाँति के नये रिवाज़ों को, क्यों तू है अपना रहा,
बच्चों को खुश करने खातिर, संस्कारों को गँवा रहा।
संस्कारों को रखले सुरक्षित, कहते हमको हैं ज्ञानी,
धन-दौलत की मदहोशी में.....।।3।।

श्रेष्ठिवर्य कहलाने वालों, नेकी के तुम काम करो,
व्यर्थ दिखावे में पड़ करके, मत समाज बदनाम करो।
नई पीढ़ी खुशहाल रहे बस, करना हमको रखवाली,
धन-दौलत की मदहोशी में.....।।4।।

इतना ऊँचा धर्म मिला है, फिर क्यों ऐसे काम अरे,
भूल गया क्यों गौरव गरिमा, सोच जरा अंजाम अरे।
महावीर के भक्तों जागो, याद करो तुम जिनवाणी,
धन-दौलत की मदहोशी में.....।।5।।

व्यर्थ दिखावा और आडम्बर, इस पर रोक लगाना है,
ऊँची है पहचान हमारी, हमको उसे बचाना है
सीधा-सादा जीवन जीना, होता है यह सुखकारी,
धन-दौलत की मदहोशी में.....।।6।।

-जनतरा साड़ी सेण्टर, फरिश्ता कॉम्प्लेक्स, स्टेशन रोड़, दुर्ग-491001 (छत्तीसगढ़)

10 सितम्बर 2021
जिनवाणी 58
ISSN 2249-2011

चिन्तन

अशरण भावना

श्री लड्डूलाल जैन (देवली वाले)

भावना (अनुप्रेक्षा) किसे कहते हैं?

किसी वस्तु या विषय का बार-बार चिन्तन करना भावना कहलाती है। भावनाएँ बारह होती हैं। ये बारह भावनाएँ संसार, देह और भोगों से वैराग्य उपजाने वाली हैं तथा तत्त्व और धर्म-ध्यान की कारण हैं। संसारादि से वैराग्य अथवा उदासीनता के बिना धर्म-ध्यान और तत्त्वाभ्यास में लगना सम्भव नहीं है।

अशरण भावना

दूसरी भावना अशरण भावना है। इस जगत् में जीवन का कोई भी शरणभूत नहीं है। मरणकाल आने पर कोई भी चेतन-अचेतन पर पदार्थ जीवन की रक्षा करने वाला नहीं है। आयु कर्म क्षय होने पर मरण होता ही है। आयु कोई किसी को देने में समर्थ नहीं है। निश्चय से दर्शन, ज्ञान, चारित्र रूप मेरा आत्मा ही मेरी शरण है, क्योंकि वह सदा शाश्वत एवं अविनाशी है।

व्यवहार से मेरा आत्मबल बढ़ाने वाले तथा भय दूर करने वाले देव-गुरु-धर्म एवं पञ्चपरमेष्ठी शरण हैं, संसार में अन्य कोई पदार्थ शरणभूत नहीं है, ऐसा बारम्बार, चिन्तन, मनन करना अशरण भावना है।

छन्द

सुर असुर खगाधिप जेते, जो मृग हरि काल दलेते।
मणि मन्त्र, तन्त्र बहु होई, मरते न बचावे कोई।।
दल, बल, देवी, देवता, माता-पिता परिवार।
मरती विरिया जीव को, कोई न राखनहार।।

जिस प्रकार हरिण को सिंह मार डालता है, उसी प्रकार इस संसार में जो देवेन्द्र, असुरेन्द्र, खगेन्द्र अर्थात् पक्षियों के राजा आदि, सेनापति, माता-पिता, देव आदि हैं, उन सबका काल अर्थात् मृत्यु नाश करती है। चिन्तामणि आदि मणि, मन्त्र, यन्त्र, तन्त्र आदि कोई भी उन्हें मृत्यु से नहीं बचा सकते हैं।

यहाँ ऐसा समझना चाहिये कि निज आत्मा ही शरण है, उसके अतिरिक्त अन्य कोई भी शरण नहीं है। कोई भी जीव अन्य जीव की रक्षा करने में समर्थ नहीं है, इसलिये दूसरे (पर) से रक्षा की आशा करना व्यर्थ है। सर्वत्र-सदैव एक निज आत्मा ही स्वयं की शरण है। आत्मा, निश्चय से मरता ही नहीं है, क्योंकि वह अनादि, अनन्त है। स्वयं सन्मुखतापूर्वक सम्यग्दृष्टि जीव वीतरागता की शुद्धि की वृद्धि करता है, यही अशरण भावना है।

छन्द

जिन्दगी इक पल कभी कोई बढ़ा नहीं पायेगा।
रस-रसायन सुत सुभट कोई बचा नहीं पायेगा।।
सत्यार्थ है बस बात यह कुछ भी कहो व्यवहार में।
जीवन-मरण अशरण शरण कोई नहीं संसार में।।

यह जीवन जब तक है तब तक ही है इसको एक पल भी कोई बढ़ा नहीं सकता, जब मौत आ जायेगी तो रस-रसायन भी नहीं बचा पायेंगे, न ही पुत्र और सुभट बचा पायेंगे, व्यवहार से हम कुछ भी कहें, परन्तु सत्य तो यही है कि संसार में कोई भी शरण नहीं है।

छन्द

कालसिंह ने मृग चेतन को घेरा भव वन में।
नहीं बचावनहारा कोई यों समझो मन में।।
मन्त्र-तन्त्र सेना धन सम्पत्ति राजपाट छूटे।
वश नहीं चलता काल लुटेरा कायनगरि लूटे।।
चक्र रतन हलधर-सा भाई काम नहीं आया।
एक तीर के लगत कृष्ण की विनश गई काया।।
देव-धर्म-गुरु शरण जगत् में और नहीं कोई।
भ्रम से फिरै भटकता चेतन यूँ ही ऊमर खोई।।

काल रूपी सिंह ने जीव मृग को इस संसार रूपी वन में घेर लिया है। इस जीव रूपी मृग को काल रूपी शेर से बचाने वाला कोई नहीं है-यह बात हमें अच्छी तरह समझ लेनी चाहिये। जब काल रूपी लुटेरा काया रूपी नगरी को लूटता है, तब किसी का वश नहीं चलता। मन्त्र-तन्त्र सब रखे रह जाते हैं, सेना खड़ी देखती रह जाती है और राजपाट तथा धन-सम्पत्ति सब छूट जाती है।

चक्र रत्न और बलदेव जैसा भाई भी काम नहीं आया और श्रीकृष्ण की काया एक तीर के लगने मात्र से नष्ट हो गई। अत: इस जगत् में एकमात्र देव, गुरु और धर्म ही परम शरण है और कोई नहीं। शरण की खोज में इस जीव ने सम्पूर्ण उम्र भ्रम से भटकते हुए व्यर्थ में ही खो दी है।

सम्पत्ति और शक्ति से सर्वाधिक सम्पन्न मनुष्यों में चक्रवर्ती होता है और देवों में इन्द्र। जब नव-निधियों एवं चौदह रत्नों का धनी चक्रवर्ती एवं वज्रधारी इन्द्र भी सुरक्षित नहीं है तो हम साधारण जगत् जन की क्या बात करें?

तात्पर्य यह है कि जिसके पास सुरक्षा के इतने साधन हैं उसे भी समय आने पर देह छोड़नी ही पड़ती है। इस प्रकार अशरण भावना में संयोगों और पर्यायों की क्षणभंगुरता का, अशरणता का गहराई से बोध कराया जाता है।

प्रश्न-इस जगत् में जीव परस्पर रक्षा करते तो दिखाई देते हैं, फिर अशरण क्यों कहा?

उत्तर-जगत् में किसी की शरण या रक्षा अपने कर्मोदय के अनुसार प्राप्त होती है। कोई किसी के उदय को बदलने में समक्ष नहीं है। अशुभ कर्म के तीव्र अनुभाग से उपजा फल जीव को भोगना ही होता है। आयु नष्ट होने पर मरण होता ही है, मृत्यु से बचने में जीव को किसी की शरण नहीं है।

संसार में जिनकी शरण माना जाता है, ऐसे विष्णु (नारायण), महेश (रुद्र), चक्रवर्ती आदि स्वयं काल पाकर नष्ट हो जाते हैं। ऐसे जगत् में कौन, किसकी शरण होवे?

मरण काल आने पर कोई भी देव, मन्त्र, तन्त्र, औषधि, तनुरक्षक शस्त्र, भूत-पिशाच आदि व्यन्तर, मणि आदि कोई भी जीवन को बचाने में समर्थ नहीं हैं।

निश्चय से सम्यग्दर्शन-ज्ञान-चारित्र रूप अपना स्वरूप ही हमें शरणभूत है। ऐसा बारम्बार चिन्तन करना-विचारना अशरण भावना (अनुप्रेक्षा) है।

-139, महावीर नगर, इन्दौर (म.प्र.)

सुनो दु:ख भञ्जन की पुकार

डॉ. रमेश 'मयंक'

जीवन में अनमोल-वाणी का होता चमत्कार,
वीतराग की वाणी श्रवण से बदल जाता संसार,
पाप विसर्जन पथ पर बढ़ने में सहयोगी संस्कार।
सुनो दु:ख भञ्जन की पुकार।।1।।

गुरुवर के फरमाने से दु:ख को दु:ख न माना,
सुख की खान जानकर आगे की तरफ बढ़ जाना,
मिलता नया अनुभव सहज खुल जाता बन्द द्वार।
सुनो दु:ख भञ्जन की पुकार।।2।।

तप-त्याग संयम-साधना मंगल जीवन के हेतु,
काम-क्रोध, मद-लोभ-मोह पीड़ादायक राहु-केतु,
कटेंगे कर्म-बन्धन फिर आगे बढ़ाएगी पतवार।
सुनो दु:ख भञ्जन की पुकार।।3।।

लेकर अध्ययन का सहारा करणी करो विशेष,
महान् चरणों की सेवा कर चिन्तन मनन उपदेश,
चरणों में स्थान सुरक्षित हृदय में उमड़ता प्यार।
सुनो दु:ख भञ्जन की पुकार।।4।।

-बी 8, मीरा नगर, चित्तौड़गढ़-312001 (राजस्थान)

10 सितम्बर 2021
जिनवाणी 60
ISSN 2249-2011

संस्मरण

गुरुश्रद्धा का प्रभाव

श्रीमती पूजा जैन

रत्नसंघ के गौरव महामहिम आचार्यप्रवर श्री हीराचन्द्रजी म.सा. अधिकांश समय आत्मज्ञान, आत्मध्यान और आत्मसमाधि में निमग्न रहते हैं। ध्यान, मौन, स्वाध्याय, माला आदि में ही लगे रहते हैं। श्रावक-श्राविकाओं से भी वे हमेशा यही अपेक्षा रखते हैं कि वे भी जप, तप, सामायिक और स्वाध्याय को अपने जीवन में अपनाएँ। गुरुदेव के सम्बन्ध में कई प्रसङ्ग एवं विस्मयकारी घटनाएँ सुनी हैं और पढ़ी भी हैं, लेकिन इस कोरोना काल में मैंने खुद गुरुदेव की महिमा को देखा है।

बात कोरोना की प्रथम लहर की है। चारों ओर मौत का ताण्डव फैला हुआ था। सभी अस्पताल मरीजों से भरे थे। उसी दौरान मेरी सासू माँ (श्रीमती शारदादेवी जी) को कोरोना हो गया। ऑक्सीजन लेवल 78 रह गया था। सभी घबराये हुए थे, क्योंकि हॉस्पिटल में बैड खाली नहीं थे। एक हॉस्पिटल में व्यवस्था भी हुई, लेकिन शर्म की बात यह थी कि इस कोरोना काल में कुछ डॉक्टरों ने लोगों की ज़िन्दगी को धन बटोरने का साधन बना लिया। वहाँ मम्मीजी को सही उपचार दिया ही नहीं गया और उनकी स्थिति गिरती चली गई। मम्मीजी वहाँ पर गुरुदेव का स्मरण किया करती, हस्ती-हीरा चालीसा बोलती रहती। एक दिन मम्मीजी ने गुरुदेव का ध्यान लगाया और निवेदन किया कि गुरुदेव मुझे यहाँ से निकालो और फिर अगले दिन हमारे पापाजी (श्री सुरेशचन्दजी जैन (सहाड़ी वाले) महासती श्री शशिप्रभाजी म.सा. के सांसारिक चाचाजी) और मेरे पति (श्री अरुण कुमारजी) ने उन्हें दूसरे हॉस्पिटल में शिफ्ट करवा दिया। मेरे जेठजी (श्री मनीष कुमारजी जैन) एवं देवर (श्री अमित कुमारजी जैन) भी कोरोना पॉजिटिव थे। जेठजी हॉस्पिटल में एडमिट थे और देवर घर पर क्वारेन्टाइन थे। दोनों मम्मीजी को लेकर परेशान और विवश थे, क्योंकि वे चाहकर भी क्वारेन्टाइन होने के कारण बाहर नहीं आ सकते थे। गुरुकृपा से पूरे परिवार का सहयोग रहा। समझ नहीं आ रहा था क्या करें? पर एक विश्वास सभी के मन में था कि गुरुदेव की कृपा से सब कुछ ठीक ही होगा। दूसरे दिन हॉस्पिटल जब ले जाया गया, उस समय मम्मीजी के फेफड़े लगभग पूरे (24/25) खराब हो चुके थे। हालात ये थे कि डॉक्टर ने भी कह दिया कि बहुत मुश्किल है, बाकी करने वाले ईश्वर हैं। इन सबके बावजूद पापाजी नियमित रूप से प्रतिदिन सामायिक-स्वाध्याय करते। चाहे हॉस्पिटल से आकर करते या जल्दी ही सुबह कर लेते, लेकिन एक भी दिन ऐसा नहीं था जब उन्होंने सामायिक को छोड़ा हो। धन्य है मेरे गुरुवर जहाँ डॉक्टर ने आस छोड़ दी, वहीं मम्मीजी की तबीयत में सुधार आने लगा। कुछ दिन बाद वापस मम्मीजी की तबीयत ज्यादा खराब हो गई। उनकी दिमागी हालत भी खराब हो गई। वे अचानक कहने लगीं कि मैंने संथारा कर लिया है। उन दिनों व्याख्यात्री महासती श्री मुक्तिप्रभाजी म.सा. आदि ठाणा नित्यानन्द नगर स्थानक में विराज रहे थे। वे हमारे निवेदन पर उनको समझाने हेतु अस्पताल भी गये। मंगल पाठ भी फरमाया। महासती मुक्तिप्रभाजी म.सा. की असीम कृपा रही। वे प्रतिदिन मम्मीजी को मांगलिक फरमाते थे। मम्मीजी उस वक्त अपने हाथ जोड़ लेती थी कि म.सा. इस वक्त मांगलिक फरमा रहे होंगे। गुरुदेव से मांगलिक फरमाने का निवेदन करवाया गया था और उन्होंने भी निश्चित समय पर मांगलिक फरमाई थी। गुरुदेव की कृपा से कुछ दिनों में तबीयत में सुधार होने लगा। लगभग तीन माह में अस्पताल में रहकर मम्मीजी बहुत कमजोर हो गईं, यहाँ तक कि उनके लिए करवट

बदलना भी सम्भव नहीं था। पर गुरुदेव की कृपा से वे एक डेढ़ माह में बहुत अच्छी हो गई। खुद डॉक्टर भी आश्चर्यचकित थे कि कोरोना काल में ऐसा पहला केश था जो पूरे फेफड़े खराब होने पर भी इतनी जल्दी एकदम ठीक हो गया। बाइ फेब मशीन, ऑक्सीजन आदि सब हट चुके थे।

ठीक होते ही मम्मीजी गुरुदेव के दर्शन के लिए व्याकुल हो उठी। हम गुरुदेव के दर्शन हेतु सपरिवार पीपाड़ गए। कोरोना के कारण अब तक गुरुदेव के दर्शन दूर से ही हो रहे थे। आश्चर्य की बात थी कि जिस दिन हम गये उसी दिन से ही गुरुदेव ने सामीप्य से दर्शन की अनुमति प्रदान की। मम्मीजी दो सीढ़ी भी खुद नहीं चढ़ पाती थी। पर गुरुदेव की असीम कृपा देखकर आँखों में विश्वास नहीं हुआ। मन गदगद हो गया, आँखें श्रद्धा से नम हो गईं। मम्मीजी 1 या 2 नहीं बल्कि पूरी सीढ़ियाँ चढ़कर ऊपर दर्शन करने गईं। दर्शन करने पर गुरुदेव ने अपनी मधुर एवं कोमल मुस्कुराहट बिखेर दी।

धन्य हैं मेरे गुरुवर! ऐसे गुरुवर को कोटिश: वन्दन! आनन्द ही आनन्द गुरुचरणों में आनन्द!

-पुत्रवधू श्री सुरेशचन्दजी जैन (सहाड़ी वाले) ए 4 1 (एन), नित्यानन्द नगर, क्विंस रोड़, जयपुर

प्रवचन-कण

व्याख्यात्री महासती श्री सुमनलताजी म.सा.

(उत्तम स्वाध्याय भवन, महारानी फार्म, जयपुर में फरमाए गए प्रवचनों में से संकलित विचार। -डॉ. धर्मचन्द जैन)

1. जिनवाणी को कानों से सुनकर प्राणों तक पहुँचाने में जिनवाणी को सुनने की सार्थकता है।
2. अभी जो शुभ भाव आये हैं, वे पुन: आयेंगे या नहीं, इसका भरोसा नहीं है। इसलिए शुभभाव आने पर शुभकार्य कर डालो।
3. बुद्धि वही सार्थक है जो धर्म से जोड़ती है।
4. अन्न पुण्य के स्थान पर भोजन पुण्य क्यों नहीं कहा? क्योंकि भोजन में मांसाहार भी शामिल होता है, जबकि अन्न पुण्य में वह नहीं होता।
5. किसी का नियम-प्रत्याख्यान निभाने में हम सहायक बनते हैं तो कर्मों की निर्जरा होती है।
6. जीव को भटकाने वाला मन है। यह शुभ भावों में कम एवं बुरे भावों में ज्यादा बहता है।
7. संकट आते हैं हमारी परीक्षा करने के लिए। संयम हमारे जीवन को चमकाता है।
8. जीवन में शान्ति और मृत्यु में समाधि प्राप्त करनी है तो पुण्य कीजिए।
9. मन-पुण्य से साधक संसार को सीमित करता है।

देखा कमाल

श्री नरेन्द्र कक्कड़

देवों में देव अनेकों हैं, अरिहन्त देव का क्या कहना।
दानों में दान अनेकों है, अभयदान का क्या कहना।।

जैनधर्म एवं परम्परा में दान का महत्त्वपूर्ण स्थान है, किन्तु अभयदान सर्वश्रेष्ठ दान बताया गया है। कोरोना काल में लेखक सहित कई श्रावक-श्राविकाओं ने साक्षात् अनुभव किया है एवं देखा है। इसके साथ ही डॉक्टरों का अनुभव भी इसके आगे फेल होता देखा गया। कोरोना पीड़ित परिजन अस्पताल गए, वहाँ से ऑक्सीजन फिर आईसीयू एवं फिर वेण्टीलेटर पर पहुँचने पर डॉक्टरों ने अपने अनुभव से बताया कि स्थिति क्रिटिकल है। श्रद्धावनत श्रावक-श्राविकाओं ने तुरन्त 1-2, 5-7 बकरों को अभयदान का संकल्प लिया और बीमार परिजनों में सुधार दिखने लगा। डॉक्टर भी अचम्भित थे। यह सच था कि जो जीव बचाया गया उसके वाइब्रेशन रोगी को मिलने लगे। प्रत्यक्ष देखा सुना एवं साक्षात् अनुभव किया गया। कोरोना काल में जब पैसा, परिजन, डॉक्टर सब विवश खड़े थे तभी अभयदान ही संकट-मोचक बना। सुख देने पर सुख मिलता ही है।

-जयपुर (राज.)

10 सितम्बर 2021
जिनवाणी 62
ISSN 2249-2011

स्वास्थ्य-विज्ञान

अच्छे स्वास्थ्य हेतु प्राणों का संयम आवश्यक

डॉ. चंचलमल चोरड़िया

शुद्धात्मा-अनन्त ज्ञान, अनन्त दर्शन, अनन्त शक्ति और अनन्त आनन्द का स्रोत होती है तथा उस अवस्था में स्वास्थ्य की कोई समस्या नहीं होती। जितनी-जितनी उसकी मलिनता, उतनी-उतनी स्वास्थ्य की समस्या। परन्तु जब वह कर्मों के आवरणों से आच्छादित हो मलिन अथवा अपवित्र बन जाती है तो कर्मों के आवरण के घनत्व के अनुसार उसकी सारी शक्तियाँ सीमित हो जाती हैं।

प्राण ऊर्जा और ऊर्जा के स्रोत

जब मानव का जीव गर्भ में आता है तो उसे अपने कर्मों के अनुसार आहार, शरीर, इन्द्रिय, श्वासोच्छ्वास, भाषा और मन रूपी छह मूल ऊर्जा के स्रोत अर्थात् पर्याप्तियाँ (Biopotential Energy Source) प्राप्त होते हैं। प्रत्येक पर्याप्ति चुम्बक की भाँति अपने-अपने गुणों के अनुसार पुद्गलों को आकर्षित कर मानव शरीर का विकास करती है। जिन्हें ये शक्तियाँ पूर्ण रूप से प्राप्त होती हैं, उनका सम्पूर्ण एवं सन्तुलित विकास होता है तथा जिन्हें ये पर्याप्तियाँ आंशिक रूप में प्राप्त होती हैं उनका विकास आंशिक ही होता है।

मानव को प्राप्त 10 प्राण

चेतना के विकास में इन्द्रियों का स्वतन्त्र अस्तित्व होता है। प्राय: अन्य चिकित्सा वैज्ञानिकों ने उनकी शरीर के एक अवयव तक ही कल्पना की। उनका सम्बन्ध पञ्चतत्त्वों में से किसी तत्त्व अथवा अङ्ग तक ही सीमित कर दिया। ये जीवनी शक्तियाँ कार्य के अनुसार मुख्य रूप से दस भागों में रूपान्तरित हो मानव की समस्त गतिविधियों का सञ्चालन करती हैं। जिन्हें प्राण भी कहते हैं। प्राण जीवन को शक्ति प्रदान करते हैं। प्रत्येक प्राण अपने लिये आवश्यक पुद्गलों को आसपास के वातावरण से ग्रहण कर अपना कार्य कर सकते हैं।

श्रोत्रेन्द्रिय बल प्राण-जिससे सुनने योग्य पुद्गलों को आकर्षित करने की शक्ति प्राप्त होती है।

चक्षुइन्द्रिय बल प्राण-जिससे देखने योग्य पुद्गलों को आकर्षित करने की शक्ति प्राप्त होती है।

घ्राणेन्द्रिय बल प्राण-जिससे गन्ध लेने योग्य पुद्गलों को आकर्षित करने की शक्ति प्राप्त होती है।

रसनेन्द्रिय बल प्राण-जिससे स्वाद योग्य पुद्गलों को आकर्षित करने की शक्ति प्राप्त होती है।

स्पर्शनेन्द्रिय बल प्राण-जिससे स्पर्श योग्य पुद्गलों को आकर्षित करने की शक्ति प्राप्त होती है।

श्वासोच्छ्वास बल प्राण-जिससे श्वसन योग्य पुद्गलों को आकर्षित करने की शक्ति प्राप्त होती है।

मन बल प्राण-जिससे मनोवर्गणा योग्य पुद्गलों को आकर्षित करने की शक्ति प्राप्त होती है।

वचन बल प्राण-जिससे भाषावर्गणा योग्य पुद्गलों को आकर्षित करने की शक्ति प्राप्त होती है।

काय बल प्राण-जिससे हलन-चलन योग्य पुद्गलों को आकर्षित करने की शक्ति प्राप्त होती है।

आयुष्य बल प्राण-जिसके कारण जीव निश्चित अवधि तक किसी शरीर में रह सकता है।

सारी प्राण शक्तियाँ आपसी सहयोग और समन्वय से कार्य करती हैं, परन्तु एक-दूसरे का कार्य नहीं कर सकतीं। आँख सुन नहीं सकती, कान बोल नहीं सकता, नाक देख नहीं सकती आदि। सबमें आयुष्य

बल प्राण मुख्य होता है तथा उसके समाप्त होते ही अन्य प्राण प्रभावहीन हो जाते हैं। आयुष्य बल प्राण का प्रमुख सहयोगी श्वासोच्छ्वास बल प्राण होता है।

प्राण ऊर्जा का जितना सूक्ष्म एवं तर्कसंगत विश्लेषण महावीर दर्शन में है उतना आधुनिक चिकित्सा पद्धति में भी नहीं किया गया। इसी कारण आँख, नाक, कान आदि जड़ उपकरणों की खराबियों को दूर करने में तो आधुनिक चिकित्सकों को आंशिक सफलता मिली, परन्तु जिनमें प्राण ऊर्जा का मौलिक प्रवाह नहीं है, उनको सुधार पाने में उन्हें अभी तक सफलता नहीं मिली।

संयम ही जीवन है

स्वास्थ्य की दृष्टि से इन पर्याप्तियों और प्राणों का प्रभाव होता है। अत: प्राणों और पर्याप्तियों का संयम एवं सदुपयोग सर्वाधिक आवश्यक है। पर्याप्तियों और प्राणों के संयम का मतलब हम उनका अनावश्यक दुरुपयोग अथवा अपव्यय न करें, अपितु अनादिकाल से आत्मा के साथ लगे कर्मों से छुटकारा पाने हेतु सदुपयोग एवं सम्यक् पुरुषार्थ करें।

आहार-संयम-जीवन चलाने के लिए जितना आवश्यक हो, निर्दोष, शुद्ध सात्त्विक, भक्ष्य-अभक्ष्य का विवेक रखकर आहार-पानी आदि ग्रहण करना। भोजन को प्रसाद की भाँति प्रसन्नता पूर्वक शान्तचित्त से करना।

शरीर का संयम-शरीर की अनावश्यक प्रवृत्तियों से बचना, बिना कारण न तो चलना-फिरना, न उठना-बैठना, न सोना और न प्रमाद करना। परन्तु आत्म-विकारों को दूर कर कर्मों से मुक्ति हेतु सम्यक् पुरुषार्थ करना।

इन्द्रियों का संयम-आँख है तो दिखेगा, देखे बिना नहीं रहा जा सकता। दिखना अलग है, देखना अलग है, देखते रहना अलग है, दिखने वाले की प्रतिक्रिया करना, स्मृति रखना, कामना करना अथवा आसक्ति रखना अलग-अलग देखने के स्तर होते हैं। अत: क्या देखना और क्या नहीं देखने का विवेक ही आँख का संयम होता है। स्वाध्याय, सेवा, सन्त-दर्शन आँखों का सदुपयोग है तो काम-विकार बढ़ाने वाले साहित्य को पढ़ना एवं दृश्यों को देखना आँखों का दुरुपयोग होता है। इसी प्रकार कान है तो सुनायी देगा। परन्तु सुनायी देना अलग है, सुनना अलग है, सुनते रहना अलग है तथा सुने हुए की स्मृति, कामना रखना अलग होता है। राग-द्वेष और काम-विकार बढ़ाने वाली विकथाएँ आदि सुनना कानों का दुरुपयोग होता है। अत: कानों से क्या सुनना और क्या नहीं सुनना, इसका सम्यक् विवेक आवश्यक है। इसी प्रकार नाक, जिह्वा एवं शरीर का सदुपयोग करना चाहिए। इन्द्रियों की क्षमता से अधिक तथा अनावश्यक कार्य न लेना, वीर्य का नियन्त्रण रखना अर्थात् ब्रह्मचर्य का पालन करना, इन्द्रिय विषयों को उत्तेजित करने वाली प्रवृत्तियों एवं वातावरण से यथा सम्भव दूर रहना, इन्द्रिय संयम होता है।

श्वास का संयम-मन्द गति से पूर्ण श्वास लेना तथा पूरक और रेचक के साथ-साथ कुम्भक कर श्वास को अधिकाधिक विश्राम देना। जितना अधिक श्वास का संयम होता है, उतना व्यक्ति तनाव के कारणों से सहज बच जाता है। इससे शरीर और मन को बहुत आराम मिलता है। आवेग नहीं आते हैं। आवेग से शरीर में असन्तुलन और रोग होने की सम्भावना बढ़ जाती है।

भाषा का संयम-अनावश्यक बोलने से जीवन शक्ति क्षीण होती है। आवश्यकता पड़ने पर सभ्य भाषा में सीमित एवं मधुर बोलना अथवा मौन रहना आदि वाणी का संयम होता है। निंदा करना, चुगली करना, गाली या अपशब्द बोलना, स्वप्रशंसा करना, क्लेशकारी बोलना, झूठे कलंक, आरोप लगाना, बिना कारण पञ्चायती करना, गप्पे मारना, व्यङ्ग करना आदि वाणी का दुरुपयोग होता है। सोच समझकर तोल-तोल कर क्या, कहाँ और कैसे बोलना तथा क्यों और कहाँ चुप रहने का विवेक, भाषा का संयम होता है। मौन रखना भाषा का उत्कृष्ट संयम होता है। वाणी के

प्रकम्पन हमारे स्वास्थ्य को प्रभावित करते हैं। ध्वनि और मन्त्र चिकित्सा का आधार होता है। वाणी शरीर और मन दोनों को प्रभावित करती है।

मन का संयम–मन से अनावश्यक मनन, चिन्तन, स्मृति और कल्पनाएँ न करना अर्थात् मन की सम्यक् प्रवृत्ति करना। मनोबल कमजोर करने वाले दृश्यों को न तो देखना और न सुनना मन का संयम होता है। हिंसा, क्रूरता, घृणा, कामुकता, भय आदि मनोबल को कमजोर करने वाली प्रवृत्तियों से मन का असंयम होता है।

उपर्युक्त सभी प्राणों का सम्यक् उपयोग अर्थात् संयम स्वास्थ्य की कुञ्जी है। सभी रोगों का कारण प्राणों का असन्तुलन ही होता है।

–चोरड़िया भवन, जालोरी गेट के बाहर, जोधपुर-342003 (राज.)

बिल्ली का बच्चा

श्री अशोक कुमार जैन (हरसाना वाले)

मेरे निवास के पास एक बैंक मैनेजर मीना साहब रहते थे। उन्होंने बिल्ली पाल रख थी। उस बिल्ली ने दो बच्चों को जन्म दिया। दोनों बच्चे थोड़े से बड़े हुए तो उछल-कूद करते। दोनों बच्चे बड़ी प्रसन्नता से रहते। वे बच्चे आसपास की सभी छतों पर जाते थे। हम सब उन छोटे-छोटे बच्चों को देखकर बहुत प्रसन्न होते थे।

एक दिन उन दोनों बच्चों में से एक बच्चा छत से नीचे उतर आया और रोड़ पार कर रहा था, जैसा कि उन बैंक मैनेजर साहब की धर्मपत्नी ने बताया बिल्ली के उस एक बच्चे को किसी वाहन ने टक्कर मार दी और वह बच्चा मर गया। उस बच्चे का न बिल्ली को पता चला, न ही उस बिल्ली के दूसरे बच्चे को।

उन दोनों बिल्ली के बच्चों की माँ ने बच्चों को आत्मनिर्भर बनाने के लिए उनका साथ छोड़ दिया। जैसा कि बिल्ली पालने वाले मीनाजी ने बताया।

सायंकाल के पश्चात् उस बिल्ली के एक बच्चे ने दूसरे बच्चे को अपने पास नहीं देखा तो वह करुण आवाज में म्याऊँ-म्याऊँ करने लगा। लगभग पूरी रात वह कभी इस छत पर तो कभी दूसरी छत पर, कभी नीचे तो कभी ऊपर करुण आवाज में पुकारता रहा।

रात्रि के समय उस बिल्ली के बच्चे की करुण आवाज को सुनकर मेरे से रहा नहीं गया, किन्तु रात्रि थी उसका कोई उपाय भी नहीं हो पाता। प्रातः जब सूर्योदय हुआ तब मैंने मीना साहब से बात की तो बताया कि इस बिल्ली के बच्चे की माँ ने इन्हें छोड़ दिया है। बिल्ली कहीं दूसरी जगह चली गई है। बिल्ली का एक बच्चा एक्सीडेण्ट में मर गया है हमारे तो कुछ भी समझ में नहीं आ रहा है क्या करें? हमारा मन भी पूरी रात दुःखी रहा। तब मैंने मीनाजी से कहा- आप आश्वस्त हो जायें कि बिल्ली का दूसरा बच्चा मर गया और बिल्ली ने इसे छोड़ दिया है। उन्होंने कहा-हाँ जैन साहब! आप कुछ कर सकते हो करो अन्यथा यह बच्चा भी मर जायेगा, यह बच्चा नीचे आ गया तो कोई कुत्ता आदि जानवर मार देगा।

मेरे मन में करुणा के भाव आये और मैं उस बिल्ली के बच्चे को मीनाजी को साथ लेकर सेवा भावी संस्था 'हेल्प इन सफरिंग' महारानी फार्म पहुँचा। वहाँ के कर्मचारियों ने उस बच्चे को गोदी में लिया और कहा कि आप निश्चिन्त रहो इस बच्चे को तो हम किसी अच्छे आदमी को गोद दे देंगे और वह पाल लेगा। अगर कोई ले भी नहीं जायेगा तो हम इसको सुरक्षा प्रदान करेंगे। इस तरह से मेरे द्वारा मूक प्राणी को बचा कर सेवा का कार्य किया गया। मेरे और मीनाजी के मन को बहुत प्रसन्नता हुई।

-73/46 ए, मानसरोवर, जयपुर (राजस्थान)

ISSN 2249-2011

कृति की 2 प्रतियाँ अपेक्षित हैं

नूतन साहित्य

श्री गौत्तमचन्द जैन

जिज्ञासा समाधान (भाग-2)-लेखक एवं सम्पादक श्री धर्मचन्द जैन, **प्रकाशक एवं प्राप्ति स्थल**-सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल, सुबोध बॉयज सीनियर सैकेण्डरी स्कूल के ऊपर, बापू बाजार, जयपुर-3 (राज.) फोन नं. 0141-2575997, 2. जोधपुर-0291-2624891, 3. अहमदाबाद 9429303088, 4. बेंगलोर-9844148943, 5. जोधपुर-9461026279, 6. जलगाँव-9422591423, **प्रथम संस्करण**-2021, **पृष्ठ**-168 + 8 = 176, **मूल्य**-30 रुपये।

प्रस्तुत पुस्तक जिज्ञासा-समाधान (द्वितीय भाग) में लेखक ने 'जिनवाणी' मासिक पत्रिका में सन् 2017 से 2019 तक के अङ्कों में 'आओ मिलकर ज्ञान बढ़ायें' शीर्षक से प्रकाशित लेखों का सङ्कलन कर पुस्तक के रूप में एक स्थान पर निबद्ध किया है। प्रस्तुत पुस्तक में प्रश्नोत्तर शैली को जिज्ञासा और समाधान के रूप में अपनाया गया है, जो रुचिकर एवं क्रमबद्ध होने के साथ-साथ ज्ञानवर्धक भी है। प्रस्तुत पुस्तक कर्मसिद्धान्त और अनेक प्रकार के थोकड़ों के जिज्ञासुओं के लिए बहुत उपयोगी है।

इसमें 6 शीर्षकों के अन्तर्गत सर्वप्रथम गमा-आगति स्थान की विस्तृत चर्चा की गई है। 'गमा' का अर्थ जाना अथवा जानना बतलाया गया है। कोई भी संसारी जीव जब एक गति से दूसरी गति में जाता है, तो उसकी कैसी स्थिति होती है, उस जीव में क्या-क्या विशेषताएँ होती हैं, उनको जानना भी गमा कहलाता है। गमा के थोकड़े के अन्तर्गत 8 द्वारों के माध्यम से विस्तृत एवं विशद वर्णन सरल और सुबोध शैली में प्रस्तुत किया गया है। दूसरे अध्याय में भवस्थान का स्वरूप समझाते हुए 16 भवस्थानों के विस्तृत वर्णन से सम्बन्धित जिज्ञासाओं का समाधान किया गया है।

तीसरे अध्याय में णाणत्ता अर्थात् भिन्नता-नानात्व या अन्तर का वर्णन किया गया है। सामान्य रूप से जीव को जो बोल उस-उस भव में मिलने चाहिये, वे बोल उतने रूप में नहीं मिलना या कम मात्रा में मिलना 'णाणत्ता' कहलाता है। 9 गमों के माध्यम से णाणत्ता को समझाया गया है। चतुर्थ अध्याय में 9 गमों सहित ऋद्धि का वर्णन प्रस्तुत किया है। 24 दण्डकों में 20 द्वारों के माध्यम से ऋद्धि बतलाई गई है। पाँचवें अध्याय में अस्वाध्याय का स्वरूप, अस्वाध्याय के प्रकार, आगमों के भेद और अस्वाध्याय काल के बारे में सरल रूप से विस्तार से समझाया गया है, जो सभी श्रावक-श्राविकाओं एवं साधु-साध्वियों के लिए भी जानना आवश्यक है। अन्तिम षष्ठ अध्याय में तीन प्रकार की वन्दना एवं आवर्तन के बारे में बतलाते हुए वन्दना से प्राप्त होने वाले फल का वर्णन किया गया है। आयुकर्म और समुद्घात के बारे में भी अच्छा प्रकाश डाला गया है।

तत्त्वज्ञान की अवधारणाओं को पुष्ट करने वाली यह पुस्तक 'जिज्ञासा-समाधान द्वितीय भाग' सभी चिन्तनशील स्वाध्यायियों, मुमुक्षु भाई-बहिनों, गुरुजनों और सन्त-सतियों के लिए भी अत्युपयोगी एवं लाभदायक सिद्ध होगी।

अपभ्रंश साहित्य का इतिहास-(लेखक-प्रोफेसर प्रेम सुमन जैन, **प्रकाशक एवं प्राप्ति स्थल**-भगवान महावीर अन्तरराष्ट्रीय शोध केन्द्र, जैन विश्वभारती संस्थान (मानित विश्वविद्यालय), लाड़नूँ-341306 (राजस्थान), **प्रथम संस्करण**-2019, ISBN : 978-93-83634-44-6, **पृष्ठ**-464 + 16 = 480, **मूल्य**-950 रुपये।

प्रस्तुत पुस्तक 'अपभ्रंश साहित्य का इतिहास' लिखकर लेखक ने भारतीय साहित्य जगत् में एक कमी की पूर्ति करने का सफल और सराहनीय प्रयास किया है। लेखक ने प्रस्तुत पुस्तक में अपभ्रंश भाषा का स्वरूप एवं उसके परिचय के साथ उसकी विकास-यात्रा का भी विवरण प्रस्तुत किया है। साथ में अपभ्रंश भाषा में लिखित साहित्य के जो रचनाकार और कवि हुए हैं,

उनका परिचय देते हुए, उनकी रचनाओं की विशेषताओं का भी सुन्दर विस्तृत चित्रण किया है। लेखक ने अपभ्रंश भाषा का परिचय देते हुए कहा है कि भारत की लोक बोलियों का सामान्य नाम अपभ्रंश है। प्राकृत अर्थात् प्रकृति से जन्म से बोली जाने वाली भाषा प्राकृत का जन्म संस्कृत से न होकर आर्यों की जन-सामान्य बोली से हुआ है। प्राकृत में विभिन्न प्रकार का साहित्य लिखा जाता रहा है। प्राकृत भाषा के विभिन्न रूप हैं यथा अपभ्रंश, पाली, मागधी, अर्धमागधी, पैशाची आदि। इनमें व्याकरण की दृष्टि से वर्णों आदि के प्रयोग में थोड़ा-थोड़ा अन्तर है। अपभ्रंश भाषा का विकास लोकभाषा के रूप में हुआ और ईसा की पाँचवीं-छठी शताब्दी में वह साहित्यिक अभिव्यक्ति का एक सशक्त माध्यम बन गई। शीघ्र ही स्वयंभू एवं पुष्पदन्त जैसे प्रतिभाशाली महाकवियों ने क्रमशः रामायण- 'पउमचरिउ' और 'महापुराण' जैसे अनुपम ग्रन्थों की रचना कर भारतीय वाङ्मय के इतिहास में अपभ्रंश युग का प्रवर्तन किया। विद्वानों का मानना है कि हिन्दी भाषा अपभ्रंश भाषा की साक्षात् उत्तराधिकारिणी है।

प्रस्तुत पुस्तक के 13 अध्यायों में लेखक ने अपभ्रंश भाषा के साहित्य का क्रमबद्ध एवं सुन्दर तरीके से विस्तृत विशद इतिहास का वर्णन किया है। प्रथम दो अध्यायों में अपभ्रंश भाषा, व्याकरण एवं उसकी प्रमुख विशेषताओं का, तृतीय अध्याय में पउमचरिउं, महापुराण, करकंडचरिउं आदि चरितकाव्यों का वर्णन किया गया है। अध्याय चार और पाँच में लेखक ने मध्यकालीन और परवर्ती चरितकाव्यों का इतिहास प्रस्तुत किया है। षष्ठ अध्याय में अपभ्रंश भाषा के कथा काव्यों का इतिहास है। इसमें कवि धनपाल की भविसयत्तकहा, पं लाखू की जिणयत्तकहा और मुनि सिद्धसेनसूरि की विलासवईकहा प्रमुख हैं। अध्याय सात में महाकवि रइधू एवं अन्य कवियों तथा उनकी रचनाओं का इतिहास प्रस्तुत किया गया है। अध्याय आठ में अपभ्रंश भाषा के पुराण काव्यों का वर्णन है। अध्याय नौ में अपभ्रंश के दोहा साहित्य तथा अध्याय दस में रूपक काव्य एवं रासा साहित्य के सम्बन्ध में वर्णन है। पुस्तक के ग्यारहवें अध्याय में अपभ्रंश की अन्य विविध कृतियों का परिचय दिया गया है। अध्याय बारह में अपभ्रंश की परवर्ती लघु रचनाओं का समावेश किया गया है। पुस्तक के अन्तिम तेरहवें अध्याय में लेखक ने अपभ्रंश भाषा के साहित्य में वर्णित समाज, संस्कृति और सूक्तियों का उल्लेख किया है।

पुस्तक में 'निष्पत्ति' शीर्षक से एक अध्याय में अपभ्रंश भाषा के साहित्य के कवियों का और उनकी रचनाओं का सार रूप में संक्षिप्त में समग्र इतिहास का सुन्दर एवं रोचक शैली में वर्णन किया गया है।

पुस्तक के परिशिष्ट में प्रमुख ग्रन्थों की सूची प्रस्तुत की गई है। अनुपलब्ध रचनाओं की सूची, प्रकाशित अपभ्रंश ग्रन्थ तथा प्रमुख अप्रकाशित ग्रन्थों की सूची भी दी गई है। इसके साथ ही सन्दर्भग्रन्थसूची और विशिष्ट शब्दानुक्रमणिका भी उपलब्ध है।

लेखक के कथनानुसार अपभ्रंश का कुल साहित्य लगभग 650 रचनाओं का है। इनमें से पचास प्रतिशत छोटी-छोटी रचनायें हैं और लगभग 50 स्फुट एवं अज्ञात रचनाएँ हैं। लगभग 300 रचनायें प्रबन्ध-काव्य की कोटि की हैं। उनमें से लगभग 50 रचनाएँ ही प्रकाशित हुई हैं। इस सम्पूर्ण अपभ्रंश साहित्य का लगभग एक चौथाई भाग भी अभी तक प्रकाशित नहीं हुआ है।

वास्तव में प्रस्तुत पुस्तक 'अपभ्रंश साहित्य का इतिहास' के लेखन में लेखक ने अपनी शोधपूर्ण दृष्टि तथा विवेकवती बुद्धि का उपयोग कर एक सुन्दर स्पष्ट एवं प्रामाणिक इतिहास प्रस्तुत किया है, जो अत्यन्त प्रशंसनीय है।

संघर्ष-समाधान-लेखक-मिथिलेश। **सम्पादक**-नन्दकिशोर आचार्य। **प्रकाशक एवं प्राप्ति स्थल**-प्राकृत भारती अकादमी, 13 ए, मेन मालवीय नगर, जयपुर-302017 (राज.), फोन 0141-2524827, 2520230, ISBN No. 978-81-946417-1-1,

Email : prabharati@gmail.com, Website : www.ptakritbharati.net, पृष्ठ-168, मूल्य-320 रुपये।

महात्मा गाँधी की 150वीं जयन्ती के अवसर पर प्राकृत भारती अकादमी द्वारा स्थापित अहिंसा-शान्ति प्रकोष्ठ की एक प्रमुख परियोजना अहिंसा-शान्ति ग्रन्थमाला का प्रकाशन है। इसी शृङ्खला में यह 'संघर्ष-समाधान' पुस्तक प्रकाशित है। शान्ति-स्थापना की प्रक्रिया में संघर्ष-समाधान के उपायों का महत्त्वपूर्ण स्थान है। लेखक ने प्रस्तुत पुस्तक में संघर्षों के समाधान एवं उपायों पर विस्तार से विवेचन किया है।

प्रस्तुत पुस्तक 'संघर्ष-समाधान' को सात अध्यायों में विभक्त किया है। संघर्ष के स्वरूप, कारण, प्रकार आदि पर प्रकाश डाला गया है। संघर्ष, परिवार, जाति, समुदाय और राष्ट्रों के बीच भी होता है। संघर्ष की गतिशील प्रक्रिया एवं संघर्ष के सिद्धान्तों के बारे में बताते हुए प्रमुख सिद्धान्तकार लेविस कोजर, राल्फ डैरनडॉर्फ और रैंडोल कोलिंस के सिद्धान्तों का भी वर्णन किया गया है। शान्ति-स्थापना की संकल्पना, इतिहास तथा शान्ति-निर्माण के सिद्धान्तों के बारे में बताते हुए शान्ति-संगठनों का भी वर्णन किया गया है। संघर्ष-समाधान का अर्थ बतलाते हुए उसकी प्रकृति एवं उपागम का विवेचन किया गया है। जीन शार्प, टेरेल ए नार्थरप, एडवर्ड एज़ार और महात्मा गाँधी जैसे महान् विचारकों के संघर्ष-समाधान विषयक सिद्धान्तों का निरूपण किया गया है। संघर्ष-समाधान के सम्बन्ध में महात्मा गाँधी की दृष्टि का निरूपण विस्तार से किया गया है। गाँधीजी के लिए दो शब्द महत्त्वपूर्ण है-सत्य और अहिंसा। वे सत्य और अहिंसा के आधार पर सभी समस्याओं और संघर्षों का समाधान करते थे। महात्मा गाँधी सत्याग्रह को संघर्ष-समाधान का एक उपाय बतलाते हैं। उनके अनुसार सत्याग्रह का अर्थ होता है-सत्य पर दृढ़ता यानी हर परिस्थिति में सत्य को ही पकड़कर चलना। सत्याग्रह के सिद्धान्त को विस्तार से समझाते हुए सत्याग्रह और दुराग्रह में अन्तर स्पष्ट किया गया है।

संघर्ष-समाधान के व्यावहारिक अनुप्रयोग का विस्तृत विवरण दिया गया है। यथा-अमेरिका में अश्वेत आन्दोलन, इक्वाडोर और पेरु के बीच संघर्ष तथा दक्षिण अफ्रीका में श्वेत और अश्वेत के बीच का संघर्ष आदि। अन्त में सन्दर्भ ग्रन्थों की सूची संलग्न की गई है।

प्रस्तुत पुस्तक दो व्यक्तियों के बीच, परिवार समूह, जाति, समुदाय, देश और राष्ट्र के बीच संघर्षों के कारण और निवारण के उपाय और समाधानों के बारे में विस्तृत रूप से व्याख्या करती है तथा सामान्य और विद्वज्जन सभी के लिए उपयोगी सिद्ध होगी।

-पूर्व डी.एस.ओ., 70, 'जयणा', विश्वकर्मा नगर-द्वितीय, महारानी फॉर्म, जयपुर (राजस्थान)

क्षमा

श्रीमती कमला हणुवन्तमल सुराणा

क्षमाशीलता
महानों की वीरता
है मानवता।।1।।
क्षमा संस्कार
हमें तारणहार
है शिष्टाचार।।2।।
क्षमा भूषण
धुले मन के द्वेष
टूटे बन्धन।।3।।
छोटा जीवन
धवल रहे मन
सुखी जीवन।।4।।
जैन संयमी
है शुद्ध शाकाहारी
अहिंसावादी।।5।।

-ई 123, नेहरु पार्क, जोधपुर (राजस्थान)

सांवत्सरिक क्षमायाचना

छद्मस्थता में त्रुटि स्वाभाविक है। पर्वाधिराज पर्युषण पर्व की आराधना करते हुए हमने भाद्रपद शुक्ला पञ्चमी, शनिवार, 11 सितम्बर, 2021 को सांवत्सरिक प्रतिक्रमण कर सर्व जीवों से विशुद्ध हृदय से क्षमायाचना की है। हम पूज्य आचार्यप्रवर एवं समस्त सन्त-सतीवृन्द से अविनय-आशातना के लिए करबद्ध क्षमाप्रार्थी हैं, वहीं संघ-समाज के सभी भाई-बहिनों से हार्दिक क्षमायाचना करते हैं। विगत वर्ष के कार्यकाल में हमसे वचन-व्यवहार एवं कार्यप्रणाली द्वारा किसी भी संघ-सदस्य की भावनाओं को ठेस पहुँची हो, इसके लिए हम अन्तःकरण से क्षमायाचना करते हैं।

क्षमाप्रार्थी

प्रकाश टाटिया (अध्यक्ष) आनन्द चौपड़ा (कार्याध्यक्ष) बुधमल बोहरा (कार्याध्यक्ष) धनपत सेठिया (महामन्त्री)

अखिल भारतीय श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ, जोधपुर

चंचलमल बच्छावत (अध्यक्ष) विनयचन्द डागा (कार्याध्यक्ष) डॉ. धर्मचन्द जैन (कार्याध्यक्ष) अशोककुमार सेठ (मन्त्री)

सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल, जयपुर

मंजु भण्डारी (अध्यक्ष) बीना मेहता (कार्याध्यक्ष) सुशीला भण्डारी (कार्याध्यक्ष) अलका दुधेड़िया (महासचिव)

अखिल भारतीय श्री जैन रत्न श्राविका मण्डल, जोधपुर

मनीष मेहता (अध्यक्ष) विवेक लोढ़ा (कार्याध्यक्ष) अनिल बोथरा (कार्याध्यक्ष) अमित हीरावत (महासचिव)

अखिल भारतीय श्री जैन रत्न युवक परिषद्, जोधपुर

सुभाष हुण्डीवाल (संयोजक) सुनील संकलेचा (सचिव)

श्री स्थानकवासी जैन स्वाध्याय संघ, जोधपुर

अशोक बाफना (संयोजक) सुभाष नाहर (सचिव)

अखिल भारतीय श्री जैन रत्न आध्यात्मिक शिक्षण बोर्ड, जोधपुर

राजेश कर्नावट (संयोजक) राजेश भण्डारी (सचिव)

अखिल भारतीय श्री जैन रत्न आध्यात्मिक संस्कार केन्द्र, जोधपुर

एवं

समस्त सदस्यगण, संचालन समिति एवं कार्यकारिणी
अखिल भारतीय श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ व सहयोगी संस्थाएँ

10 सितम्बर 2021
जिनवाणी 69
ISSN 2249-2011

आत्म-चिन्तन

इच्छाएँ आबाद तो अनन्त भव बर्बाद

श्री दिनेश बालड़

इच्छाएँ आकाश जितनी अनन्त हैं। समुद्र जितनी गहरी हैं जो भरती ही नहीं हैं। समुद्र, श्मशान, पेट और इच्छाओं का खड्डा कभी भरता ही नहीं है। अनन्त दुःख का कारण ही इच्छाएँ हैं। इच्छाओं का जन्मदाता धन है। जैसे-जैसे धन बढ़ता है वैसे-वैसे इच्छाएँ बढ़ती जाती है। जैसे-जैसे इच्छाएँ बढ़ती है वैसे-वैसे दुःख बढ़ते जाते हैं। लेकिन दुनिया सोचती है कि धन है तो सब कुछ है, ज्ञानी कहते हैं कि धर्म है तो सब कुछ है।

उत्तराध्ययनसूत्र के आठवें अध्ययन की 16वीं गाथा में भगवान फरमाते हैं कि मनुष्य की इच्छाएँ बहुत दुष्कर हैं, उसे धन-धान्य से भरापूरा विश्व भी दे दिया जाए तो भी वह सन्तुष्ट नहीं होता है। वर्तमान में दुनिया संस्कारों के लिए नहीं, सिर्फ धन को पाने के लिए मेहनत कर रही है। लेकिन सोच को बदलना होगा कि जीवन जीने के लिए पैसा है, पैसे के लिए जीवन नहीं है। हमारे से धन नहीं छूटे तो कोई बात नहीं, लेकिन धन की ममता को अवश्य छोड़े। धन में सुख मानना मिथ्यात्व है। धन का नफ़ा हो या नुकसान जीवन में धर्म का नुकसान न होने दें। सोने की लंका वाले रावण आज नरक में है। इन्हें नरक में जाने से धन भी रोक नहीं पाया।

दशवैकालिकसूत्र के दूसरे अध्ययन की पाँचवीं गाथा में भगवान फरमाते हैं कि इच्छाओं को दूर करना ही वास्तव में दुःखों को दूर करना है। धन की ममता पीढ़ी दर पीढ़ी बढ़ती ही जाती है, लेकिन याद रखे, धन के लिए चाहे कितना भी दौड़े पर अन्तिम रास्ता तो घर से श्मशान तक ही है। धन के मोह में हम इतने अन्धे हो गए हैं कि सामायिक में बैठे-बैठे नोट याद आते हैं, लेकिन नोट गिनते समय सामायिक याद नहीं आती है। जिस प्रकार एक करोड़ की संख्या को जीरो से गुणांक करने पर जीरो ही रहता है उसी प्रकार सभी सुखों का गुणांक अन्त में मौत ही है। नरक के जीव करोड़पति से कहते हैं कि धन से मोह छोड़ो नहीं तो आज हमारा जो वर्तमान है कल वह तुम्हारा भविष्यकाल हो सकता है। अनेक धनिक आज सातवीं नारकी के मेहमान हैं।

उत्तराध्ययनसूत्र के नवमें अध्ययन में वर्णन आता है कि मिथिला नगरी जब जल रही थी तब नमि राजा ने कहा मिथिला में जो जल रहा है वह मेरा नहीं है, और मेरा है वह जलेगा नहीं। हमें भी धन के नुकसान में नमि राजा बन जाना।

ज्ञानीजन कहते हैं कि धनवान बनने के लिए एक-एक कण का संग्रह करना पड़ता है और गुणवान बनने के लिए एक-एक क्षण का सदुपयोग करना पड़ता है। इस जीवन का पैसा अगले जन्म न काम आया है और न ही आएगा। मगर इस जीवन के अच्छे कर्म अनन्त जन्म-मरण के दुःखों से मुक्ति दिलाएँगे। इसलिए धन की आसक्ति को कम करना पड़ेगा, क्योंकि आसक्ति का परिणाम दुर्गति है। आसक्ति से बचने के लिए इच्छाओं को घटाना पड़ेगा।

उत्तराध्ययनसूत्र के उन्नीसवें अध्ययन की 45वीं गाथा में भगवान फरमाते हैं कि-**इह लोए निप्पिवासस्स नत्थि किंचि वि दुक्करं** अर्थात् इस लोक में जिनकी इच्छाएँ बुझ चुकी है, अभिलाषाएँ शान्त हो गई उसके लिए कुछ भी मुश्किल नहीं है। हमें भी दृढ़ धर्मी, प्रिय धर्मी श्रावक बनकर स्वीकार करना पड़ेगा कि धन छूटे तो छूटे पर धर्म नहीं छूटे। भोगों को भोगने में अनन्त काल व्यतीत कर दिया है। पुण्यवानी से जो धन और साधन प्राप्त हुए हैं उसका इच्छा से त्याग कर अब समय का सदुपयोग कर्म काटने में करना है। इच्छाएँ दुर्गति का मार्ग है, इसीलिए ज्ञानी जन कहते हैं कि इच्छाएँ आबाद तो अनन्त भव बर्बाद।

10 सितम्बर 2021
जिनवाणी 70
ISSN 2249-2011

समाचार विविधा

पूज्य आचार्यप्रवर श्री हीराचन्द्रजी म.सा. के पीपाड़ वर्षावास में तपसाधना में तपाराधकों का प्रशंसनीय पुरुषार्थ

रत्नसंघ के अष्टम पट्टधर, आगमज्ञ, प्रवचन-प्रभाकर, सामायिक-शीलव्रत-रात्रिभोजन-त्याग एवं व्यसनमुक्ति के प्रबल प्रेरक, जिनशासन गौरव, **परम श्रद्धेय आचार्यप्रवर पूज्य श्री हीराचन्द्रजी म.सा., महान् अध्यवसायी, सरस व्याख्यानी श्रद्धेय श्री महेन्द्रमुनिजी म.सा.** आदि ठाणा-6 पीपाड़ के श्रीमती शरदचन्द्रिका मुणोत स्वाध्याय भवन में चातुर्मास हेतु विराजित हैं। **व्याख्यात्री महासती श्री निष्ठाप्रभाजी म.सा.** आदि ठाणा-3 श्री जयमल महिला स्वाध्याय भवन में विराज रहे हैं। पीपाड़ में धर्मोद्योत और धर्मप्रभावना चल रही है।

परमाराध्य पूज्य गुरुदेव आचार्यप्रवर श्री हीराचन्द्रजी म.सा. की सतत स्वाध्याय-साधना एवं मौन में संलीनता बढ़ती जा रही है, जिसके चलते प्रात:काल 10.30 बजे 11.30 बजे तक तथा दोपहर पश्चात् 3.00 से 4.30 बजे तक निर्धारित दूरी से श्रावक-श्राविकाएँ अपने भाव, जिज्ञासा प्रकट कर समाधान एवं व्रत-प्रत्याख्यान, नियम ग्रहण करते हैं एवं संघीय पदाधिकारीगण संघहित-चिन्तन एवं मार्गदर्शन हेतु चर्चा वार्त्ता कर सकते हैं।

चातुर्मास के प्रथम माह से ही विविध तपाराधनाओं का क्रम जारी है। कोरोना काल से आंशिक राहत मिलते ही, तपाराधकों में उत्साह है उल्लेखनीय है कि गुरुचरण सन्निधि का सुयोग प्राप्त होने पर तपस्या सरलतया सम्पन्न हो जाती है।

महासती खुशबूजी म.सा. का मासखमण-व्याख्यात्री महासती श्री निष्ठाप्रभाजी म.सा., महासती श्री प्रतिष्ठाप्रभाजी म.सा. की सहवर्तिनी महासती श्री खुशबूजी म.सा. को चिकित्सकीय परामर्श में स्वास्थ्य लाभ हेतु तपस्या नहीं करने को कह रखा था, चूँकि उपचार पूर्ण हो चुका था-साध्वीजी म.सा. की तपस्या की प्रबल भावना थी। साध्वाचार में तपस्या साधक के लिए संयम-विशुद्धि एवं कर्मनिर्जरा का अचूक उपाय होता है। गुरुदर्शन करके गुरुचरणों में महासतीजी ने तपाराधना करने के भाव व्यक्त किये तो पूज्य गुरुदेव ने फरमाया कि समाधि हो तो ही तप सार्थक है, तप से समाधि हो एवं समाधि पूर्वक तप हो-जब तक साता हो-तब तक करना चाहिए, भावातिरेकता से नहीं। कमजोर शरीर वाली साध्वीजी ने अपने श्रद्धाबल से तपस्या1,2,3,4,5.... उपवास करते हुए, बढ़ते हुए मासखमण तपाराधना निर्विघ्न, निर्व्याधि एवं ससमाधि दैनिक सामान्यचर्याओं में गतिशील रहते हुए सम्पन्न की। आप सुख-समाधि में हैं।

तपस्विनी लीलाबाईजी कटारिया श्रीमती प्रियंकाजी कोठारी एवं महावीरजी बोहरा के मासखमण तप-इसी प्रकार 84 वर्षीय वयोवृद्ध तपस्विनी सुश्राविका श्रीमती लीलाबाईजी कटारिया (पीपाड़) ने परिवारजन के सहकार से नियमित स्थानक आकर सामायिक साधना करके एवं शनैः शनैः तप में वृद्धि करते हुए 30 उपवास का मासखमण तपाराधन पूर्ण किया। इनके पूरे जीवनकाल की तपाराधनाओं का क्रम लम्बा एवं उल्लेखनीय है। साथ ही तपसाधिका सुश्राविका श्रीमती प्रियंकाजी धर्मसहायिका श्री महावीरजी कोठारी (निमाज) जो श्रद्धेय श्री जितेन्द्रमुनिजी म.सा. की सांसारिक वीर-भाभीजी हैं, आपने भी 30 उपवास की तपस्या कर मासखमण तपाराधना का अर्घ्य अर्पित किया तथा तपसाधक युवारत्न श्री महावीरजी सुपुत्र श्री मूलचन्दजी बोहरा (रतकुड़िया वाले) ने 31 उपवास कर मासक्षपणोपरान्त तपाराधना का अर्घ्य अर्पित किया।

तपाराधना के क्रम में 54 तेले, पचौला, 6 दिवसीय तप, अनेक अठाई, 9 की तपस्या, 10 की तपस्या, 15 की तपस्या, 21 की तपस्याएँ हो रही हैं। इसके अलावा तेले, बेले, उपवास, एकाशन, आयम्बिल की लड़ी एवं रोजाना एक-एक घर में नवकार मन्त्र जाप अनवरत गतिशील है।

दैनिक धर्मचर्या में सूर्योदय के पश्चात् प्रार्थना श्रद्धेय श्री रवीन्द्रमुनिजी म.सा. एवं प्रवचन 8.45 से 10.00 बजे तक श्रद्धेय श्री मनीषमुनिजी म.सा. एवं महान् अध्यवसायी श्रद्धेय श्री महेन्द्रमुनिजी म.सा. फरमाते हैं। श्रद्धेय श्री महेन्द्रमुनिजी म.सा. ठाणांग सूत्र की वाचना फरमाते हैं। श्रद्धेय श्री मनीषमुनिजी म.सा. धार्मिक शिक्षण कराते हैं। जिनके सरल, सुबोध विवेचन से धर्म-श्रवण करने वालों को सहज जिज्ञासाओं का प्रादुर्भाव होता है। वे सभी की जिज्ञासाओं का समाधान भी करते हैं। श्रद्धेय श्री रवीन्द्रमुनिजी म.सा. कर्मग्रन्थ पढ़ा रहे हैं। व्याख्यात्री महासती श्री निष्ठाप्रभाजी म.सा. आदि ठाणा-3 थोकड़ों का अध्ययन करा रहे हैं।

शासन सेवा समिति के सभी पदाधिकारीगण 17 अगस्त को अपने आराध्य पूज्य गुरुदेव के श्री चरणों में संघहित चिन्तन हेतु उपस्थित हुए एवं पूज्यप्रवर की सन्निधि का लाभ लिया।

कोरोना महामारी से राहत मिलने-अनलॉक होने से दर्शनार्थियों का आवागमन नियमित हो रहा है। ओसवाल, पोरवाल, पल्लीवाल क्षेत्रों के भक्तगण चहुँओर निकटवर्ती-सुदूरवर्ती क्षेत्रों से आ रहे हैं।

अतिथि भवन का लोकार्पण-13 अगस्त, 2021 को प्रवचन के पश्चात् पृथ्वी-सुन्दर-मधु कवाड़ अतिथि भवन का लोकार्पण हुआ। श्रावकरत्न श्री प्रेमकुमारजी कवाड़, पीपाड़-चेन्नई के सौजन्य से निर्मित यह तिमञ्ज़िला भवन सर्व सुविधा युक्त है।

पीपाड़ के श्रावकसंघ, श्राविका मण्डल, युवक परिषद्, बालिका मण्डल सभी सर्वतोभावेन सेवा, स्वधर्मी वात्सल्य, श्रद्धाभक्ति-भावना, धर्मध्यान, तप-त्याग में अनवरत सहभागिता एवं धर्मोल्लासपूर्वक गतिशील हैं।

-गिरीज जैन

महासती श्री खुशबूजी म.सा. के मासक्षपण पूर पर अनुमोदना एवं त्याग-तप की प्रभावना

गुरु हस्ती-गुरु हीरा की जन्मभूमि पुण्यधरा पीपाड़ में **धर्माचार्य-धर्मगुरु पूज्य श्री हीराचन्द्रजी म.सा.,** महान् अध्यवसायी, सरस व्याख्यानी **श्रद्धेय श्री महेन्द्रमुनिजी म.सा.** आदि ठाणा-6 तथा **व्याख्यात्री महासती श्री निष्ठाप्रभाजी म.सा.,** महासती श्री प्रतिष्ठाप्रभाजी म.सा. आदि ठाणा-3 के चातुर्मास के सुयोग से **महासती श्री खुशबूजी म.सा.** ने श्रावण शुक्ला प्रतिपदा, सोमवार तदनुसार 9 अगस्त, 2021 को प्रातः संघनायक पूज्य गुरुदेव श्री हीराचन्द्रजी म.सा. के मुखारविन्द से मासक्षपण तप के प्रत्याख्यान अङ्गीकार किए।

प्रवचन-सभा में **श्रद्धेय श्री रवीन्द्रमुनिजी म.सा.** ने तप-साधना का माहात्म्य समझाते हुए कहा कि तप शरीर के रोग ही नहीं, भव रोगों से भी निजात दिलाते हैं। आत्मा पर लगे दोषों की शुद्धि के लिए तप आवश्यक है तो कर्म-रोग निकन्दन के लिए भी तप जरूरी है। 'करो तपस्या, मिटे समस्या' का हार्द मुनिश्री ने बताया।

व्याख्यात्री **महासती श्री निष्ठाप्रभाजी म.सा.** ने ''हीरा गुरु मंगलकारी है, महाकल्याणकारी है।'' भजन के साथ भावाभिव्यक्ति में कहा-तप में आहार-त्याग के साथ इच्छाओं का निरोध कर महासती श्री खुशबूजी म.सा. ने अपनी आत्मशक्ति का परिचय दिया है। संघनायक के नेतृत्व में और महान् अध्यवसायी मुनिश्री सहित सभी सन्त-मुनिराजों के सहयोग से तप-साधना सम्भव हुई है, अन्यथा महासतीजी की शारीरिक स्थिति तो आप देख ही रहे हैं। तपस्या में तन को नहीं, मन को भी वश में करना होता है।

परिवार की ओर से महासतीजी के सांसारिक जीजाजी **श्री मुकेशजी चौपड़ा** ने गुरु हीरा, सन्त-सतीवृन्द की कृपा का उल्लेख करते अपनी ओर से एवं परिवार की ओर से अनुमोदना करके तप-साधिका महासती श्री खुशबूजी म.सा. के स्वास्थ्य-समाधि की शुभकामना व्यक्त की। जोधपुर से विरक्ता बहिन सुश्री मोनिकाजी, सुश्री प्रियलजी एवं सुश्री कल्पाजी ने सामूहिक भजन के माध्यम से तपस्विनी महासतीजी के प्रति शुभकामना तो व्यक्त की ही, गुरुणीजी महाराज श्री ज्ञानलताजी म.सा. एवं महासती मण्डल की ओर से अनुमोदना करके अपनी बात को विराम दिया।

श्रद्धेय श्री मनीषमुनिजी म.सा. ने इच्छा रहित, मूर्च्छा रहित और हिंसा रहित तप के स्वरूप का हार्द बताते हुए कहा कि तप कर्म-निर्जरा के लिए होता है तो तप से विकार दूर रहते हैं। मुनिश्री ने तप-साधना में सहयोगियों के सहयोग मिलने पर एवं उपकारियों के उपकार का भी उल्लेख किया।

महान् अध्यवसायी सरस व्याख्यानी **श्रद्धेय श्री महेन्द्रमुनिजी म.सा.** ने आज एक साथ दो प्रसङ्गों का उल्लेख करते हुए कहा कि आज महासतीजी का पूर है तो आज ही के दिन आचार्य सम्राट् पूज्य श्री आनन्दऋषिजी म.सा. का जन्म-दिवस भी है। आचार्यश्री आनन्दऋषिजी म.सा. और आचार्यश्री हस्तीमलजी म.सा. का परस्पर का प्रेम-स्नेह-सहयोग इतना प्रबल रहा कि दोनों महापुरुषों को एक-दूसरे पर भरोसा था। दोनों में आत्मीयता एवं अपनत्व के उदाहरण भी उन्होंने सुनाए। धर्मनिष्ठता के उदाहरण में महान् अध्यवसायी मुनिश्री ने कहा-भोपालगढ़ से जोधपुर दोनों महापुरुषों का आगे-पीछे विहार चल रहा था। रास्ते में आचार्य सम्राट् के एक सन्त को सर्प ने डस लिया। समाचार दोनों महापुरुषों को कहलवाये गये तो आचार्य सम्राट् ने कहा-पीछे श्रद्धेय हस्तीमलजी म.सा. पधार रहे हैं, वे सम्भाल लेंगे। हुआ भी वैसा ही, गुरुदेव श्री हस्तीमलजी म.सा. ने अपनी साधना के बल पर मुनिश्री को स्वस्थ किया और विहार गतिमान रहा। दोनों महापुरुषों को कैसे एक-दूसरे को एक-दूसरे पर विश्वास था। आपको समझाने के लिए एक अन्य उदाहरण है कि विक्रम सम्वत् 2012 का आचार्यश्री हस्ती का चातुर्मास अजमेर में खुला था तो आचार्य सम्राट् ने बदनौर चातुर्मास की स्वीकृति कर दी थी। उस समय आचार्य सम्राट् के दो सन्तों को बुखार हो गया। अस्वस्थता में विहार नहीं हो सकता था, अत: आचार्य सम्राट् ने अपने दोनों सन्तों को आचार्यश्री हस्ती की सेवा में रखा और स्वयं बदनौर पधारे। दो परम्पराओं के शीर्षस्थ महापुरुषों में ऐसा विश्वास तभी रह सकता है जब दोनों में आत्मीयता-अपनत्व हो।

आज महासती श्री खुशबूजी म.सा. के मासक्षपण तप के पूर का प्रसङ्ग भी है। महासतीजी की शुरु से भावना थी कि गुरुदेव के श्रीचरणों में हमारा चातुर्मास हो और गुरुचरणों में तपस्या करके कर्मों की निर्जरा करूँ। महासतीजी के दोनों मनोरथ पूर्ण हुए हैं। मैं अपनी ओर से एवं सन्त-मुनिराजों की ओर से इतना ही कहूँगा कि तपस्या की तो हमारी अनुमोदना है, तपस्या पश्चात् भी स्वास्थ्य-समाधि का पूरा खयाल रखें।

स्थानीय संघ की ओर से श्री सुमतिचन्दजी मेहता ने अनुमोदना व्यक्त करते हुए आवश्यक सूचनाएँ दीं और महान् अध्यवसायी मुनिश्री ने मंगल-पाठ सुनाया।

पूर के प्रसङ्ग से महासतीजी के परिवारजनों, आसपास के ग्राम-नगरों के श्रद्धालुजनों के साथ जोधपुर श्रावक संघ के अध्यक्ष, श्राविका मण्डल की अध्यक्ष सहित अनेक गुरुभक्तों का पधारना हुआ। स्थानीय पीपाड़ संघ ने सबके प्रति आभार प्रदर्शित किया।

-नौरतनमल मेहता

अजमेर में 25 वर्षों के पश्चात् रत्नसंघ के सन्तों का चातुर्मास

पूज्य गुरुदेव आचार्यप्रवर 1008 श्री हीराचन्द्रजी म.सा. के आज्ञानुवर्ती सेवाभावी **श्रद्धेय श्री नन्दीषेणमुनिजी म.सा.** आदि ठाणा-4 धार्मिक एवं आध्यात्मिक नगरी अजमेर की पावन धरा पर 11 जुलाई, 2021 को पुष्कर से अजमेर मोती विहार फायसागर रोड़ पर पदार्पण हुआ। आचार्य भगवन्त के सन् 1996 के लाखन कोटड़ी चातुर्मास के पश्चात् लगभग 25 वर्षों के बाद रत्नसंघ के सन्तों का चातुर्मास प्रारम्भ होने के पूर्व आपने सभी उपनगरों में विचरण किया। 22 जुलाई, 2021 को सायंकालीन गुरु हस्ती की दीक्षा-स्थली पुष्कर रोड़ स्थित सामायिक-स्वाध्याय भवन में वर्षावास के लिए सन्तों का पदार्पण हुआ। पूर्व सूचना के बिना भी श्रावक एवं श्राविकाओं में उत्साह था और प्रवेश में प्रशंसनीय उपस्थिति रही।

कोरोना महामारी और घरों में स्वजनों के बिछोह का भय और शोक के कारण चातुर्मासिक कार्यक्रमों में उपस्थिति नगण्य रहने की सम्भावना थी, परन्तु आचार्य भगवन्त की कृपा से एवं श्रद्धालु भक्तों के उत्साह के कारण सभी कार्यक्रमों में अच्छी संख्या में श्रद्धालु उपस्थित हो रहे हैं।

उपवास, आयम्बिल, एकाशन एवं रात्रिकालीन न्यूनतम 2 संवर तथा तेले की लड़ी में सभी बढ़-चढ़कर भाग ले रहे हैं। प्रार्थना, प्रात:कालीन स्वाध्याय कक्षा, प्रवचन और प्रतिक्रमण में उपस्थिति उत्साहवर्धक है। दोपहर वाचनी एवं नया सीखने के कार्यक्रम में भी अच्छी संख्या है। अभी तक एक मासखमण, 21 उपवास, 11 उपवास आदि की आराधना हुई। संवर में नित्य 4 से 10 तक की उपस्थिति हो रही है। पूज्य गुरुदेव आचार्य भगवन्त के अजमेर चातुर्मास में रविवारीय सामूहिक सामायिक का आगाज हुआ था, उसी कार्यक्रम को इस चातुर्मास में श्रद्धेय श्री योगेशमुनिजी म.सा. पुनर्जीवित करने के लिए रविवार को प्रात: 7 से 8 बजे तक नये-नये विषयों पर कक्षा ले रहे हैं, युवा वर्ग अपनी प्रशंसनीय उपस्थिति दर्ज कर रहा है। *-चन्द्रप्रकाश कटारिया, मन्त्री*

जयपुर में तीन चातुर्मास : धर्म-क्रियाओं का बना इतिहास

मानसरोवर-जिनशासन गौरव परम पूज्य आचार्यप्रवर श्री हीराचन्द्रजी म.सा. के आज्ञानुवर्ती **मधुरव्याख्यानी श्रद्धेय श्री गौतममुनिजी म.सा.** आदि ठाणा-3 के सान्निध्य में राजस्थान की राजधानी जयपुर के किरणपथ, मानसरोवर में ऐतिहासिक चातुर्मास जप-तप की साधना पूर्वक गतिमान है। प्रार्थना, प्रवचन आदि में श्रावक-श्राविकाएँ उमङ्ग-उत्साह के साथ भाग ले रहे हैं। स्थानीय एवं बाहर से पधारे श्रावक-श्राविकाओं का यहाँ मेले जैसा आवागमन रहता है। एकाशन, आयम्बिल, नींवी, उपवास एवं तेले की लड़ी निरन्तर गतिमान है।

- बड़ी तपस्या में श्री राजेन्द्र कुमारजी जैन (ओलवाड़ा वाले), राधानिकुञ्ज ने मासखमण की तपस्या की है। आपके 31 दिवसीय तपस्या के पूर दिवस पर 31 जनों ने उपवास करके तप की विशेष अनुमोदना की। अब तक यहाँ 2 मासखमण, 1 ग्यारह, 3 नौ, 14 अठाई और 20 तेले की तपस्याएँ सम्पन्न हो चुकी हैं।
- युवक एवं युवतियों को धर्म से जोड़ने हेतु महाराज साहब के सान्निध्य में प्रत्येक रविवार को विभिन्न विषयों पर कक्षाओं का आयोजन किया जा रहा है। जिनमें केवल युवकों की उपस्थिति 200-300 के बीच रहती है। हर युवा सुनने की उत्सुकता रखता है और तदनुसार जीवन जीने का संकल्प भी धारण कर रहा है। पहले विषयान्तर्गत आमन्त्रित वक्ता अपना वक्तव्य प्रस्तुत करते हैं तत्पश्चात् श्रद्धेय श्री गौतममुनिजी म.सा. द्वारा प्रस्तुत विषय पर अपने ओजस्वी उद्बोधनों से उन्हें दिशा बोध प्रदान किया जा रहा है। अब तक 'Celebrate Life with Sprituality, सुखी जीवन का आधार : व्रत-पच्चक्खाण स्वीकार, कहाँ टिकाए अपनी श्रद्धा,

आगम की उपयोगिता, युवा करे लक्ष्य का निर्धारण, जैनधर्म का गौरवशाली इतिहास' विषयों पर क्रमशः श्री श्रीकान्तजी गुप्ता-जोधपुर, श्री रितुलजी पटवा (सी.ए.)-जयपुर, डॉ. धर्मचन्दजी जैन प्रधान सम्पादक जिनवाणी-जयपुर, श्री जितेन्द्रजी डागा-जयपुर, श्री विवेकजी लोढ़ा-जयपुर, पण्डित श्री प्रकाशचन्दजी जैन-जयपुर जैसे वक्ताओं ने अपने वक्तव्यों के द्वारा उपस्थित जनमानस में जोश भर दिया।

- प्रत्येक दिन प्रातःकालीन प्रार्थना के पश्चात् तत्त्वज्ञान पर आधारित 15-20 मिनिट की कक्षा होती है, जिसमें अनेक युवा रुचि पूर्वक भाग लेते हैं।
- प्रत्येक मंगलवार और शुक्रवार को 'कर्मप्रकृति का थोकड़ा' पर महिलाओं हेतु विशेष कक्षा श्रद्धेय श्री अविनाशमुनिजी म.सा. द्वारा ली जा रही है।
- 6-10 अगस्त, 2021 तक पञ्चदिवसीय कार्यक्रम का आयोजन ज्ञान, दर्शन, चारित्र, तप एवं जप दिवस के रूप में हुआ। ज्ञान दिवस के दिन 108 श्रावक-श्राविकाओं द्वारा दशवैकालिकसूत्र के प्रथम तीन अध्ययन की 108 मूल गाथाओं का सामूहिक स्वाध्याय, दर्शन दिवस के दिन 108 श्रावक-श्राविकाओं द्वारा 108 वन्दना, चारित्र दिवस के दिन 108 श्रावक-श्राविकाओं द्वारा 8-8 सामायिक, तप दिवस के दिन 108 श्रावक-श्राविकाओं द्वारा 108 आयम्बिल और जप दिवस के दिन 108 श्रावक-श्राविकाओं द्वारा 108 लोगस्स की माला फेरने का लक्ष्य रखा गया। सभी श्रावक-श्राविकाओं ने लक्ष्य से अधिक इस आयोजन को पूर्ण उत्साह के साथ प्रतिदिन प्रातः 7.45 से 8.30 बजे तक पूर्ण किया।
- श्री जैन रत्न युवती मण्डल एवं श्री वर्द्धमान स्थानकवासी श्रावक संस्था, मानसरोवर के संयुक्त तत्त्वावधान में 28-29 अगस्त को 14 से 24 वर्ष तक की युवतियों हेतु 'सुबोध लॉ कॉलेज' में दो दिवसीय 'स्मॉर्ट गर्ल्स' कार्यशाला का आयोजन हुआ, जिसमें भारतीय जैन संघटना के अध्यक्ष श्री राजेन्द्रजी लूंकड़, ईरोड़ ने प्रेरक एवं मार्गदर्शक उद्बोधन दिया।
- 5 सितम्बर को 15 से 25 वर्ष के युवकों को प्रेरणा हेतु 'ऐ भाई जरा देखकर चलो' विषय पर श्रद्धेय मुनिश्री द्वारा विशेष उद्बोधन देना प्रस्तावित है।

-धर्मचन्द जैन, मन्त्री

महारानी फार्म, जयपुर-साध्वीप्रमुखा महासती श्री तेजकँवरजी म.सा., व्याख्यात्री महासती श्री सुमनलताजी म.सा. आदि ठाणा-13 का उत्तम स्वाध्याय भवन, महारानी फार्म में पूर्ण उत्साह से चातुर्मास गतिमान है। साध्वीप्रमुखाजी म.सा. का स्वास्थ्य स्थिर है। महासतीजी म.सा. के दर्शन-वन्दन हेतु निरन्तर दर्शनार्थियों के आने का क्रम जारी है, स्वधर्मी भाई-बहिनों के स्वागत के लिए कार्यकर्त्ता समर्पित भावना से तत्पर हैं। प्रतिदिन प्रातः 8 बजे से प्रवचन हो रहे हैं तथा उपवास, एकाशन, आयम्बिल, नींवी, तेला एवं बिआसन की लड़ी चल रही है। इनके अतिरिक्त त्याग प्रत्याख्यान एवं तपस्याएँ चल रही हैं। श्री मुकेशजी जैन सुपुत्र श्री मगनचन्दजी जैन फाजिलाबाद वाले, जयपुर ने 11 दिवसीय तपस्या की है तथा श्रीमती सुमित्राजी धर्मपत्नी श्री प्रदीपजी जैन ने 9 की तपस्या की है। श्रीमती हरकीदेवीजी धर्मपत्नी श्री विमलचन्दजी जैन प्रताप नगर ने नींवी का मासखमण किया तथा श्रीमती कंचनजी लुणावत एवं नीतूजी लुणावत के प्रतिदिन एकाशन की तपस्या चल रही है।

-केवलचन्द जैन (सर्राफ), सह-संयोजक

लाल भवन, जयपुर-व्याख्यात्री महासती श्री संगीताश्रीजी म.सा. आदि ठाणा-4 का चातुर्मास पूर्ण चरम पर चल रहा है। उनके प्रवचन श्रोताओं को काफी आकर्षित कर रहे हैं। तपस्या में 2-3 मासखमण चल रहे हैं और रोजाना उपवास, बेले, तेले की तपस्याओं के प्रत्याख्यान हो रहे हैं। महासती श्री भविताश्रीजी म.सा. कर्मग्रन्थ पर बहुत ही मार्मिक विवेचना के साथ अपना प्रवचन फरमा रही हैं।

-सुरेशचन्द कोठारी, संयुक्त-मन्त्री

जोधपुर में तीन चातुर्मास : श्रद्धेय श्री जितेन्द्रमुनिजी म.सा. के 36 उपवास की तपस्या से तपोमय हुई सूर्य नगरी

नेहरू पार्क, जोधपुर-पूज्य आचार्यप्रवर श्री हीराचन्द्रजी म.सा. की असीम कृपा से जोधपुर संघ को तीन चातुर्मास प्राप्त हुए हैं। **श्रद्धेय श्री यशवन्तमुनिजी म.सा. आदि ठाणा**-4 का चातुर्मास नेहरु पार्क स्थित सामायिक-स्वाध्याय भवन में चल रहा है। इसके पूर्व आप जोधपुर के उपनगरों को फरसते हुए कुछ दिन घोड़ों का चौक स्थानक में विराज कर कल्पकाल पर्यन्त शक्तिनगर स्थानक में विराजे, जहाँ पर व्याख्यात्री महासती श्री विमलेशप्रभाजी म.सा., श्री पद्मप्रभाजी म.सा. आदि सती मण्डल ने मुनि मण्डल के दर्शन एवं सेवा का लाभ लिया। आपका 13 जुलाई को चातुर्मास हेतु मंगल प्रवेश हुआ है तथा उसी दिन से नियमित प्रवचन एवं साधना-आराधना चल रही है। सरदारपुरा नेहरुपार्क क्षेत्र के श्रावक-श्राविकाओं में अपार उल्लास एवं भक्तिभावना नज़र आ रही है। नियमित रूप से प्रवचन, वाचनी आदि के साथ उपवास, पौषध, संवर, एकाशन, आयम्बिल आदि की तपस्या हो रही है। कई छोटी-बड़ी तपस्याएँ भी हुई हैं।

पूज्य गुरुदेव आचार्यप्रवर श्री हीराचन्द्रजी म.सा. के शासन काल में **श्रद्धेय श्री जितेन्द्रमुनिजी म.सा.** ने 36 की तपस्या करके रत्नसंघ के इतिहास में दीर्घ तपस्या करने वाले सन्त रत्न के रूप में अपना नाम अंकित कर लिया है। उनकी तपस्या से पूरा जोधपुर तपोमय हो गया। पिछले कई महीनों से श्रद्धेय मुनिश्री प्रत्येक पखवाड़े के अन्त में तेला करते हैं उसी तेले को आगे बढ़ाते हुए अपने दृढ़ संकल्प से 36 की तपस्या सम्पन्न की। तपस्या काल में अप्रमत्त रहते हुए प्रति क्षण स्वाध्याय जप-साधना में अपनी तपस्या के दिवस व्यतीत किए। 11 अगस्त, 2021 को जब आपके 36 की तपस्या का पूर होने वाला था उससे कुछ दिन पूर्व ही स्थानक में अनुमोदना भक्ति के गीत गुञ्जायमान होने लगे, कभी युवक संघ द्वारा तो कभी श्राविका मण्डल द्वारा। जोधपुर संघ द्वारा आपश्री की तपस्या की पूर्णाहुति के उपलक्ष्य में सामूहिक तेले का आह्वान किया गया, जिससे पूरे संघ के अन्दर एक तपस्या का जबरदस्त माहौल बना और लगभग डेढ़ सौ से ऊपर तेले की तपस्या हुई।

मुनि श्री की तपस्या के पूर वाले दिन मानो संवत्सरी-सा माहौल नज़र आने लगा। स्थानक में चारों तरफ श्रावक-श्राविका सामायिक आदि जप-तप के साथ उपस्थित नज़र आए।

श्रद्धेय श्री अशोकमुनिजी म. सा. ने तप अनुमोदना कार्यक्रम प्रारम्भ करते हुए अपने प्रवचन में तप की महिमा निरूपित कर तपस्वी सन्तरत्न का गुणगान किया। उन्होंने फरमाया कि मुनिश्री ने शुद्ध तपस्या करते हुए अपनी आत्मा में रहे विकारों को निकालने का सुन्दर प्रयास किया है। अपने भजन की पंक्तियों के साथ मुनिश्री ने कहा-श्री जितेन्द्रमुनिजी म.सा. ने अपनी संकल्प शक्ति को जी करके बताया है और तप की महिमा क्या है, यह तप करके सबको बतलाया है।

शक्तिनगर से **व्याख्यात्री महासती श्री ज्ञानलता जी म.सा.** आदि ठाणा 10 अनुमोदना के लिए पधारे और घोड़ों का चौक से भी महासती चन्द्रकलाजी म.सा.की ओर से तप अनुमोदना करने **महासती श्री विनीतप्रभाजी म.सा.** आदि ठाणा पधारे। महासती मण्डल में **महासती श्री भाग्यप्रभाजी म.सा.** ने तप की अनुमोदना करते हुए फरमाया कि एक उपवास से कितना फल होता है और बेला और तेला करने से भगवान ने कितना फल बताया है, उसकी गणना करते हुए देखा जाए तो श्रद्धेय मुनि श्री ने 36 उपवास में करोड़ों करोड़ों उपवास कर लिए हैं। महासती जी ने फरमाया कि पत्थर को मूर्ति बनने के लिए कारीगर की टाँकी के नीचे आना ही पड़ता है तभी जाकर वह मूर्ति का रूप बनता है, सोने का आभूषण बनने के लिए अग्नि में तपना ही पड़ता है तभी वह आभूषण बनता है उसी तरह आत्मा को

पवित्र और शुद्ध बनाने के लिए तपस्या आवश्यक है। श्रद्धेय मुनिश्री की अप्रमत्तता के साथ की हुई तपस्या के महासती जी ने गुणगान किए। तत्पश्चात् **महासती श्री विनीतप्रभाजी म.सा.** ने भी सन्तरत्न की तपस्या के गुणगान किए और तप की महिमा का बखान किया। **व्याख्यात्री महासती श्री ज्ञानलताजी म.सा.** ने तपस्या की महिमा फरमाते हुए अपने प्रवचन के माध्यम से श्रावक- श्राविकाओं को तपस्या करने की प्रेरणा की और साथ ही श्रद्धेय मुनिश्री की तपस्या में प्रतिदिन नियमित वन्दना, स्वाध्याय आदि करते रहना जैसी विशेषताओं का बखान करते हुए गुणगान किए। ऐसे माहौल में हर कोई आतुर था कि तपस्वी सन्तरत्न के गुणगान करें। उसी कड़ी में श्रावक संघ का प्रतिनिधित्व करते हुए **श्री धर्मचन्दजी जैन रजिस्ट्रार** ने स्वरचित भजन के माध्यम से पूरी सभा में विराजित श्रावक-श्राविकाओं की ओर से अनुमोदना गीत प्रस्तुत किया। तत्पश्चात् श्राविका मण्डल की ओर से अध्यक्ष **श्रीमती सुमनजी सिंघवी** ने भजन के माध्यम से सभी श्राविकाओं की ओर से तपस्या के गुणगान किए। चूँकि तपस्वी श्रद्धेय मुनिश्री अभी युवावस्था में हैं और युवाओं से अधिक जुड़ाव रखते हैं तो युवक संघ के अध्यक्ष **श्री गजेन्द्रजी चौपड़ा** ने भी अपने स्वरचित भजन के माध्यम से अपने युवा साथियों की ओर से तपस्या के गुणगान कर सभा को मन्त्रमुग्ध कर दिया और साथ ही युवारत्न श्री हरिशंकरजी भंसाली ने मुनिश्री की तपस्या से प्रभावित होकर एक साथ नौ उपवास के प्रत्याख्यान ग्रहण करके युवक संघ का गौरव बढ़ाया। तपस्या के गुणगान में **वीर कोठारी परिवार** के सदस्य भी तप अनुमोदना गीत गाकर प्रफुल्लित हुए, साथ ही श्रद्धेय उपाध्यायप्रवर श्री मानचन्द्रजी म.सा. के सांसारिक वीरभ्राता **श्री महेन्द्रजी सेठिया** ने मुनिश्री की तपस्या के गुणगान करते हुए अपनी भावना प्रस्तुत की। **श्रद्धेय श्री अभयमुनिजी म.सा.** ने अपने द्वारा बनाए गए भजन की कुछ पंक्तियों के द्वारा श्रद्धेय मुनिश्री की तपस्या के गुणगान करते हुए श्रावक-श्राविकाओं को तप से जुड़ने की पावन प्रेरणा की।

तत्पश्चात् स्वयं तपस्वी सन्तरत्न **श्रद्धेय श्री जितेन्द्रमुनि जी म.सा.** ने प्रवचन सभा में 36 की तपस्या में भी खड़े होकर अपने भाव फरमाए। उन्होंने कहा कि कोई काम एक बार में हो या न हो, परन्तु एक बार जरूर हो जाता है और आपश्री ने फरमाया कि आपकी दीर्घ तपस्या के भाव बहुत पहले से थे, लेकिन कई बार छोटी-छोटी तपस्या करके सेवा कार्य को प्राथमिकता देते हुए दीर्घ तपस्या नहीं कर पाए, लेकिन आज उनके अन्दर की भावना सफल हुई। मुनिश्री ने अपनी इस तपस्या का पूरा श्रेय पूज्य उपाध्याय भगवन्त श्री मानचन्द्रजी म.सा. को देते हुए कहा कि आज जो कुछ भी मैं कर रहा हूँ मेरे पीछे उनका ही हाथ है और उनकी शक्ति प्रत्यक्ष-अप्रत्यक्ष में मुझे मिल रही है, साथ ही पूज्य आचार्य भगवन्त की असीम कृपा और आशीर्वाद से ही यह सब कुछ सम्भव हो पाया है। अपनी लघुता बताते हुए उन्होंने कहा कि मैंने तो कुछ भी नहीं किया है, सभी गुरुकृपा एवं सहयोगी सन्त मुनिराज के सहयोग से ही सम्भव हुआ है।

जोधपुर संघ अध्यक्ष **श्री सुभाषजी गुंदेचा** ने अपनी कविता के माध्यम से श्री संघ जोधपुर की ओर से मुनिश्री की तपस्या के गुणगान करते हुए जोधपुर संघ के परम सौभाग्यशाली होने की बात कही और हर्ष विभोर होकर मुनि श्री की कोटि-कोटि अनुमोदना की।

कार्यक्रम के अन्त में **श्रद्धेय श्री यशवन्तमुनिजी म.सा.** ने तपस्या की महत्ता पर अपना मार्मिक प्रवचन फरमाया और मुनिश्री द्वारा दैनिकचर्या बिना रुकावट के करते हुए साधना-आराधना पूर्वक तपस्या करने की कोटि-कोटि अनुमोदना की। मुनिश्री ने फरमाया कि लोग कहते हैं तपस्या करते हुए चक्कर आ जाते हैं, लेकिन प्रभु फरमाते हैं कि तपस्या करने से चार गति के चक्कर मिट जाते हैं। भरा हो पेट तो आसमान जगमगाता है और भूखा हो पेट तो

ईमान डगमगाता है, लेकिन जो तपस्या करता है आदरणीय और अनुमोदनीय है। तपस्या के साथ मुनि श्री पारणे में अभिग्रह करते हैं और ऐसा कहा जाता है कि जिनके अभिग्रह शीघ्र फलित हो जाते हैं वे निकट भवी होते हैं। आज ऐसे तपस्वी के प्रताप से ही नेहरू पार्क स्थानक में संवत्सरी से पूर्व ही संवत्सरी जैसा माहौल बन गया है।

तपस्या के कई पच्चक्खाण प्रवचन सभा में हुए, जिसमें 27 की तपस्या, 20 की तपस्या, 15 की तपस्या, 11 की तपस्या, 9 की तपस्या, अठाई की तपस्या और सैकड़ों की संख्या में तेले, उपवास तथा एकाशन हुए।

साथ ही चातुर्मास लगने के साथ ही प्रारम्भ हुई 20 विहरमान आराधना की पूर्णाहुति का कार्यक्रम भी इसी दिन सम्पन्न हुआ। इस पूरे कार्यक्रम का सुन्दर सञ्चालन श्रीमान अरुणजी मेहता ने किया। युवक परिषद् एवं श्राविका मण्डल के सभी कार्यकर्ताओं का इस कार्यक्रम के आयोजन में बहुत सुन्दर सहयोग रहा। *-नवरत्नमल गिड़िया-मन्त्री*

शक्तिनगर, जोधपुर-शक्तिनगर की पावन धरा पर चातुर्मास लगने के साथ ही धर्म ध्यान और तपस्या की लहर छाई हुई है। पूज्य गुरुदेव आचार्य श्री हीराचन्द्रजी म. सा. की असीम कृपा से व्याख्यात्री महासती श्री ज्ञानलताजी म.सा. आदि ठाणा-10 का चातुर्मास शक्तिनगर संघ को प्राप्त हुआ। चातुर्मास प्रवेश के दिन से ही प्रवचन प्रारम्भ हो गया और चातुर्मास लगने के साथ ही बीस विहरमान की आराधना का कार्यक्रम प्रारम्भ हुआ, जिसमें शक्तिनगर क्षेत्र में 70 से 80 साधकों ने आराधना में भाग लिया। 25 जुलाई से नियमित **एक क़दम धर्म की ओर** कक्षा का आयोजन भी हो रहा है जिसके अन्तर्गत अच्छी संख्या में युवा साथी एवं श्रावक-श्राविकाएँ भाग ले रहे हैं। महासती श्री भाग्यप्रभाजी म. सा. के मुखारविन्द से जीवन बदलने के कई सुन्दर तरीके और जीवन में हर परिस्थिति में अपने आप को समभाव में रखना, कर्म-सत्ता के परिणाम को ध्यान में रखते हुए अपने जीवन-निर्वाह के कार्य करना, जिसमें अकारण कर्म का बन्ध न हो, सुन्दर तरीके से जीवन को विनय सहित विवेक रखते हुए जीने की कला जैसी कई ज्ञानवर्धक शिक्षाओं के साथ युवा साथियों को अच्छे-अच्छे नियम लेने की प्रेरणा की जा रही है। श्रावण मास में अठाई की लड़ी नियमित चल रही है जिसके अन्तर्गत चातुर्मास लगने के प्रथम माह में ही लगभग 31 अठाई सम्पूर्ण हो चुकी हैं। साथ में 11 की, 15 की तपस्या भी हुईं और श्राविका श्रीमती निरूपाजी पटवा के 31 उपवास (मासक्षमण तप) शक्तिनगर की पावन धरा पर पूरा हो चुका है। श्रद्धेय श्री जितेन्द्रमुनि जी म.सा. की 36 की तपस्या के उपलक्ष्य में संघ द्वारा किए गए सामूहिक तेले के आह्वान में शक्तिनगर क्षेत्र से अच्छी संख्या में सामूहिक तेले हुए। नियमित प्रवचन में भी सभी उत्साह पूर्वक जिनवाणी श्रवण करने का लाभ ले रहे हैं। प्रतिदिन दोपहर में श्राविकाओं के लिए स्वाध्यायशाला एवं 13 से 23 वर्ष की युवतियों के लिए उत्थानशाला का कार्यक्रम चलाया जा रहा है, जिसके अन्तर्गत कई श्राविकाएँ एवं युवतियाँ ज्ञानार्जन कर रही हैं। शक्तिनगर की पावन धरा पर तपस्या की लहर के साथ-साथ, ज्ञान जिज्ञासु बन्धुओं की प्रवचन एवं प्रात: 8 से 9 की कक्षा में उपस्थिति सराहनीय है। प्रवचन-सभा का कुशल सञ्चालन अपनी काव्य रचना द्वारा युवा अध्यक्ष श्री गजेन्द्रजी चौपड़ा द्वारा किया जा रहा है। शक्तिनगर क्षेत्र के संयोजक श्री अशोकजी मेहता एवं उनके सभी सहयोगी कार्यकर्त्ता आतिथ्य सत्कार एवं सम्पूर्ण व्यवस्था का सुन्दर प्रबन्धन कर रहे हैं। *-गजेन्द्र चौपड़ा, जोधपुर*

घोड़ों का चौक, जोधपुर-सूर्यनगरी जोधपुर के भीतरी शहर में स्थित सामायिक स्वाध्याय भवन घोड़ों का चौक में जो कि रत्न संघ की राजधानी कही जाती है, उसी स्थानक में व्याख्यात्री महासती श्री चन्द्रकलाजी म. सा. आदि ठाणा का चातुर्मास धर्म-ध्यान एवं तप-त्याग के साथ गतिमान है। चातुर्मास लगने के साथ ही 20 विहरमान आराधना के साथ कई तरह के धार्मिक कार्यक्रम आयोजित हो रहे हैं। 20 विहरमान की आराधना में लगभग 30 से 35 साधकों ने भाग लिया। तपस्या की लड़ी में क्रमशः उपवास, आयम्बिल, बियासन, एकाशन एवं तेले की लड़ी निरन्तर चल रही है।

महासती दर्शनलताजी म.सा. ने भी 11 की तपस्या की। घोड़ों का चौक क्षेत्रीय संयोजक श्री नरेन्द्रजी बुबकिया

ने भी 10 की, शोभाजी सिंघवी ने 14 की, महकजी चौपड़ा और मधुजी जैन ने नौ की तपस्या की और भी अठाई के साथ-साथ संघ के आह्वान पर श्रद्धेय श्री जितेन्द्र मुनिजी म.सा.की तपस्या के पूर के उपलक्ष्य में सामूहिक तेले भी हुए। नियमित प्रार्थना, प्रवचन, वाचना आदि कार्यक्रमों में श्रावक-श्राविकाओं का उत्साह बना हुआ है। क्षेत्रीय कार्यकर्त्ता आतिथ्य सत्कार का लाभ ले रहे हैं और चातुर्मास की व्यवस्था में सभी सहयोग प्रदान कर रहे हैं।

-नरेन्द्र बुबकिया, संयोजक

अमरावती-आचार्यप्रवर पूज्य श्री हीराचन्द्रजी म.सा. की आज्ञानुवर्तिनी मधुर व्याख्यात्री महासती श्री चारित्रलताजी म.सा., महासती श्री भावनाजी म.सा. आदि ठाणा-4 का अमरावती के जैन स्थानक में ज्ञानाराधन, तपाराधन के साथ चातुर्मास गतिशील है। आप गुजराती समाज के स्थानक अम्बापेठ में प्रवचन के पश्चात् बड़नेरा रोड़ से चातुर्मास स्थल पधारे, जिसकी सूचना किसी को भी नहीं थी।

महासतियाँजी म.सा. का 19 जुलाई से प्रवचन प्रारम्भ हुआ। चार दिनों के प्रवचन के प्रभाव एवं ज्ञानवर्धक कक्षा से सभी प्रभावित हुए और स्वयं स्थानक भवन में आकर प्रवचन, दोपहर में नन्दीसूत्र, कर्मग्रन्थ, 25 बोल सभी गतिविधियों में भाग ले रहे हैं। एकाशन, आयम्बिल और तेले की लड़ी प्रारम्भ हो गई है। प्रत्येक रविवार को बच्चों के लिए संस्कार शिविर का आयोजन होता है। नन्दीसूत्र, प्रतिक्रमण, 25 बोल को कण्ठस्थ करने का भी संकल्प लिया गया है, जिसमें स्थानीय सुशील बहू मण्डल की सदस्यों का बहुत बड़ा योगदान रहा। आचार्य श्री हस्तीमलजी म.सा. द्वारा रचित पुस्तक 'जैनधर्म का मौलिक इतिहास' से संक्षिप्त रूप में प्रकाशित 'जैन इतिहास के प्रसङ्ग' की पुस्तकें वितरित की गई। लगभग 30-40 श्रावक परीक्षा से जुड़े, रोज संख्या में निरन्तर बढ़ोतरी हो रही है। प्रत्येक रविवार को दया, एकाशन, पाँच सामायिक की साधना की जा रही है। सभी श्रावक-श्राविकाओं में उत्साह-आनन्द की लहर है। संघ के समस्त पदाधिकारी, कार्यकारिणी सदस्य चातुर्मास को सफल बनाने में महत्त्वपूर्ण भूमिका अदा कर रहे हैं। सभा का सञ्चालन श्री सुरेशचन्दजी मुणोत, सचिव द्वारा हो रहा है। *-सुरेशचन्द मुणोत, सचिव*

सेलम-सरल स्वभावी व्याख्यात्री महासती श्री नि:शल्यवतीजी म.सा. आदि ठाणा-5 का बेंगलोर से विहार के पश्चात् होसुर, कृष्णगिरी, धर्मपुरी होते हुए 17 जुलाई, 2021 को सेलम नगर में श्री महेन्द्र कुमारजी बाबेल के निवास स्थान पर पदार्पण हुआ। 18 जुलाई को महावीर भवन, शंकर नगर स्थान में अपार खुशियों एवं गुरुदेवों के जय-जयकारों के साथ स्थानक भवन में मंगल प्रवेश हुआ। विहार में श्रावकों की अमूल्य सेवाएँ रहीं।

सभी श्रावक-श्राविकाएँ गदगद होकर उत्साहपूर्वक धर्म आराधना का लाभ उठा रहे हैं। चार महीनों के लिए आयम्बिल, एकाशन, बियासन और उपवास तथा प्रतिदिन एक घण्टा नवकार जाप की लड़ी एवं साप्ताहिक बोल, थोकड़ों की परीक्षा चल रही है, प्रात: की कक्षा एवं प्रवचन आदि में सभी हर्षित होकर उत्साह पूर्वक लाभ ले रहे हैं। दोपहर में 2.30 से 4.00 बजे तक प्रतिदिन शास्त्र एवं थोकड़े का अध्ययन किया जा रहा है। शाम को प्रतिदिन प्रतिक्रमण, चौबीसी, भजन, स्वाध्याय आदि का लाभ ले रहे हैं। 6 से 10 अगस्त 5 दिन तक 30 जनों ने 5-5 सामायिक सामूहिक रूप से की। चेन्नई, बेंगलोर, कोयम्बटूर, जोधपुर, हैदराबाद, तनकू, वेल्लूर, नीमच, जलगाँव, मुम्बई, रतलाम, इचलकरंजी, सवाईमाधोपुर आदि कई क्षेत्रों से दर्शनार्थी दर्शन-प्रवचन आदि का लाभ लेने आ रहे हैं। *-महेन्द्र कुमार बाबेल*

मैसूर-व्याख्यात्री महासती श्री रुचिताजी म.सा., महासती श्री विवेकप्रभाजी म.सा. आदि ठाणा-6 पूज्य गुरुदेव की असीम कृपा से चातुर्मासार्थ सुख-साता पूर्वक विराजमान हैं। यहाँ पर धर्म-ध्यान बहुत ही अच्छा चल रहा है। प्रात: 7 से 8 बजे तक श्रावक-श्राविकाओं एवं नवयुवकों द्वारा नवकार महामन्त्र का जाप हो रहा है। प्रात: 8 से 9 बजे

पूज्य महासतीजी द्वारा कक्षा ली जा रही है। प्रवचन प्रात: 9 से 10 बजे पूज्य महासती श्री रुचिताजी म.सा. एवं महासती श्री विवेकप्रभाजी म.सा. द्वारा 'अजब तेरी दुनिया-गजब तेरी सोच' विषय पर चल रहा है।

दोहपर 1 से 2 बजे तक शास्त्र वाचन, 2.00 से 3.30 बजे तक ज्ञान सीखने वालों के लिए समय रखा गया है। प्रतिक्रमण, 25 बोल, कर्मग्रन्थ, उत्तराध्ययनसूत्र, दशवैकालिकसूत्र, गमा आदि सीख रहे हैं। प्रवचन की उपस्थिति प्रतिदिन 300 के आसपास रहती है, रविवार को लगभग 500 तक पहुँच जाती है। उपवास, आयम्बिल, एकाशन, बियासन, नींवी, संवर, बेले, तेले और पचोले की लड़ी चल रही है। श्रीमती ललिताजी धोका के 28 की तपस्या का पारणा हो गया है। आज श्रीमती अंकिताजी भण्डारी के 15 की तपस्या और एक बहन के 7 की तथा एक बहन के 6 की तपस्या चल रही है। श्री पवनजी बाफना पचोले-पचोले पारणा करते हैं।

दर्शनार्थियों का आवागमन जारी है। बेंगलोर, रायचूर, हुबली, प्रीयापटना, कुर्ग, राजस्थान और चेन्नई आदि क्षेत्रों से दर्शनार्थी पधार रहे हैं।

-वी. सुभाषचन्द धोक, मानद् मन्त्री

श्रावक संघ की सञ्चालन समिति एवं कार्यकारिणी बैठक 02 अक्टूबर, 2021 को

अखिल भारतीय श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ की सञ्चालन समिति एवं कार्यकारिणी बैठक शनिवार, 02 अक्टूबर, 2021 को पीपाड़सिटी में रखी गई है। सभी सञ्चालन समिति एवं कार्यकारिणी सदस्य सादर आमन्त्रित हैं।

-धनपत सेठिया, संघ-महामन्त्री

संघ एवं संघीय संस्थाओं की संयुक्त वार्षिक आमसभा 03 अक्टूबर, 2021 को

संघ एवं संघ की सभी सहयोगी संस्थाओं की वार्षिक साधारण सभा रविवार, 03 अक्टूबर, 2021 को दोपहर 12.00 बजे पीपाड़शहर, जिला-जोधपुर (राज.) में रखी गई है, जिसमें सभी संघ-सदस्यों की उपस्थिति सादर प्रार्थित है। वार्षिक साधारण सभा में विचारणीय बिन्दु इस प्रकार हैं-

1. मंगलाचरण
2. स्वागत-राष्ट्रीय अध्यक्ष महोदय द्वारा
3. गत आमसभा बैठक की कार्यवाही का पठन, अनुमोदन तथा प्रगति की जानकारी।
4. गत सञ्चालन समिति/कार्यकारिणी की बैठक में लिए गए निर्णयों एवं सुझावों की जानकारी।
5. कार्यकारिणी द्वारा अनुमोदित संघ व संघ की सहयोगी संस्थाओं के त्रिवार्षिक प्रतिवेदन का अनुमोदन।
6. संघ व संघ की संस्थाओं की कार्यकारिणियों द्वारा स्वीकृत वर्ष 2020-2021 के अंकेक्षित वास्तविक आय-व्यय एवं वर्ष 2021-2022 के प्रस्तावित बजट का अनुमोदन।
7. अंकेक्षक की नियुक्ति।
8. संघ की सहयोगी संस्थाओं के अध्यक्षगणों एवं संयोजकों द्वारा अभिव्यक्ति।
9. राष्ट्रीय संघाध्यक्ष महोदय द्वारा अभिव्यक्ति।
10. शासन सेवा समिति द्वारा अभिव्यक्ति।
11. संघ संरक्षक मण्डल संयोजक द्वारा अभिव्यक्ति।
12. वर्ष 2021-2024 की समयावधि के लिये संघ संरक्षक मण्डल द्वारा प्रस्तावित नये राष्ट्रीय संघाध्यक्ष एवं

सहयोगी संस्थाओं के अध्यक्षों के नामों की पुष्टि।

13. नये राष्ट्रीय संघाध्यक्ष महोदय द्वारा अभिव्यक्ति।
14. अन्य विषय अध्यक्ष महोदय की आज्ञा से।
15. धन्यवाद-संघ महामन्त्री द्वारा।

नोट:- पीपाड़सिटी, जिला-जोधपुर पधारने पर आपको जिनशासन गौरव परमश्रद्धेय आचार्यप्रवर श्री 1008 श्री हीराचन्द्रजी म.सा., महान् अध्यवसायी सरस व्याख्यानी श्रद्धेय श्री महेन्द्रमुनिजी म.सा. आदि ठाणा के दर्शन-वन्दन, प्रवचन-श्रवण का लाभ भी प्राप्त होगा।

संघ के सभी सदस्यों से अनुरोध है कि संघहित में अपने लिखित सुझाव संघ के प्रधान कार्यालय को 20 सितम्बर, 2021 तक भेजने की कृपा करें। संघहित के उपयोगी सुझावों पर यथोचित विचार एवं निर्णय करने का प्रयास रहेगा। संघ-सदस्यों को साधारण सभा में भाग लेने हेतु आप अपने क्षेत्र में भी अवश्य सूचना करें।

-धनपत सेठिया, महामन्त्री, सामायिक-स्वाध्याय भवन, प्लॉट नं. 2, नेहरुपार्क, जोधपुर-342003 (राज.)

मानसरोवर-जयपुर में श्री जैन रत्न युवती मण्डल द्वारा 'धोवन पानी दिवस' का आयोजन

आज के समय में हमारे जैन परिवारों में धोवन पानी सहज नहीं मिलता है, सन्त-सतियों को भी निर्दोष जल नहीं मिल पाता है, यह हमारे लिए चिन्तनीय विषय है। इसी को ध्यान में रखते हुए युवती मण्डल द्वारा परम श्रद्धेय मधुरव्याख्यानी श्री गौतममुनिजी म.सा. आदि ठाणा-3 के सान्निध्य में 'यदि हर घर में होगा धोवन जल, सन्त पदार्पण होगा सफल' का सन्देश देने के लिए 7 अगस्त, 2021 को 'धोवन पानी दिवस' के रूप में मनाया गया।

श्रद्धेय श्री गौतममुनिजी म.सा. ने कच्चे पानी के त्याग की महत्ता बताते हुए फरमाया कि एक बूँद पानी के अन्दर असंख्य अप्कायिक जीव होते हैं। एक बूँद के जीव यदि सरसों के दाने के आकार का शरीर बना लें तो पूरे जम्बूद्वीप में भी नहीं समा सकते, जरा सोचो। कच्चे पानी के उपयोग से कितने सारे जीवों की विराधना हो जाती है। कच्चे पानी के त्याग से उन जीवों को तो अभयदान मिलेगा ही, साथ ही पञ्च-महाव्रतधारी सन्त भगवन्तों के सुपात्र दान का सहज ही लाभ प्राप्त हो सकेगा। अहो भाव के साथ दिया गया सुपात्र दान का लाभ सम्यक्त्व को उपलब्ध कराता है और तीर्थङ्कर गोत्र बन्ध का कारण भी हो जाता है, कितनी बड़ी उपलब्धि है कच्चे पानी के त्याग की। यदि साधु-साध्वी घर से खाली चले जाते हैं तो इससे बढ़कर और क्या गरीबी हो सकती है और यदि सम्पूर्ण जीवनकाल में एक बार भी यदि निर्दोष धोवनपानी बहराने का लाभ प्राप्त कर लिया तो जन्म-जन्म के पाप समाप्त होते देर नहीं लगती।

प्रवचन के पश्चात् कार्यक्रम शुरु हुआ, जिसके अन्तर्गत युवती मण्डल की सदस्याओं द्वारा प्रत्यक्ष रूप से धोवन पानी बनाने की विधि बताई गई एवं राख के पैकेट और पानी छानने के लिए कपड़ा भी वितरित किया गया। लगभग 180 लोगों ने नियमित रूप से धोवन पानी बनाने का संकल्प लिया, जिसमें कई लोगों ने नियमित कच्चा पानी नहीं पीने का और कई सारे लोगों ने सुबह 10 बजे तक कच्चा पानी नहीं पीने का त्याग किया।

कोविड-19 गाइडलाइन का पालन करते हुए लोगों की अधिक संख्या को देखते हुए सामग्री वितरण के 2 काउण्टर बनाए गए एवं प्रत्यक्ष धोवन पानी की विधि बताने के भी दो काउण्टर लगाए गए। कार्यक्रम में छोटे बच्चों ने धोवन पानी की उपयोगिता बताते हुए बहुत सुन्दर प्रस्तुति दी, जिसे देखकर उपस्थित लोग भाव-विभोर हो गए और नियमित रूप से धोवन पानी बनाने का निश्चय किया।

-श्रीमती संगीता लोढ़ा, मन्त्री

पल्लीवाल समाज में धर्मरुचि एवं गुरुभक्ति का जागरण

आज मानसरोवर के महावीर भवन में बड़ी चहल-पहल थी। सबके चेहरे पुलकित थे और सबके क़दम स्थानक की ओर बढ़ रहे थे। आज जयपुर निवासी सम्पूर्ण स्थानकवासी पल्लीवाल जैन श्रावक-श्राविका सपरिवार सन्तों की सन्निधि में कुछ जानने और पाने की जिज्ञासा के साथ उपस्थित हुए। देखते ही देखते 250-350 के बीच समाज के लोग एकत्रित हुए। प्रवचन के पश्चात् कार्यक्रम प्रारम्भ हुआ और सर्वप्रथम श्री राजेन्द्रजी राजा ने सभा का सञ्चालन करते हुए उपस्थित लोगों में से कुछ वीर परिवार के सदस्यों का भी परिचय कराया, तो साथ ही जाने-पहचाने सेवानिष्ठ कार्यकर्त्ताओं का भी परिचय देकर सबको आगे बढ़ने की प्रेरणा दी। उसी कड़ी में निवर्तमान राष्ट्रीय अध्यक्ष श्री सुमेरसिंहजी बोथरा ने भी संघभक्ति और गुरुभक्ति के लिए प्रेरक शब्दों से प्रोत्साहित किया।

सबसे अन्त में मधुरव्याख्यानी **श्रद्धेय श्री गौतममुनिजी म.सा.** ने अपने प्रभावी उद्बोधन के माध्यम से पल्लीवाल क्षेत्र के अनेक ग्राम-नगरों का जिक्र करते हुए वहाँ भूतकाल में विचरने वाले सन्त और महासतियों के उपकारों का स्मरण कराया और उस क्षेत्र से दीक्षित एक-एक सन्त और सतियों के नाम लेकर उनकी आत्म-साधना एवं विशेषताओं की चर्चा की। आचार्यप्रवर की मेहरबानी को याद दिलाते हुए कहा कि आचार्यप्रवर आपके क्षेत्र पर कितना उपकार करने का मानस रखते हैं कि कोई वर्ष ऐसा नहीं होता जब एक-दो सन्त-सतियों का चातुर्मास नहीं होता। स्वयं आचार्यप्रवर ने हिण्डौनसिटी में चातुर्मास कर पूरे क्षेत्र में जो अलख जगाई वह अपने आपमें एक इतिहास बन गया। महापुरुषों के इन उपकारों का स्मरण करते हुए हम सबकी यह जिम्मेदारी बनती है कि हम गुरुभक्ति में और संघभक्ति में अपने आपको प्राणपण से अर्पित करें। यह रत्नसंघ हमारा अपना संघ है जो जड़ पूजा को नहीं गुण-पूजा को महत्त्व देता है। हमें शुद्ध स्थानकवासी परम्परा के सिद्धान्तों का दृढ़ता से पालन करना है। हमें अवसरवादी नहीं सिद्धान्तवादी बनना है। जिस गुरु के प्रति जो भक्ति का ध्येय बनाया है उनके हर निर्देश का पालन ईमानदारी से करना है तो साथ ही जो जहाँ रहता है वह अपने नजदीक के धर्मस्थान में जाकर अपनी धर्म साधना से पहचान बनाए। कहना होगा मुनिश्री की इस प्रेरणा को सुनकर अनेक भाई-बहिनों ने खड़े होकर नजदीक के धर्मस्थानक में साधना करने का संकल्प लिया। पल्लीवाल समाज की ओर से श्री श्रीचन्दजी जैन ने मानसरोवर संघ को इस पुनीत सम्मेलन के आयोजन हेतु धन्यवाद ज्ञापित किया, साथ ही इसके प्रयासों एवं सहयोग हेतु श्री राजेन्द्रजी राजा, श्री योगेशजी जैन, श्री देवेन्द्रजी जैन का भी आभार प्रकट किया। इस अवसर पर स्थानकवासी पल्लीवाल समाज की ओर से मानसरोवर संघ को रुपये 31,000/- की सहयोग राशि प्रदान की गई। *-धर्मचन्द जैन, मन्त्री*

आध्यात्मिक ज्ञान चेतना शिविर का आयोजन

श्री जैन रत्न श्राविका मण्डल, जयपुर एवं श्री वर्द्धमान स्थानकवासी जैन श्रावक संस्था, मानसरोवर-जयपुर के संयुक्त तत्त्वावधान तथा मधुरव्याख्यानी श्रद्धेय श्री गौतममुनिजी म.सा. आदि ठाणा-3 की सन्निधि में 16 से 20 अगस्त तक आध्यात्मिक ज्ञान चेतना शिविर का आयोजन किया गया। इस पञ्चदिवसीय शिविर में लगभग 160 श्राविकाओं ने भाग लेकर अपने ज्ञान का संवर्द्धन किया। शिविर के प्रथम दिन श्राविकारत्न श्रीमती सुमनजी कोठारी ने संज्ञा का थोकड़ा सिखाया। श्री पदमचन्दजी गाँधी ने 'आध्यात्मिक कैसे बनें' विषय पर उद्बोधन दिया तथा श्रीमती शकुन्तलाजी कर्णावट ने धार्मिक खेल करवाये। मानसरोवर के बच्चों द्वारा प्रेरणाप्रद चारित्रिक अभिनय किया गया। दूसरे दिन श्री राकेशजी जैन ने चार अनुयोगों पर प्रकाश डाला, श्रीमती मंजुजी सेठ तथा शहर की टीम ने धार्मिक खेल करवाये और बच्चों ने चारित्रिक अभिनय किया। तीसरे दिन सुश्रावक श्री हेमन्तजी डागा ने जीव के 563 भेदों की विवेचना की, श्री दिलीपजी जैन ने 'कर्मन की गति न्यारी मुझ पर भी है भारी' विषय पर गम्भीर उद्बोधन दिया। श्रीमती

सोनूजी हीरावत एवं जवाहरनगर टीम द्वारा धार्मिक खेल खिलवाये गये। चतुर्थ दिन श्रीमती सोनालीजी बोथरा ने आठ आत्माओं के स्वरूप का विवेचन किया तथा प्रेरक वक्ता श्री श्रीकान्तजी गुप्ता ने सहनशीलता पर रोचक उद्‌बोधन दिया। श्रीमती उषाजी मेहता एवं बापूनगर टीम ने धार्मिक खेल खिलवाये। अन्तिम दिवस पर श्री राकेशजी जैन ने गुणस्थान का मर्म समझाया तथा श्री श्रीकान्तजी गुप्ता द्वारा सामञ्जस्य की शक्ति के महत्त्व का प्रतिपादन किया गया।

शिविर के प्रत्येक दिन श्रद्धेय श्री गौतममुनिजी जी म.सा. ने अपने मर्म स्पर्शी उद्‌बोधन में फरमाया कि विवेक से कार्य करें किसी से दुश्मनी नहीं पालें, अच्छे श्रोता बनें, आभार प्रकट करना सीखें, सफल लोगों से प्रेरणा अवश्य लें और आलोचना करने से बचे, अपना एक पल भी बर्बाद नहीं करें, जीवन को उन्नत बनाने के लिए विवेक से कार्य करें।

समापन समारोह की अध्यक्षता श्रीमती मीनाजी गोलेच्छा ने की एवं जयपुर के गणमान्य श्रावकों की महनीय उपस्थिति रही। श्री राजेन्द्रजी राजा ने मानसरोवर श्रीसंघ की ओर से अतिथियों का अभिनन्दन किया तथा शिविरार्थियों का आभार व्यक्त किया और बच्चों की सुन्दर प्रस्तुति पर प्रमोद व्यक्त किया। *-श्रीमती चन्द्रकान्ता लोढ़ा, मन्त्री*

विद्यार्थियों के जीवन-निर्माण में बनें सहयोगी

छात्र संरक्षण-संवर्द्धन-पोषण योजना

(प्रतिवर्ष एक छात्र के लिए रुपये 24,000 सहयोग की अपील)

आचार्य हस्ती आध्यात्मिक शिक्षण संस्थान, (सिद्धान्त शाला) जयपुर, संघ व समाज के प्रतिभाशाली छात्रों के सर्वांगीण विकास के लिए वर्ष 1973 से सञ्चालित संस्था है। इस संस्था से अब तक सैकड़ों विद्यार्थी अध्ययन कर प्रशासकीय, राजकीय एवं प्रोफेशनल क्षेत्र में कार्यरत हैं। बहुत छात्र व्यवसायिक क्षेत्रों में सेवारत हैं। समय-समय पर ये संघ-समाजसेवी कार्यों में निरन्तर अपनी सेवाएँ भी प्रदान कर रहे हैं। वर्तमान में भी यहाँ अध्ययनरत विद्यार्थियों को धार्मिक-नैतिक संस्कारों सहित छात्रों को उच्च अध्ययन के लिए उचित आवास-भोजन की निःशुल्क व्यवस्थाएँ प्रदान की जाती है। व्यावहारिक अध्ययन के साथ छात्रों को धार्मिक अध्ययन की व्यवस्था भी संस्था द्वारा की जाती है। वर्तमान में संस्थान में 71 विद्यार्थियों के लिए अध्ययनानुकूल व्यवस्थाएँ हैं। संस्था को सुचारू रूप से चलाने एवं इन बालकों के लिए समुचित अध्ययननाकूल व्यवस्था में आप-सबका सहयोग अपेक्षित है। आपसे निवेदन है कि छात्रों के जीवन-निर्माण के इस पुनीत कार्य में बालकों के संरक्षण-संवर्द्धन-पोषण में सहयोगी बनें।

इसमें सहयोगी बनने वाले महानुभावों के नाम जिनवाणी में प्रकाशित किये जायेंगे। संस्थान के लिए पूर्व छात्रों के साथ निम्न महानुभावों का सहयोग प्राप्त हुआ है-

6. श्री ज्ञानचन्दजी, विनयजी, श्रीमती सुमनजी कोठारी, जयपुर	25,000/-
7. श्री कमलचन्दजी, श्रीमती सुनीताजी जैन, मनवाजी का बाग, जयपुर	25,000/-
8. श्री लोकेश कुमारजी जैन, सवाईमाधोपुर (आई.आर.एस.), भोपाल (पूर्व छात्र)	24,000/-
9. श्री अरविन्द कुमारजी जैन 'उप-प्राचार्य', गंगापुर-गाज़ियाबाद, (पूर्व छात्र)	24,000/-
10. श्री पवन कुमारजी जैन (सी.ए.), जयपुर (पूर्व छात्र)	18,000/-
11. श्री मनोज कुमारजी नागौरी, मुम्बई (पूर्व छात्र)	12,000/-
12. श्री सुभाषजी बोरदिया, जामनगर (गुजरात) (पूर्व छात्र)	11,000/-

आप द्वारा दिया गया आर्थिक सहयोग 80जी धारा के तहत कर मुक्त होगा। आप यदि सीधे बैंक खाते में सहयोग कर रहे हैं तो चेक की कॉपी, ट्राँजेक्शनस्लिप अथवा जानकारी हमें अवश्य भेंजे।

खाते का विवरण:-Name : ***GAJENDRA CHARITABLE TRUST***, Account Type : *Saving*, Account Number : ***10332191006750***, Bank Name : *Punjab National Bank*, Branch : Khadi Board, Bajaj Nagar, Jaipur, Ifsc Code : PUNB0103310, Micr Code : 302022011, Custumer ID : 35288297

निवेदक : डॉ. प्रेमसिंह लोढ़ा (व्यवस्थापक), सुमन कोठारी (संयोजक), अधिक जानकारी हेतु सम्पर्क करें-दिलीप जैन 'प्राचार्य' 9461456489, 7976246596

श्री अ.भा. साधुमार्गी जैन संघ के अन्तर्गत प्रदत्त पुरस्कारों हेतु प्रविष्टियाँ आमन्त्रित

1. आचार्य श्री नानेश समता पुरस्कार-पात्रता एवं नियम-(1) यह पुरस्कार आचरण पर आधारित है। जिस व्यक्ति के जीवन में समता दर्शन और व्यवहार प्रत्यक्ष रूप से परिलक्षित होता है वही व्यक्ति इस पुरस्कार हेतु नामाङ्कित हो सकता है। (2) इस पुरस्कार के लिए जो स्वयं को पात्र समझते हैं आवेदन कर सकते हैं। अन्य व्यक्ति अथवा संस्था द्वारा भी इस प्रकार के श्रेष्ठ व्यक्ति का नाम प्रस्तावित किया जा सकता है। (3) पुरस्कार के लिए जाति, धर्म एवं उम्र आदि का कोई बन्धन नहीं रहेगा। (4) पुरस्कृत होने वाले समता मनीषी को दो लाख रुपये का चैक, अभिनन्दन-पत्र एवं स्मृति चिह्न किसी विशिष्ट दिवस अथवा किसी गरिमामय समारोह में सम्मानपूर्वक भेंट किया जाएगा। **निवेदक**-जस्टिस जे. के. रांका, जयपुर (संयोजक, आचार्यश्री नानेश समता पुरस्कार)।

2. आचार्य श्री नानेश जनसेवा पुरस्कार-पात्रता एवं नियम-(1) यह पुरस्कार शिक्षा, समाजसेवा, अध्यात्म, स्वास्थ्य, आर्थिक उत्थान, कृषि, पशुपालन, वन-संरक्षण, पर्यावरण, व्यसनमुक्ति, जलसंरक्षण इत्यादि जनसेवा-क्षेत्रों में कीर्तिमान स्थापित करने वाले व्यक्ति अथवा संस्था को प्रदान किया जाता है। (2) जनसेवा पुरस्कार हेतु किसी भी वर्ग, वर्ण या समाज का व्यक्ति अथवा संस्था, जो भारत में उपर्युक्त जनसेवा में कार्यरत हो, नामाङ्कित किया जा सकता है। (3) आवेदन-पत्र में नाम, पता, मोबाइल नम्बर, ईमेल, कार्यक्षेत्र आदि का पूर्ण उल्लेख हो। जिस व्यक्ति अथवा संस्था को नामाङ्कित किया जा रहा है, उसके द्वारा प्रदत्त सेवाओं का रिकॉर्ड अर्थात् समाचार-पत्र की कटिंग, फोटोग्राफ्स आदि भी अवश्य भिजवाएँ। (4) नामाङ्कित व्यक्ति एवं संस्था की सेवा से लाभान्वित होने वाले व्यक्तियों अथवा संस्थाओं के लेटर-हैड पर अनुशंसा-पत्र भी संलग्न किये जा सकते हैं। चूँकि यह पुरस्कार सेवाकार्य करने वाले व्यक्ति अथवा संस्था को दिया जा रहा है। (5) इस हेतु चयनित व्यक्ति/संस्था को श्री अ. भा. साधुमार्गी जैन संघ की ओर से दो लाख की राशि का चैक, अभिनन्दन-पत्र एवं स्मृति चिह्न किसी विशिष्ट दिवस अथवा गरिमामय समारोह में सम्मानपूर्वक भेंट किया जायेगा। **निवेदक**-अनिल पारख, रायपुर (संयोजक, आचार्यश्री नानेश जनसेवा पुरस्कार)।

3. सेठ श्री चम्पालाल सांड स्मृति उच्च प्रशासनिक सेवा पुरस्कार-पात्रता एवं नियम-(1) यह पुरस्कार **Award of Excellence** के रूप में भारत सरकार की उच्च प्रशासनिक सेवाओं में कार्यरत, जो जैन धर्मावलम्बी शीर्षस्थ पदाधिकारी के रूप में विशेष ख्याति अर्जित कर जैन समाज को गौरवान्वित करते हैं, वे इस पुरस्कार हेतु चयनित किए जाने के पात्र समझे जाते हैं। (2) किसी भी उपयुक्त पदाधिकारी का, जो जैन मतावलम्बी हो, उपर्युक्त पुरस्कार हेतु नामाङ्कन प्रस्तुत किया जा सकता है। (3) जिस व्यक्ति को नामाङ्कित किया जा रहा है, कृपया उसका पूरा नाम, पता, प्रशासनिक पद, सम्पर्क विवरण, सेवा-क्षेत्र, निष्पादन रिकॉर्ड आदि का विस्तृत उल्लेख नामाङ्कन /संस्तुति में समाविष्ट करें। (4) इस हेतु चयनित व्यक्ति को श्री अ. भा. साधुमार्गी जैन संघ की ओर से एक लाख की राशि का चैक, अभिनन्दन-पत्र एवं स्मृति चिह्न किसी विशिष्ट दिवस अथवा गरिमामय समारोह में

सम्मानपूर्वक भेंट किया जायेगा। **निवेदक**–उत्तमचन्द नाहटा, दिल्ली (संयोजक, सेठ श्री चम्पालाल साण्ड स्मृति उच्च प्रशासनिक सेवा पुरस्कार)।

4. स्व. श्री प्रदीप कुमार रामपुरिया स्मृति साहित्य पुरस्कार-पात्रता एवं नियम–(1) यह पुरस्कार जैनधर्म, दर्शन, इतिहास, कला एवं संस्कृति तथा जैन साहित्य, काव्य कला एवं संस्कृति और कथा, निबन्ध, नाटक, संस्मरण एवं जीवनी आदि के सम्बन्ध में लिखित मौलिक ग्रन्थ पर दिया जाता है। (2) पुरस्कार हेतु प्रकाशित/अप्रकाशित, (पाण्डुलिपि) दोनों प्रकार की कृतियाँ निर्धारित आवेदन-पत्र के साथ प्रस्तुत की जा सकती हैं। (3) अन्य संस्थाओं द्वारा पूर्व में पुरस्कृत कृति पर यह पुरस्कार नहीं दिया जावेगा। (4) प्रकाशित कृति का प्रकाशन पुरस्कार हेतु घोषित अवधि में (वर्ष 2016 से पूर्व नहीं) एवं घोषित विषय-परिधि में ही होना चाहिये। यानी पुरस्कार हेतु प्रस्तुत कृति का प्रकाशन वर्ष 2016 के पश्चात् का होना चाहिए। (5) पुरस्कार मूल्यांकन के लिए कृति की मुद्रित अथवा पाण्डुलिपि की चार प्रतियाँ निःशुल्क भेजनी होंगी। पाण्डुलिपि की 3 प्रतियाँ आवेदक को पुनः लौटा दी जायेंगी। मुद्रित कृतियाँ नहीं लौटाई जायेंगी। (6) अप्रकाशित कृति (पाण्डुलिपि) की प्रतियाँ स्पष्ट टंकण की हुई अथवा हस्तलिखित, सुवाच्य एवं जिल्द बँधी होनी चाहिये। (7) प्रतिभागी विद्वानों के लिए यह आवश्यक होगा कि वे कृति के सम्बन्ध में स्वयं की कृति होने एवं इसके मौलिक होने का प्रमाण पत्र साथ भेंजे। (8) पुरस्कार के अन्तर्गत संघ की ओर से 51 हजार रुपये की राशि का चैक, अभिनन्दन-पत्र एवं स्मृति चिह्न किसी विशिष्ट दिवस अथवा गरिमामय समारोह में सम्मानपूर्वक भेंट किया जायेगा। **निवेदक**–राष्ट्रीय महामन्त्री, श्री अ.भा.सा.जैन संघ।

प्रविष्टियाँ भिजवाने का पता–केन्द्रीय कार्यालय, श्री अ. भा. सा. जैन संघ, समता भवन, आचार्यश्री नानेश मार्ग, नोखा रोड़, गंगाशहर, बीकानेर-334401 (राजस्थान) फोन 0151-2270261, 2270359, 9116109777 ईमेल ho@sadhumargi.com

संक्षिप्त समाचार

जोधपुर-जोधपुर में कक्षा 10 से ऊपर पढ़ने वाले जैन विद्यार्थियों के लिए कुशल जैन, पावटा, छात्रावास में आवास एवं भोजन की सुविधा उपलब्ध है। **सम्पर्क सूत्र**–मूलचन्द बाफना, सिद्धार्थ कांकरिया, मो. 9461549178

बधाई

जोधपुर-जयनारायण व्यास विश्वविद्यालय के संस्कृत विभाग की शोधार्थी जीनतजहां पठान को पी-एच.डी की

उपाधि प्रदान की गई है। आपने संस्कृत-विभाग के पूर्व प्रोफेसर एवं पूर्व अधिष्ठाता प्रो. धर्मचन्द जैन के निर्देशन में 'स्वातन्त्र्योत्तरकालीन राजस्थानी कवि पण्डित मूलचन्द शास्त्री' की संस्कृत काव्य-कृतियों का समीक्षात्मक अध्ययन विषय पर शोध कार्य पूर्ण किया है। आपके कई शोध-पत्र राष्ट्रीय पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित हो चुके हैं। वहीं कई गोष्ठियों में शोध-पत्र वाचन भी किया है।

बजरिया-सवाईमाधोपुर-श्री प्रियांशुजी सुपुत्र श्री पदमचन्दजी-श्रीमती सन्तोषजी जैन ने जनवरी, 2021 में

आयोजित सी.ए. फाइनल की परीक्षा प्रथम प्रयास में उत्तीर्ण की। आपका परीक्षा के उपरान्त K.P.M.G. (C.A.) पद पर गुरुग्राम में चयन हुआ है।

नाशिक-श्री ऋतुज कुमारजी सुपुत्र श्री शीतलभाई प्रकाशचन्द्रजी सुराणा ने आर्किटेक्ट (B.Arch.) की परीक्षा 90% के साथ उत्तीर्ण की है।

श्रद्धाञ्जलि

जयपुर-धर्मनिष्ठ वीरभतीजा वधू सुश्राविका श्रीमती अंजूजी धर्मसहायिका श्री अशोकजी चोरड़िया का 8 मई,

2021 को 56 वर्ष की आयु में देहावसान हो गया। आप अपने सास-ससुर स्व. श्रीमती रूपदेवीजी धर्मपत्नी संथारा साधक स्व. श्री भागचन्दजी सुपुत्र स्व. श्रीमती रूपादेवीजी-स्व. श्री कुन्दनमलजी चोरड़िया (गीजगढ़ वाले) की अनुकरणीय सेवा में संलग्न रही। आपका दिल्ली से जोधपुर सन्त-सतीवृन्द के दर्शनार्थ नियमित आना रहता था। आप सेवा शुश्रूषा में समर्पित रहती थीं। आप परम आराध्या रत्नसंघीय तत्त्वचिन्तिका महासती श्री रतनकँवरजी म.सा. की सांसारिक भतीजावधू थी। सम्पूर्ण परिवार आचार्यप्रवर, उपाध्यायप्रवर एवं समस्त सन्त-सतीवृन्द के प्रति पूर्णत: समर्पित है। *-विनयचन्द डागा, कार्याध्यक्ष*

बीजापुर-धर्मनिष्ठ, संघ-सेवी सुश्रावक श्री संजयजी सुपुत्र श्री हस्तीमलजी रूणवाल का 28 जुलाई, 2021 को

देहावसान हो गया। आपकी सन्त-सतीवृन्द के प्रति अगाध श्रद्धा-भक्ति थी। सबके साथ सामञ्जस्य पूर्ण व्यवहार आपके जीवन की प्रमुख विशेषता थी। सम्पूर्ण रूणवाल परिवार रत्नसंघ की सभी गतिविधियों में सक्रिय रूप से जुड़ा हुआ है और सन्त-सतीवृन्द की सेवा तथा स्वधर्मी भाई-बहिनों के आतिथ्य-सत्कार में सदैव तत्पर रहता है। *-धनपत सेठिया, महामन्त्री*

जोधपुर-धर्मनिष्ठ सुश्रावक श्री पन्नालालजी सुपुत्र स्व. श्री अमरचन्दजी सूर्या का 4 अगस्त, 2021 को देहावसान

हो गया। पारिवारिक सुसंस्कारों से संस्कारित, धार्मिक संस्कारों के प्रति जागरूक, सन्त-सतीवृन्द की सेवा में तत्पर रहने वाले आपका जीवन सरलता, मधुरता, सहिष्णुता, उदारता जैसे सद्गुणों से ओतप्रोत था। सन्त-सतीवृन्द की सेवा तथा स्वधर्मी भाई-बहिनों के आतिथ्य-सत्कार में सूर्या परिवार सदैव तत्पर रहा है। आपके सुपुत्र आदरणीय श्री पुखराजजी एवं महावीरजी सूर्या संघ की गतिविधियों में सक्रिय रूप से अपनी सेवाएँ प्रदान कर रहे हैं। *-धनपत सेठिया, महामन्त्री*

बीकानेर-धर्मनिष्ठ, संघ-सेवी सुश्राविका श्रीमती गुलाब देवीजी धर्मसहायिका स्व. श्री चंचलमलजी सुराणा का 7

अगस्त, 2021 को 99 वर्ष की आयु में त्याग, प्रत्याख्यान सहित निधन हो गया। आप समर्थ गच्छ की विदुषी महासती श्री कंचनकँवरजी म.सा. की सांसारिक भाभी थीं। पिछले 20 साल से आप प्रतिदिन 10-12-16 सामायिक करती थी, जिनमें 3-4 घण्टे ध्यान-आराधना होती थी। इस उम्र में भी बगैर सहारे के सामायिक करती थीं। आपका जीवन धर्म-ध्यान, तप त्याग से अनुरञ्जित था। आप सभी परिजनों, सुपुत्र-सुपुत्रवधुओं, सुपुत्री-जँवाइयों, पोते-पोतियों, दोहिते-दोहित्रियों, भाञ्जे-भाञ्जियों के परिवार के सभी सदस्यों के साथ आत्मीय भाव से रहते थे। अन्तिम समय में सभी परिग्रह का त्यागकर दिया था। आपकी समभाव की साधना उत्कृष्ट थी। *-गजेन्द्र सुराणा*

बालोतरा-धर्मनिष्ठ सुश्राविका श्रीमती प्यारीदेवीजी धर्मपत्नी स्व. श्री केशरीमलजी छाजेड़ का 12 अगस्त, 2021

को 86 वर्ष की आयु में देहावसान हो गया। आप दिन भर सामायिक एवं साधु-साध्वियों की सेवा में तत्पर रहती थीं। आपका पूरा परिवार धार्मिक गतिविधियों से जुड़ा हुआ है। आपके सुपुत्र श्री जवेरीलालजी, लूणचन्दजी ने स्थानकवासी समाज के कई पदों को सुशोभित करते हुए समाज को गौरवान्वित किया है। आप अपने पीछे भरा-पूरा परिवार छोड़कर गयी हैं। *-जवेरीलाल छाजेड़*

हिण्डौनसिटी-धर्मनिष्ठ, सन्तसेवी सुश्रावक श्री टीकमचन्दजी जैन (पूर्व सरपंच) का 80 वर्ष की आयु में 6 अगस्त,

2021 को देवलोगमन हो गया। स्थानीय संघ के पूर्व अध्यक्ष के रूप में आपने सराहनीय सेवाएँ प्रदान की। आप धार्मिक एवं सामाजिक गतिविधियों में उत्साहपूर्वक भाग लेते थे। पूज्य आचार्यप्रवर एवं सन्त-सतीवृन्द के प्रति आपकी श्रद्धाभक्ति थी। आप भरा-पूरा परिवार छोड़कर गये हैं। *-धर्मचन्द जैन, मन्त्री*

पाली-धर्मनिष्ठ, संघसेवी युवारत्न श्री नरेन्द्रजी सुपुत्र श्री पारसमलजी चौपड़ा का 23 अगस्त,2021 को देहावसान

हो गया। आप रत्नसंघ के सुज्ञ, समर्पित, श्रद्धावान युवारत्न थे। सन्त-सतीवृन्द की सेवा-भक्ति तथा संघ-सेवा में आप सदैव तत्पर रहते थे। आप हँसमुख और मिलनसार प्रवृत्ति के थे। पाली में आयोजित रत्नसंघीय कार्यक्रमों में तथा संघीय गतिविधियों मेंआपका सक्रिय सहयोग प्राप्त होता रहता था। सन्त-सतीवृन्द की विहार सेवा में आपकी उल्लेखनीय सेवाएँ प्राप्त होती थीं। व्याख्यात्री महासती श्री विमलेशप्रभाजी म.सा. आदि ठाणा के पाली चातुर्मास में आप सहित समस्त परिवारजनों ने दर्शन-वन्दन, प्रवचन-श्रवण के साथ धर्म-ध्यान का अपूर्व लाभ प्राप्त किया। चौपड़ा परिवार का संघ एवं संघीय संस्थाओं में सक्रिय योगदान प्राप्त होता है। आदरणीय श्री पारसमलजी चौपड़ा जिनवाणी के रसिक हैं। व्याख्यान वाणी सुनने के लिए सदैव अग्रणी और तत्पर रहते हैं। आप संघ कार्याध्यक्ष श्री आनन्दजी चौपड़ा के भतीजे थे। चौपड़ा परिवार सदैव स्वधर्मी भाई-बहनों की सेवा के लिए तत्पर रहता है। *-धनपत सेठिया, महामन्त्री*

सुमेरगंजमण्डी-इन्द्रगढ़-धर्मनिष्ठ, संघसेवी सुश्रावक श्री नरेन्द्र कुमारजी सुपुत्र श्री चाँदमलजी जैन का 23 अप्रेल,

2021 को देवलोकगमन हो गया। आप श्री स्थानकवासी जैन श्रावक संघ, सुमेरगंजमण्डी के अध्यक्ष थे। गुरु हस्ती-हीरा-मान के प्रति आपकी अपूर्व श्रद्धा थी। सभी कार्यकर्त्ताओं के सहयोग से संघसेवा का कार्य कुशलतापूर्वक करते थे। हँसमुख, मिलनसार, मधुर व्यवहार से आप सभी के प्रिय रहे। सामायिक, स्वाध्याय जप-तप की साधना के साथ संघसेवा में अग्रणी थे। आपके परिवार के सभी सदस्य संघसेवा और धर्म-साधना में तत्पर रहते हैं। *-सुशील जैन छारोदा*

सुमेरगंजमण्डी-इन्द्रगढ़-धर्मनिष्ठ, संघसेवी सुश्रावक श्री मनोज कुमारजी सुपुत्र चाँदमलजी जैन का 29 अप्रेल,

2021 को देवलोकगमन हो गया। आपकी गुरु हस्ती-हीरा-मान के प्रति असीम श्रद्धा थी। आप सभी सन्त-सतियों के दर्शन-वन्दन-जिनवाणी श्रवण का लाभ प्राप्तकर हर्ष का अनुभव करते थे। आप संघसेवा में अग्रणी थे। आपने संस्कारी जीवन जीते हुए परिवार में भी संस्कार दिये। आपके परिवार के सभी सदस्य संघसेवा और धर्माराधना में संलग्न रहते हैं। आप अपने पीछे भरा-पूरा परिवार छोड़कर गये हैं। *-सुशील जैन छारोदा*

जोधपुर-वरिष्ठ स्वाध्यायी, धर्मनिष्ठ सुश्राविका श्रीमती गुलाबकँवरजी धर्मपत्नी स्वर्गीय श्री हुकमराजजी मेहता का

12 मई, 2021 को 84 वर्ष की उम्र में स्वर्गवास हो गया। आप सरल, दृढ़श्रद्धालु एवं संघ समर्पित श्राविका थीं। आपने अहिंसा और शाकाहार का खूब प्रचार-प्रसार किया और तन-मन-धन से संघसेवा हेतु तत्पर रहती थीं। चारित्रनिष्ठ पूज्य सन्त-सतियों पर आपकी दृढ़ श्रद्धा थी। आप दैनिक नियम से सामायिक, प्रतिक्रमण करती थीं। आप अपने पीछे सुसंस्कारनिष्ठ भरा-पूरा परिवार छोड़ गई हैं, जिसमें तीन सुपुत्र-सुपुत्रवधू श्री सुरेश जी-मधुजी, श्री कैलाशजी-नमिताजी, श्री अशोकजी-अनिताजी और दो सुपुत्रियाँ प्रेमलताजी एवं शान्ताजी हैं। *-अरिहंत मेहता*

सवाईमाधोपुर-धर्मनिष्ठ सुश्राविका श्रीमती शान्तिदेवीजी धर्मपत्नी स्व. श्री विनेश्वर कुमारजी जैन (श्री शान्तिलालजी जैन-करेला वाले) का 10 अगस्त, 2021 को 76 वर्ष की आयु में स्वर्गवास हो गया। आप मिलनसार श्राविका थीं। आप देव, गुरु एवं धर्म के प्रति पूर्णरूप से समर्पित थी। आप सेवाभावी श्रद्धेय श्री नन्दीषेणमुनिजी म.सा. की सांसारिक पक्ष में काकीजी थी। आप अपने पीछे एक सुपुत्र श्री लाभेश्वरजी एवं दो सुपौत्र तथा चार सुपुत्रियाँ और दोहिते-दोहितियों सहित भरापूरा परिवार छोड़कर गईं।

-राकेश कुमार जैन

उपर्युक्त दिवगंत आत्माओं को जिनवाणी परिवार की ओर से हार्दिक श्रद्धाञ्जलि

दान की सार्थकता

श्री सुगालचन्द जैन

भारतीय जन-मानस में दान देने की परम्परा अत्यन्त प्राचीन रही है, परन्तु वर्तमान समय में मनुष्य सामान्यतया दान देने से पूर्व भी यह सोचता है कि दान देने के पश्चात् उसे क्या प्रतिफल प्राप्त होगा। अतः अधिकांशतः दान देने की प्रवृत्ति में भी मानव का स्वार्थ निहित होता जा रहा है। ऐसी प्रवृत्ति के कारण ही यह कहावत चरितार्थ होती है कि-"रोगी, भोगी एवं लोभी, इन तीनों को ठगना आसान है।" मानव की इस प्रवृत्ति से सब अवगत हैं। अतः उसकी इस कमजोरी का लाभ समय-समय पर साधु-सन्त और महात्माओं के साथ समाज सेवक एवं सामाजिक नेता भी खूब उठाते रहते हैं। साधु-सन्त एवं महात्मा मनुष्य को स्वर्ग-नरक, पाप-पुण्य का सब्जबाग़ दिखाकर उनके मनचाहे स्थानों पर खर्च करवाते हैं, भले ही उस व्यय से जैनत्व को, समाज को अथवा ज़रूरतमन्द व्यक्ति को कोई लाभ हो अथवा नहीं।

इसी प्रकार बहुत से सामाजिक नेता मानव की इस कमजोरी का लाभ उठाते हुए नये-नये न्यास (ट्रस्ट) बनाते हैं एवं धन इकट्ठा करते हैं। जब सब कुछ ठीक चलने लगता है तो इन तथाकथित न्यासियों (ट्रस्टियों) का कोई महत्त्व नहीं रह जाता। अतः मेरा सभी दानवीर धर्मप्रेमी बन्धुओं से निवेदन है कि कृपया दान देते समय लोभ से, प्रलोभन से दान न दें, सोच-समझकर सामाजिक उत्थान हेतु, समाज से जुड़े हुए व्यक्तियों की भलाई हेतु अथवा जरुरतमन्द व्यक्ति को अपने सामर्थ्य के अनुरूप दान दें। हमारा हर सम्भव प्रयास जैनत्व को जन-जन तक पहुँचाने के लिए होना चाहिए। आरम्भ, समारम्भ और आडम्बर से न तो पुण्य उपार्जन होगा न ही मोक्ष की प्राप्ति।

पुण्य-उपार्जन, मोक्ष, तीर्थंकर गोत्र-बन्धन के लिए आवश्यक है सम्यक्त्व। सम्यक्त्व के प्रबोधन हेतु किसी धन की आवश्यकता नहीं है, अपितु आवश्यकता है नैतिकता एवं प्रामाणिकता की। हमारे दिए हुए दान की सार्थकता तभी सम्भव है जब हमारे दान के सदुपयोग से जैनदर्शन, जनदर्शन में परिवर्तित हो। जय जिनेन्द्र!

-चेन्नई, तमिलनाडु

जीवन बोध क्षणिकाएँ

श्रद्धेय श्री यशवन्तमुनिजी म.सा.

भविष्य

भूल जाए अतीत,
वर्तमान में रहे देहातीत,
स्वतः होगा भविष्य सुन्दरतम व्यतीत।।

मित्रता

इसी में है साधक की पात्रता,
प्राणिमात्र के प्रति हो मित्रता।।

विषय-वमन

हे चेतन! विषयों का कर दिया वमन,
फिर क्यों ले जाता उधर मन।।

10 सितम्बर 2021
जिनवाणी 88
ISSN 2249-2011

साभार-प्राप्ति-स्वीकार

1000/-जिनवाणी पत्रिका की आजीवन (अधिकतम 20 वर्ष) सदस्यता हेतु प्रत्येक

क्रम संख्या 16233 से 16241 तक कुल 9 सदस्य बने।

जिनवाणी मासिक पत्रिका हेतु साभार प्राप्त

11000/- श्रीमती पुष्पाजी जैन, जयपुर सुपौत्री सेहल (सुपुत्री श्री पीयूषजी-श्रीमती चविताजी जैन) संग चिरागजी के विवाह उपलक्ष्य में।

11000/- श्री ज्ञानचन्दजी सुपुत्र श्री जौहरीलालजी लूणिया (निमाज वाले), पल्लीपेट, सुपुत्र आकाशजी की स्मृति में सपरिवार गुरु-चरण-सन्निधि में साधना आराधना का अवसर मिलने के उपलक्ष्य में।

5100/- श्रीमती प्रमिलाबाईजी-मोहनलालजी जोधड, पिलकोड-जलगाँव, श्री शीतल कुमारजी को गुरु मन्त्र दिलाने की खुशी में।

5100/- श्री हिमांशुजी जैन, अलीगढ़-रामपुरा, टोंक, पूजनीया माताजी-पिताजी की वैवाहिक वर्षगाँठ के उपलक्ष्य में।

3100/- श्री रामूकुमारजी सुपुत्र श्री अमोलकचन्दजी बोहरा, शाहगाँव-जलगाँव, गुरु मन्त्र हेतु सपरिवार सौभाग्य प्राप्त होने की खुशी में।

2100/- श्री कन्हैयालालजी, नितिनजी, विशालजी फूलफगर (निमाज वाले), चित्तुर, गुरुदर्शन की खुशी में।

2100/- श्रीमती विजयलक्ष्मीजी धर्मपत्नी स्व. श्री प्रेमबाबू जी जैन, सवाईमाधोपुर, सुपुत्र श्री सौरभजी-श्रीमती प्रज्ञाजी जैन के पुत्ररत्न प्राप्ति के उपलक्ष्य में।

2100/- श्री विनोदजी सुपुत्र श्री भँवरलालजी कांकरिया (नागौर वाले) अहमदाबाद, सुपुत्र अरिहन्तजी के 8 उपवास एवं सुपुत्र नमितजी के 8 एकाशन की तपस्या के उपलक्ष्य में।

2100/- श्री मंगलचन्दजी, धर्मचन्दजी, राजेन्द्रकुमाजी भंसाली (गिरि वाले), वडपल्लनी-चेन्नई, भाणेज श्री प्रीतमजी सुराणा के विवाह एवं मायरा के सानन्द सम्पन्न होने की खुशी में।

2100/- श्री मंगलचन्दजी, धर्मचन्दजी, राजेन्द्रकुमाजी भंसाली (गिरि वाले), वडपल्लनी-चेन्नई, सुपौत्री आयु. सोनिकाजी संग चि. संजयजी गोलेच्छा के साथ शुभविवाह के उपलक्ष्य में।

2100/- श्री मंगलचन्दजी, धर्मचन्दजी, राजेन्द्रकुमाजी भंसाली (गिरि वाले), वडपल्लनी-चेन्नई, सपरिवार साधना-आराधना का सौभाग्य प्राप्त होने की खुशी में।

2100/- श्री हिमांशुजी जैन, अलीगढ़-रामपुरा, टोंक, पूजनीया माताजी श्रीमती उर्मिलाजी धर्मपत्नी श्री सोहनलालजी जैन के अठाई तप के उपलक्ष्य में।

2100/- श्रीमती विद्यादेवीजी कोठारी, जयपुर जिनवाणी को सप्रेम भेंट।

2100/- श्रीमती प्रेमदेवीजी पींचा, वडोदरा, श्री सागरमलजी पींचा की पुण्यस्मृति में।

1101/- श्री लाभेश्वरजी जैन (करेला वाले), सवाईमाधोपुर, माताजी श्रीमती शान्तिदेवीजी जैन की 10 अगस्त को पुण्यस्मृति दिवस पर भेंट।

1100/- श्री हिमांशुजी जैन, अलीगढ़-रामपुरा, टोंक, प्रतिक्रमण कण्ठस्थ करने के उपलक्ष्य में।

1100/- श्री दिनेशकुमारजी, सुधीरकुमारजी जैन, सवाईमाधोपुर, पूज्य पिताजी श्री नरेन्द्रमोहनजी जैन की पुण्यस्मृति में।

1100/- श्री बुद्धिप्रकाशजी, पंकजकुमारजी जैन, बजरिया-सवाईमाधोपुर, सुपुत्र श्री सौरभ कुमारजी का शुभविवाह सौ. कां. सोनियाजी के साथ सम्पन्न होने की खुशी में।

1100/- श्री महेन्द्रकुमारजी जैन, सेवानिवृत्त ए.टी.आई. रोड़वेज, खेड़ली-अलवर, सुपुत्र की 39वीं वर्षगाँठ के उपलक्ष्य में।

1100/- श्रीमती मधुजी-श्री राजेन्द्रजी, श्रीमती मेघनाजी-श्री मोहितजी सिंघवी परिवार, जोधपुर, आदरणीय श्री किस्तूरचन्दजी सिंघवी की पुण्यस्मृति में।

1100/- श्री धनसुरेशजी, आशीषजी, अमितजी, सुमितजी जैन (श्यामपुरा वाले), सवाईमाधोपुर, गुरुदर्शन की खुशी में।

1100/- श्री चान्दमलजी, त्रिलोकचन्दजी जैन, इन्द्रगढ़,

सुमेरगंजमण्डी, बून्दी श्रावकरत्न श्री नरेन्द्रकुमारजी जैन के 23 अप्रेल, 2021 को देवलोकगमन होने पर पुण्यस्मृति में।

1100/- श्री चान्दमलजी त्रिलोकचन्दजी जैन, इन्द्रगढ़, सुमेरगंजमण्डी, बून्दी श्रावकरत्न श्रीमनोजकुमारजी जैन के 29 अप्रेल, 2021 को देवलोकगमन होने पर पुण्यस्मृति में।

1100/- श्री विमलकुमारजी, जम्बूकुमारजी, पदमकुमारजी जैन, बाबई, स्व. श्री रतनलालजी जैन की पुण्यस्मृति में।

1000/- श्री गौतमचन्दजी जैन, बैंगलौर जिनवाणी को सप्रेम भेंट।

सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल हेतु साभार

180000/- डॉ. सुनीलजी चौधरी, नोयडा, सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल से प्रकाशित पुस्तक 'मुक्ति का राही' का नूतन संस्करण संस्कृत रूपान्तर के साथ प्रकाशित कराने हेतु।

गजेन्द्र निधि/गजेन्द्र फाउण्डेशन के ट्रस्टी

श्री भागचन्दजी विवेकजी जैन, जयपुर

खेल में ईमानदारी

संकलित

टोक्यो ओलम्पिक 2021 में पुरुषों की हाई जम्प फाइनल। फाइनल में इटली के जियान मारको टेम्पबरी का सामना क़तर के मुताज़ इसा बर्शिम से हुआ। दोनों ने 2.37 मीटर की छलाँग लगाई और बराबरी पर रहे। उसके बाद ओलम्पिक अधिकारियों ने उनमें से प्रत्येक को तीन और प्रयास दिए। लेकिन वे 2.37 मीटर से अधिक तक नहीं पहुँच पाए। उन दोनों को एक और प्रयास दिया गया, लेकिन उसी वक़्त टेम्पबेरी पैर में गम्भीर चोट के कारण अन्तिम प्रयास से पीछे हट गए। यह वह क्षण था जब मुताज़ बरशिम के सामने कोई दूसरा विरोधी नहीं था और उस पल वह आसानी से अकेले सोने को जीत सकते थे। लेकिन बर्शिम के दिमाग में कुछ घूम रहा था और फ़िर कुछ सोचकर उसने एक अधिकारी से पूछा-अगर मैं भी अन्तिम प्रयास से पीछे हट जाऊँ तो क्या हम दोनों के बीच गोल्ड मैडल साझा किया जा सकता है?

कुछ देर बाद एक आधिकारी जाँच कर पुष्टि करता है और कहता है-हाँ, बेशक गोल्ड आप दोनों के बीच साझा किया जाएगा। बर्शिम के पास और ज्यादा सोचने के लिए कुछ नहीं था। उसने आखिरी प्रयास से हटने की घोषणा की। यह देख इटली का प्रतिद्वन्दी ताम्बरी दौड़ा और मुताज़ बरसीम को गले लगा कर चिल्लाया। दोनों भावुक होकर रोने लगे।

लोगों ने जो देखा वह खेलों में प्यार का एक बड़ा हिस्सा था जो दिलों को छूता है।

आगामी पर्व तिथि

भाद्रपद शुक्ला 8, मंगलवार	14.09.2021	अष्टमी
भाद्रपद शुक्ला 9, बुधवार	15.09.2021	भगवान सुविधिनाथ निर्वाण कल्याणक
भाद्रपद शुक्ला 14, रविवार	19.09.2021	अनन्त चतुर्दशी
आश्विन कृष्णा 3, शुक्रवार	24.09.2021	श्राविका गौरव दिवस, संस्कार-बोध दिवस
आश्विन कृष्णा 8, बुधवार	29.09.2021	अष्टमी
आश्विन कृष्णा 14, मंगलवार	05.10.2021	चतुर्दशी, पक्खी
आश्विन शुक्ला 7, मंगलवार	12.10.2021	आयम्बिल ओली प्रारम्भ
आश्विन शुक्ला 8, बुधवार	13.10.2021	अष्टमी
आश्विन शुक्ला 10, शुक्रवार	15.10.2021	आचार्यप्रवर पूज्य श्री भूधरजी म.सा. का स्मृति-दिवस

10 सितम्बर 2021
जिनवाणी 90
ISSN 2249-2011

बाल-जिनवाणी

प्रतिमाह बाल-जिनवाणी के अंक पर आधारित प्रश्नोत्तरी में भाग लेने वाले श्रेष्ठ उत्तरदाताओं को सुगनचन्द प्रेमकँवर रांका चेरिटेबल ट्रस्ट-अजमेर द्वारा श्री माणकचन्दजी, राजेन्द्र कुमारजी, सुनीलकुमारजी, नीरजकुमारजी, पंकजकुमारजी, रौनककुमारजी, नमनजी, सम्यक्जी, क्षितिजजी रांका, अजमेर की ओर से पुरस्कृत किया जा रहा है। पुरस्कारों की राशि इस प्रकार है- प्रथम पुरस्कार-600 रुपये, द्वितीय पुरस्कार-400 रुपये, तृतीय पुरस्कार- 300 रुपये तथा 200 रुपये के तीन सान्त्वना पुरस्कार। पुरस्कार राशि सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल, जयपुर द्वारा भिजवाई जाती है।

कुदरत के दो रास्ते

सुश्री मीनाक्षी चौपड़ा

एक बच्चा गर्मी के दिनों में दोपहर में नंगे पैर फूल बेच रहा था। लोग मोलभाव कर रहे थे। एक सज्जन ने उसके पैर देखे और करुणित हो गया। वह शीघ्र ही पास की एक दुकान से जूते लेकर आया और कहा-''बेटा! जूते पहन ले।'' लड़के ने फटाफट जूते पहने, बहुत खुश हुआ और उस आदमी का हाथ पकड़ कर कहने लगा-''आप भगवान हो।'' वह आदमी घबराकर बोला-''नहीं.... नहीं... बेटा! मैं भगवान नहीं।'' फिर लड़का बोला-''जरूर आप भगवान के दोस्त होंगे, क्योंकि मैंने कल रात ही भगवान से प्रार्थना की थी कि भगवानजी! मेरे पैर बहुत जलते हैं। मुझे जूते लाकर के दो। वह आदमी आँखों में पानी लिये मुस्कुराता हुआ चला गया, पर वे जान गये थे कि भगवान का दोस्त बनना ज्यादा मुश्किल नहीं है। कुदरत ने दो रास्ते बनाए हैं-(1) देकर जाओ या (2) छोड़कर जाओ। साथ लेकर के जाने की कोई व्यवस्था नहीं है।

-सुपुत्री श्री प्रकाशचन्दजी चौपड़ा, 4/265, लाखन कोटड़ी, अजमेर-305001 (राजस्थान)

सामायिक-प्रश्नोत्तर

प्र. 1-वन्दना करते समय किन-किन बातों का विशेष ध्यान रखना चाहिए?

उत्तर- वन्दना करते समय निम्नलिखित बातों का विशेष ध्यान रखना चाहिए-

1. वन्दना गुरुदेव के सामने खड़े होकर करना चाहिए। जहाँ तक हो सके उनके पीछे खड़े होकर वन्दना नहीं करना चाहिए।
2. यदि गुरुदेव सामने नहीं हो तो पूर्व दिशा (East) उत्तर दिशा (North) अथवा ईशान कोण (उत्तर पूर्व दिशा के बीच में (Center of East North) में मुख करके खड़े होकर वन्दना करना चाहिए।
3. आसन से नीचे उतरकर वन्दना करना चाहिए, आसन आदि पर खड़े होकर वन्दना नहीं करना चाहिए।
4. गुरुदेव सामने हों अथवा नहीं हों आवर्तन देने का तरीका एक समान अर्थात् ललाट के मध्य में दोनों हाथ रखकर अपने स्वयं के बायें से दाहिनी ओर दोनों हाथों को घुमाते हुए आवर्तन देने चाहिए।
5. तिक्खुत्तो के पाठ से वन्दना करते समय आवर्तन देने के पश्चात् 'वंदामि' शब्द नीचे बैठकर दोनों हाथ जोड़ते हुए बोलना चाहिए। 'नमंसामि' शब्द का उच्चारण करते समय पाँचों अङ्ग (दोनों हाथ, दोनों घुटने और मस्तक) गुरुदेव के चरणों में झुकाना चाहिए। इसी प्रकार इस पाठ का अन्तिम शब्द 'मत्थएण वंदामि' बोलते समय भी पञ्चाङ्ग

गुरुदेव के चरणों में झुकाना चाहिए।

6. गुरुदेव को स्वाध्याय में, वाचना में, कायोत्सर्ग में, साधना आदि संयमचर्या में व्यवधान नहीं हो, इस बात का ध्यान रखते हुए वन्दना करनी चाहिए।
7. जब गुरु भगवन्त गोचरी कर रहे हों, तपस्या, वृद्धावस्था, बीमारी अथवा अन्य किसी भी कारण से सोये हुए हों, आवश्यक क्रिया कर रहे हों, गोचरी लेने जा रहे हों, तब भी गुरुदेव के निकट जाकर वन्दना करना विवेकपूर्ण नहीं माना जाता है।
8. श्रावक-श्राविकाओं के ज्ञान-ध्यान में, प्रवचन-श्रवण आदि में बाधा नहीं हो, इसका पूरा विवेक रखते हुए वन्दना करनी चाहिए।

-'श्रावक सामायिक प्रतिक्रमणसूत्र' पुस्तक से

A Lesson in Life

Sh. Shrikant Gupta

Everything happens for a reason. Nothing happens by chance or by means of good or bad luck. Illness, injury, love, lost moments of true greatness and sheer stupidity all occur to test the limits of your soul. Without these small tests, if they be events, illnesses or relationships, life would be like a smoothly paved, straight, flat road to nowhere.

If someone hurts you, betrays you, or breaks your heart, forgive them. For they have helped you learn about trust and the importance of being cautious to who you open your heart to.

If someone loves you, love them back unconditionally, not only because they love you, but because they are teaching you to love and opening your heart and eyes to things you would have never seen or felt without them.

Make every day count. Appreciate every moment and take from it everything that you possibly can, for you may never be able to experience it again.

Talk to people you have never talked before, and actually listen. Hold your head up because you have every right to. Tell yourself you are a great individual and believe in yourself, for it you don't believe in yourself, no one else will believe in you either.

You can make of your life anything you wish. Create your own life and then go out and live it.

-IICS, Jodhpur (Rajasthan)"

हम मुस्कुरायेंगे कल

श्री त्रिलोकचन्द जैन

हम मुस्कुरायेंगे कल, जल्द ही आ जाएगा वो पल
फिर से रौनक होगी चेहरों पर
आवाज़ाही भी होगी घरों पर
फिर वाहनों की गति से चलेगा शहर
खत्म हो जाएगा ये डरावना कहर
फिर से सुकून और चैन होगा हर दिल
हम मुस्कुरायेंगे कल, जल्द ही आ जाएगा वो पल
अब हारो मत, बिगुल जीत का बजने दो
इतना रखा धैर्य, थोड़ा और इसे रहने दो
'आशा अमर फलदायिनी' सुना है हमने
इसी विश्वास पर, समय कुछ और निकलने दो
सूख ही तो रहा है, धीरे-धीरे ये दलदल
हम मुस्कुरायेंगे कल,
जल्द ही आ जाएगा वो पल
सोचो उनको,
जो इस भयावहता से जूझ रहे दिन-रात
नहीं कर पा रहे अपने स्वजनों से भी बात
मौत के मुँह से भी निकाल बचा रहे जान
उनकी कर्त्तव्य निष्ठा पे, नत मस्तक सारा जहान
उनका बढ़ाना है हम सबको सम्बल
हम मुस्कुरायेंगे कल, जल्द ही आ जाएगा वो पल
भले हम बन्द घर में, पर लगता देश एक साथ है
भले दूर से करते नमस्ते,
पर लगता हाथों में हाथ है
दूरियाँ कम ज्यादा भले, पर दिलों से हम पास हैं

खुशहाली की दिल में,
अखण्ड ज्योत सम जलती आस है
भोर सुहानी आने वाली, बीत रहा दुर्दिन ये पल
हम मुस्कुरायेंगे कल, जल्द ही आ जाएगा वो पल
'वसुधैव कुटुम्बकम्' की भावना
जल्द समय आ रहा है सुहावना

-37/67, रजत पथ, मानसरोवर, जयपुर-302020 (राजस्थान)

अहिंसा की अमृत वर्षा

दीक्षा के उपरान्त श्रमण महावीर सुवर्णबालुका नदी के पास कनकखल नामक आश्रम के पास से गुज़र रहे थे। उन्होंने पीछे से आते हुए कुछ ग्वालों की भयाक्रान्त आवाज सुनी। उन्होंने कहा-''देव! आप रुक जाएँ, आगे न बढ़ें, इस रास्ते पर एक भयावह काला नाग रहता है, जिसने अपनी विष-ज्वाला से अगणित राहगीरों को भस्मसात् कर डाला है, हजारों पशु-पक्षी, पेड़-पौधे उसकी विषाग्नि से जलकर राख हो गए हैं।'' महावीर दो क्षण रुक गए। उन्होंने अपना अभयसूचक हाथ ऊपर उठाया, जैसे संकेत दे रहे हों कि तुम घबराओ नहीं। गाँव वालों ने उन्हें पुनः समझाया, पर महावीर धीर-गम्भीर गति से आगे बढ़ते गए। बाँबी के निकट जब महावीर को देखा तो नाग को भयंकर क्रोध आया। उसने अपनी विषमयी तीव्र दृष्टि से महावीर की ओर देखा, अग्निपिण्ड से जैसे ज्वालाएँ निलकती हैं, वैसे ही उसकी आँखों से तीव्र विषमयी ज्वालाएँ निकलने लगीं। साधारण मनुष्य तो उनमें जलकर भस्म हो जाता, पर महावीर पर उनका कोई प्रभाव नहीं पड़ा। उसने बार-बार उन पर प्रहार किया, पर महावीर अविचल ध्यान में निमग्न रहे। आखिर उसने एक तीव्र दंश उनके अँगूठे पर मारा, लेकिन वह भी निष्फल गया। उलटे वहाँ से दूध की धारा बहने लगी।

महावीर ने चण्डकौशिक को उद्बोधन देते हुए कहा-''चण्डकौशिक! अब शान्त हो जाओ। अपना क्रोध शान्त करो।'' महावीर के अमृत-वचन सुनकर नागराज का क्रोध पानी-पानी हो गया। वह विचारों में गहरा उतरा तो उसे जाति-स्मरण ज्ञान प्राप्त हो गया। तीव्र क्रोध के कारण उसने पूर्व जन्मों में कितने कष्ट उठाए, यह उसे स्मरण हो आया। वह शान्त होकर बार-बार उनके चरणों में लिपटकर क्षमा माँगने लगा। प्रातःकाल गाँव वालों ने यह दृश्य देखा तो वे आश्चर्यचकित हो उठे तथा प्रभु का गुणगान करने लगे। अहिंसा, अभय और मैत्री का यह एक ज्वलन्त उदाहरण है।

-पुस्तक 'रोचक बोधकथाएँ' से साभार

आहार-विवेक

संकलित

भोजन करते समय नीचे बताई गई बातों का ध्यान रखना। ये आहार विवेक से सम्बद्ध हैं-

- भोजन करने से पहले पाँच बार नवकार मन्त्र स्मरण करके सुपात्रदान की भावना भाना।
- आपके लिए भोजन की अलग-अलग चीजें बनानी पड़े, मन पसन्द या स्वादिष्ट खाना बनाना पड़े, इसके लिए जिद नहीं करना। बार-बार नहीं खाना।
- भोजन में स्वाद के लिए ऊपर से कच्चा नमक आदि सचित्त वस्तु का उपयोग नहीं करना।
- भोजन करते समय या बाद में आहार की प्रशंसा या निन्दा नहीं करना। मौन रखना। भोजन के बाद थाली पानी से धोकर पीना।
- बिना कारण पैसे खर्च करके होटल या ठेले की खुली चीजें (वस्तुएँ) नहीं खाना।
- अष्टमी-पक्खी के दिन हरी सब्जी-तरकारी का त्याग करना और उस दिन नवकारसी आदि छोटा तप तो जरूर करना।
- हर रोज भूख से थोड़ा कम खाने की आदत डालना।
- सूर्यास्त के बाद रात्रि-भोजन का त्याग करना, जिससे (1) तीर्थङ्कर की आज्ञा का पालन होता है, (2) पूज्य सन्तों को बहराने का लाभ मिलता है, (3) छह काय जीवों पर दया होती है।

-पुस्तक 'सचित्र जैन पाठ्यक्रम' से साभार

सब कुछ सम्भव है

डॉ. सी. प्रिया रवि जैन

'मुझसे नहीं होगा', 'मैं नहीं कर सकता', 'यह बहुत कठिन कार्य है' 'इसमें सफल होना नामुमकिन है' 'मुझे क्या मतलब' आदि वाक्य सौ में से नब्बे प्रतिशत लोगों की सोच होती है। यही वह वज़ह है कि जिस कारण कुछ गिने-चुने लोग ही कामयाबी के उच्च शिखर पर पहुँच पाते हैं और बाकी संघर्ष करते हुए इस संसार के मेले में कब, कहाँ, कैसे खो जाते हैं, पता ही नहीं चलता।

अपनी किस्मत को दोष देने वाले, परीक्षाओं से घबराने वाले, अनुभव के प्रहार से बचने वाले अपने आस-पास नज़र घुमाकर देखें और स्वयं विचार करें कि क्या मोहनदास कर्मचन्द गाँधी को यूँ ही राष्ट्रपिता होने का गौरव प्राप्त हो गया?

जीवन में जब भी परीक्षा का सामना हो उससे भागने और घबराने के बदले उसे निडर होकर पार करो। परीक्षा में सफलता या असफलता यह तो बाद की बात है, परन्तु इस अनुभव के गर्भ से ही आकांक्षाओं की सफलता का बीज पल्लवित होता है। जिस कामयाबी में परीक्षा नहीं, असफलता नहीं, यातना नहीं, समस्या नहीं, संघर्ष नहीं, वह सफलता न ही उस व्यक्ति के लिए मूल्यवान रहती है और न ही संसार के लिए। चाहे वह कोई नेता हो, अभिनेता, देशभक्त या कोई व्यवसायी, हर कामयाब इंसान के पीछे उसके संघर्ष की गाथा ही प्रेरणात्मक होती है। हर कोई कम मेहनत में शॉर्टकट के माध्यम से कामयाब होना चाहता है। पर शीर्ष बनने के लिए कहीं से शुरुआत करना जरूरी ही नहीं आवश्यक भी है।

-C/o. Ravi jain, 63/2 Jwalamala Industrial Estate Kodi Chikkanahalli Road, Bommanahalli, Bengaluru-560068 (Karnataka)

चारित्रात्माओं से हमारा भाषा विवेक

श्रीमती अरुणा कर्णावट

(गताङ्क से आगे) आम बोलचाल की भाषा	सन्त-सतियों से वचन-व्यवहार
20. आप भोजन ले लो।	20. आप गोचरी का अवसर देख लीजिए।
21. मेरे घर आना।	21. हमारे घर पधारने की कृपा कीजिएगा।
22. आपके मेरे घर आने से मेरी किस्मत खुल गयी।	22. भगवन्! आपने अनन्त कृपा की, मेरे घर पधारने की। या अनन्त पुण्यायी के उदय से आप मेरे घर पधारे।
23. ये दवाई ले लो आपकी तबीयत ठीक हो जाएगी।	23. अमुक दवा आपके स्वास्थ्य के अनुकूल रहेगी, कृपा करावें।
24. मांगलिक सुना दो।	24. भगवन्! आपके अनुकूलता हो तो मांगलिक फरमाने की कृपा करावें।
25. रात्रि में आप सोये हुए थे।	25. रात्रि में आप पोढ चुके थे।
26. वह रास्ता आपके जाने के लिए खराब है।	26. अमुक मार्ग आपके विचरण-विहार के लिए अनुकूल अथवा साताकारी नहीं है।

-एफ 30-बी, लाल बहादुर नगर (वेस्ट), जवाहरलाल नेहरू मार्ग, जयपुर-302018 (राज.)

10 सितम्बर 2021
जिनवाणी 94
ISSN 2249-2011

बाल-स्तम्भ

उपयोगी उपहार

श्रीमती कमला हणवन्तमल सुराणा

बाल-स्तम्भ के अन्तर्गत प्रकाशित रचना को पढ़कर अन्त में दिए गए प्रश्नों के उत्तर 20 वर्ष की आयु तक के पाठक 15 अक्टूबर, 2021 तक जिनवाणी सम्पादकीय कार्यालय, ए-9, महावीर उद्यान पथ, बजाज नगर, जयपुर-302015 (राज.) के पते पर प्रेषित करें। उत्तर के साथ अपनी आयु तथा पूर्ण पते का भी उल्लेख करें। श्रेष्ठ उत्तरदाताओं को श्री महावीरचन्द जी बाफना, जोधपुर द्वारा अपनी धर्मपत्नी एवं श्रीमती अरुणा जी, श्री मनोजकुमार जी, श्री कमलेश कुमार जी बाफना की माताश्री स्व. श्रीमती मोहिनीदेवी जी बाफना की पुण्य-स्मृति में पुरस्कृत किया जा रहा है। पुरस्कारों की राशि इस प्रकार है- प्रथम पुरस्कार-500 रुपये, द्वितीय पुरस्कार-300 रुपये, तृतीय पुरस्कार-200 रुपये तथा 150 रुपये के पाँच सान्त्वना पुरस्कार। पुरस्कार राशि सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल, जयपुर द्वारा भिजवाई जाती है।

विद्यालय की सभी छात्राएँ अर्द्ध विश्राम में मैदान में आ गईं। कुछ छात्राएँ खेल रही थीं, कुछ झुण्ड बनाकर बातें कर रही थीं। मई का महीना था। प्रचण्ड गर्मी पड़ रही थी। कुछ बूँदा-बूँदी होने के कारण मौसम बहुत सुहावना हो गया था। बातों ही बातों में याद आया कि पाँच सितम्बर को शिक्षक दिवस है। इस बार शिक्षकों को अच्छा उपहार देंगे।

श्रद्धा ने कहा-''अभी तो शिक्षक दिवस बहुत दूर है, अभी से उपहार के बारे में सोचने और बनाने के चक्कर में चिन्ता क्यों लादें।''

रजनी-''जब अच्छा उपहार देना है तो सोचने और बनाने में समय लगेगा। ग्रीष्म अवकाश में घर बैठे-बैठे नई वस्तु बना सकते हैं।''

श्रद्धा-''छुट्टियों में मौज-मस्ती करने दे, चैन से रहने दो। अवकाश के अलावा तो टैस्टों-योजनाओं की मार मस्तिष्क में घूमती ही रहती है। मैं ग्रीष्म अवकाश में नानी के घर जाऊँगी। गाँव की मिट्टी में धमा-चौकड़ी मचाऊँगी और खुली हवा में खूब नींद लूँगी।''

रजनी-''श्रद्धा! मैं तो सबसे सुन्दर उपहार दूँगी।''

कक्षा 8वीं अ की मॉनिटर सलिला, 8वीं ब की छात्राओं की उपहार सम्बन्धी बातें सुनकर आई और अपनी कक्षा को एकत्रित किया।

सलिला ने सहपाठिनियों से कहा-''कक्षा 8वीं ब की छात्राएँ कह रही थीं कि इस बार शिक्षक दिवस पर शिक्षकों को कुछ अलग प्रकार का उपहार देना है। हम भी हमेशा से भिन्न भेंट देंगे। अपनी-अपनी राय दीजिए।''

कुछ छात्राओं ने पेन देने के लिए कहा, गुलदस्ता देने की राय भी आई। कुछ ने सुन्दर-सुन्दर कार्ड बनाकर देने का प्रस्ताव रखा।

सलिला-''पेन देना कोई नई चीज़ नहीं है। गुलदस्ता जल्दी मुरझा जाता है। कार्ड तो पहले भी दे चुके हैं। कोई स्थायी भेंट सोचिए।''

मेहुल-''सलिला! तुझे कोई भी प्रस्ताव पसन्द नहीं आया है तो फिर तू इञ्जन बन जा। हम डिब्बे, तेरे पीछे-पीछे चलेंगे यानी जो भी देना है हमें मान्य है।''

नव्या-''हँसी ठट्ठा करती हुई बोली, अब तो हम सभी बूढ़े हो गए हैं। रेलगाड़ी का खेल खूब खेला, अब तो वह समय बीत गया।''

शैव्या-''बूढ़े हो तुम, तभी तो सोचने की शक्ति गँवा बैठी हो। अरे! मैं तो बूढ़ी नहीं हूँ। मैं तो किशोरी हूँ। तुम सब बूढ़ी-वृद्धा हो।'' इतना कहकर शैव्या बूढ़ों का साङ्गोपाङ्ग और सटीक अभिनय करने लगी कि उसे देखकर सभी सहेलियाँ हँस-हँस कर लोट-पोट हो गईं। वे इतनी हँसी कि खुशी के मारे आँखों में से आँसू आ गए। हँसी रुकने का नाम ही नहीं ले रही थी।

शैव्या-''हँसती रहोगी या उपहार के बारे में सोचोगी।''

मेहुल-''शैव्या! तू नव यौवना किशोरी है न! तू ही सुझाव दे।''

शैव्या-''मेरे तो मस्तिष्क में बहुत अच्छा सुझाव आया है। तुम सभी को मानना होगा।''

सलिला-''प्रस्ताव मानने योग्य होगा तो अवश्य मानेंगे।''

शैव्या-''अपनी स्कूल के सामने वाली सड़क के किनारे पर किसी प्रकार के वृक्ष नहीं लगे हुए हैं। वहाँ पर फलों के वृक्ष, घनी छाया देने वाले वृक्ष अधिक मात्रा में ऑक्सीजन देने वाले वृक्ष लगाएँगे। स्कूल की रौनक बढ़ जाएगी। हरियाली और छाया हो जाएगी।''

सलिला-''शैव्या! तेरा प्रस्ताव तो सोने में सुहागा का काम करेगा। समाचार-पत्र में प्रतिदिन समाचार पढ़ने में आता है कि कोरोना पीड़ितों को प्रचुर मात्रा में ऑक्सीजन न मिलने के कारण मृत्यु हो गई। ऐसे समाचारों से मेरा जी बैठ जाता है। मेरी समझ में कुछ नहीं आता है, मैं उनके लिए क्या करूँ? तूने मेरी गुत्थी सुलझा दी। पूरी दुनिया प्रदूषण से परेशान है। इस प्रदूषण को दूर करने के लिए वृक्षारोपण अति उपयोगी, सस्ता-सुन्दर-टिकाऊ उपहार होगा। यह योजना हमारे उपहार में चार चाँद लगा देगी।''

शैव्या-''अधिक मात्रा में ऑक्सीजन देने वाले वृक्ष अधिक लगाएँगे जिससे पर्यावरण शुद्ध होगा। पीपल, नीम, बड़, आम, जामुन, आँवला, नींबू, किन्नू, मीठा नीम, बेर, अमरूद आदि।''

मेहुल-''शैव्या! पेड़ उपहार में किस प्रकार से दिए जाएँगे।''

सलिला-''जब वृक्ष पनपकर बड़े हो जाएँगे तो वृक्षों पर शिक्षकों के नाम की चिट बाँध देंगे और भेंट कर देंगे।''

शैव्या-''योजना पारित हो गई तो कार्य प्रारम्भ किया जाय। मई में वृक्षारोपण कर दें ताकि वर्षा के दिनों में उन्हें वर्षा का पानी मिल जाएगा। पेड़ों के लिए वर्षा का पानी अमृत तुल्य होता है और जल्दी बढ़ जाएँगे।''

सलिला-''योजना तो आकर्षक है, पैसे सम्बन्धी कठिनाई आएगी।''

नव्या-''मैं अपने गुल्लक से पैसे निकाल कर दे दूँगी।''

सभी छात्राओं ने गुल्लक के पैसे निकालने का निर्णय लिया।

सलिला-''पेड़ों की पौध, खाद, ट्री गार्ड, पानी देने के लिए पाईप लाना आदि। माली को भी बुलाना होगा, वह पेड़ लगाना सिखा देगा।''

मेहुल-''मेरे पिताजी की नौकरी वन-विभाग में है, उनसे सहायता ले सकते हैं।''

सलिला ने वन-विभाग के उच्चाधिकारी को आवेदन-पत्र लिखा। उसमें वृक्षों की पौध और आवश्यक सामग्री माँग ली। वृक्षों को सुचारू रूप से रोपण करने के लिए माली की सहायता माँगी।

मेहुल-''सहपाठनियों से शैव्या के लिए कहा-यह बहुत दूरदर्शी है। इसने जो योजना बनाई है वह अति सराहनीय है जिसकी आवश्यकता समाज, देश और दुनिया को है। सरकार का नारा है कि ज्यादा से ज्यादा पेड़ लगाओ और पर्यावरण शुद्ध करो। मुझे पूरी सम्भावना है वन-विभाग वाले सहयोग करेंगे। मेरी प्रिय सहेलियों! शैव्या के लिए तालियाँ तो बजा दो।''

सभी छात्राओं ने बड़ी खुशी के साथ तालियाँ बजाईं। सलिला और चार छात्राएँ मिलकर वन-विभाग के उच्चाधिकारी के पास गईं। उन्होंने साहब को अपनी योजना सुनाई। इतने में मेहुल अपने पिताजी को लेकर उपस्थित हो गई। मेहुल के पिताजी ने अपनी बेटी एवं अन्य छात्राओं का परिचय करवाया।

उच्चाधिकारी ने कहा-''इन बच्चियों की योजना और इनके उत्साह-उमङ्ग से मैं बहुत प्रभावित हुआ हूँ। इस नवपीढ़ी को इस काम के लिए आगे बढ़ाना है तो हमारा कर्त्तव्य है कि इनकी पूरी सहायता करनी होगी।''

बच्चियों को सामने बैठाकर कहा-''आपने

आवेदन पत्र में जो वस्तुएँ माँगी हैं, वे सब आपको उपलब्ध करवाई जाएँगी। ट्री-गार्ड आपकी स्कूल में पहुँचा दिए जाएँगे।''

छात्राओं ने तालियाँ बजाईं और आभार व्यक्त किया।

मेहुल के पिताजी ने सलिला के मोबाइल नम्बर ले लिए और अपने कार्यालय के नम्बर उसे दे दिए।

कुछ समय पश्चात् सलिला ने वन-विभाग कार्यालय में फोन लगाया कि हम मानसून आने के पहले वृक्षारोपण करना चाहते हैं। पाँच जुलाई को हम छात्राएँ 8 बजे स्कूल प्राङ्गण में उपस्थित मिलेंगी।

मेहुल के पिताजी पौधारोपण सामग्री एवं माली को लेकर स्कूल के सामने वाली सड़क पर पहुँच गए। कार्य प्रारम्भ हो गया। जुलाई माह की गर्मी में भी बच्चियों का उत्साह अवर्णनीय रहा। सुकोमल बालिकाएँ पसीने से तरबतर हो गईं, ललाट से पसीने की बूँदें टपक रही थीं। उन्हें गर्मी का भान नहीं हो रहा था, काम में इतनी व्यस्त हो गईं। तीन दिन में पचास पेड़ लगा दिए। उन पर ट्री गार्ड भी लगा दिए। रोपे हुए पौधे को देखकर इतनी प्रसन्न हुई कि जैसे दुनिया का सम्पूर्ण वैभव उन्हें प्राप्त हो गया है। प्रतिदिन लड़कियाँ वहाँ का निरीक्षण करती थीं। पेड़ों ने जड़ें पकड़ लीं और बढ़ने लगे।

नव्या-''शैव्या, तेरी बुद्धि ने कमाल कर दिया। पेड़ बड़े हो जाएँगे, छाया देंगे तब हम उसके नीचे संगोष्ठी करेंगे। जब जामुन नीचे गिरेंगे बच्चे उठा-उठा कर खाएँगे, उन्हें देख कितनी खुशी होगी। पेड़ पर लगे किन्नू, नींबू कितने सुन्दर लगेंगे। पिताजी कह रहे थे कि आम जल्दी नहीं उगते हैं; वर्षों लग जाते हैं तब तक तो हम पता नहीं कहाँ होंगे। हमने तो अपना उद्देश्य पूरा कर लिया है।''

सलिला-श्री कृष्ण ने गीता में कहा-''कर्म करो फल की इच्छा न रखो।'' हम लोगों को कर्म करना था, कर लिया। हम संकल्प करें कि इसी दिन 'वृक्षारोपण दिवस' रखेंगे, इस बहाने हम इन पेड़ों के नीचे बचपन को ताजा करेंगे।

वह दिन आ गया जिस दिन की आठवीं कक्षा की छात्राओं को प्रतीक्षा थी। सलिला और शैव्या प्रधानाध्यापिका के पास गईं।

सलिला-''नमस्कार मेम! आज शिक्षक दिवस है हम छात्राओं ने आज के उपलक्ष्य में जो उपहार तैयार किया है उसे ग्रहण करने चलिएगा। सभी अध्यापिकाओं एवं छात्राओं को लेकर सामने वाली सड़क पर चलना होगा।''

प्रधानाध्यापिका-''तुम्हारी योजना की भनक तो हमें लग गई थी, प्रत्यक्ष देखने का अवसर आ गया है।''

प्रधानाध्यापिका ने सभी छात्राओं की लाइनें बनवाई और शिक्षिकाओं को साथ लेकर स्कूल के सामने वाली सड़क पर पहुँच गए। आठवीं कक्षा की छात्राएँ स्वागत के लिए खड़ी थीं। मानसून आने के कारण आकाश में काले-काले बादल छा गए थे। मौसम अति सुहावना हो गया था और मेले जैसा दृश्य लग रहा था। सभी प्रफुल्लित हो रहे थे। छात्राओं के लगाए गए पेड़ों का निरीक्षण करवाया। फलों के पेड़ पर नाम लिखे हुए थे जैसे आम का पेड़, आँवला का पेड़ एवं अन्य पेड़ों पर नाम लिखे हुए थे। फलों के पेड़ों पर शिक्षकों के नाम लिखे हुए थे, नाम के अनुसार उन्हें भेंट कर दिए गए।

प्रधानाध्यापिका और अन्य शिक्षिकाओं ने बालिकाओं की सूझबूझ और कर्मठता की भूरि-भूरि प्रशंसा की।

प्रधानाध्यापिका ने सोशल मीडिया वालों को बुलाया। उन्हें सभी पेड़ों का निरीक्षण करवाया और कहा-''बच्चों ने फलों के वृक्ष शिक्षक दिवस के उपलक्ष्य में भेंट किए हैं जो सबके लिए 'उपयोगी उपहार' है।''

मीडिया वालों ने बच्चों से पूछा-''इतनी सुन्दर सोच किसने दी। फलों के वृक्षों से हजारों लोग लाभ उठाएँगे और मीठे फल खाकर तुम्हें आशीर्वाद देंगे।''

सलिला-''महाशयजी! यह सोच हमारी

सहपाठिनी प्यारी-प्यारी शैव्या की है।''

शैव्या ने सभी के सामने कहा-''मेरी माँ आम, जामुन, नींबू एवं पपीता के बीज बाहर नहीं फेंकती, उन्हें सुखाकर संग्रह करती है। ग्रीष्म अवकाश में हम नानी के घर जाते हैं तो पूरा बैग बीज-गुठलियों का होता है। हमें उसे उठाकर ले जाना पड़ता है और भारी होता है।''

भैया ने माँ से कहा-''ये गुठलियों-बीजों का बैग साथ क्यों लाती हो? बेकारी का काम है। आप फिर रेलगाड़ी की खिड़की से दूर-दूर फिंकवा देती हैं फिर क्या मतलब?''

शैव्या की माँ ने कहा-''बेटा! यह बेकारी काम नहीं है। जहाँ-जहाँ बीज गुठलियाँ गिरी हैं उन पर बरसाती पानी गिरेगा, वहाँ-वहाँ वृक्ष उगने की सम्भावना है।''

शैव्या के भाई ने कहा-''माँ! बेकारी काम सार्थक हो जाएगा।''

मीडिया वाले ने शैव्या की पीठ थपथपा कर शाबाशी दी। नए वृक्षों की फोटो ली। प्रधानाध्यापिका, अध्यापिकाएँ एवं सभी छात्रों का स्कूल के बेनर सहित फोटो खींचा। फोटो खिंचवाकर छात्राएँ गद्‌गद् हो गईं।

प्रधानाध्यापिका ने बच्चों को उद्‌बोधन दिया।

प्रिय बच्चों!

आप सभी छात्राओं की शिक्षक के प्रति श्रद्धा और सद्‌भावना अविस्मरणीय है। हम आपकी वृक्षारोपण नवयोजना का स्वागत करते हैं। आपके उपयोगी उपहार से अनेक लोग लाभ उठाएँगे। अनेक बच्चे इस योजना से प्रेरित होकर शहर को हरा-भरा करेंगे। मेरे मस्तिष्क में एक विचार आया कि आप अपने मित्रों, सहेलियों और रिश्तेदारों के जन्म-दिवस पर फूलों का गमला उपहार में दें। फूलों की सुगन्धित हवा घर को महका देगी। घर की सुन्दरता बढ़ जाएगी। हम सभी अध्यापकगण आपके उज्ज्वल भविष्य की कामना करते हैं।

-ई 123, नेहरू पार्क, जोधपुर-342003 (राज.)

प्र.1 विद्यालय अवकाश के समय अधिकतर बच्चों की क्या मानसिकता रहती है?

प्र.2 शैव्या ने अपनी सहेलियों के सामने क्या प्रस्ताव रखा?

प्र.3 शैव्या के कार्यों को उसकी सहेलियों ने किस तरह सराहा?

प्र.4 उच्चाधिकारियों ने बच्चियों की क्यों और किस रूप में मदद की?

प्र.5 प्रधानाध्यापिका द्वारा दिया गया उद्‌बोधन हमारे लिए किस तरह प्रेरणादायी है?

प्र.6 उपहार, प्रत्यक्ष, सद्‌भावना, संगोष्ठी शब्दों में प्रयुक्त मूल शब्द एवं उपसर्ग अलग कीजिए।

बाल-स्तम्भ [जुलाई-2021] का परिणाम

जिनवाणी के जुलाई-2021 के अंक में बाल-स्तम्भ के अन्तर्गत 'धर्मरुचि अनगार' के प्रश्नों के उत्तर जिन बालक-बालिकाओं से प्राप्त हुए, वे धन्यवाद के पात्र हैं। पूर्णांक 25 हैं।

पुरस्कार एवं राशि नाम		अंक
प्रथम पुरस्कार-500/-	नमन जैन, जरखोदा (राजस्थान)	25
द्वितीय पुरस्कार-300/-	उत्कर्ष कुमार जैन, बजरिया-सवाईमाधोपुर (राजस्थान)	24
तृतीय पुरस्कार- 200/-	पाखी जैन, बारां (राजस्थान)	23
सान्त्वना पुरस्कार- 150/-	कु. पूर्वा विजय कुमार खिंवसरा, जलगाँव (महाराष्ट्र)	22
	अदिति प्रवीण बाँठिया, नागपुर (महाराष्ट्र)	22
	अखिल पाडलेचा, विजयनगर (राजस्थान)	22
	सितेश जैन, कोटा (राजस्थान)	22
	आर्जव जैन, जोधपुर (राजस्थान)	22

बाल-जिनवाणी अगस्त, 2021 के अंक से प्रश्न (अन्तिम तिथि 15 अक्टूबर, 2021)

प्र. 1. Why could Puniā Shrāvak not concentrate on his Sāmāyik? What had happened?
प्र. 2. तिक्खुत्तो के पाठ से वन्दना करते समय आवर्तन किस प्रकार दिए जाने चाहिए?
प्र. 3. 'जिनवाणी की सीख' कविता का मूलभाव लिखिए।
प्र. 4. स्थानक में जाकर हमें किन-किन बातों का ध्यान रखना चाहिए?
प्र. 5. धर्मस्थान की शोभा किससे है?
प्र. 6. हमें यश की प्राप्ति कब हो सकती है?
प्र. 7. सभी जीवों से क्षमा किस पाठ से माँगी जाती है? पाठ का भावार्थ लिखिए।
प्र. 8. चारित्रात्माओं से हमारा भाषा-विवेक कैसा होना चाहिए?
प्र. 9. हम विनयवान कैसे बन सकते हैं?
प्र. 10. Make sentences with each word- hospitality, meditation, admiration, forgiveness.

बाल-जिनवाणी [मई-जून-2021] का परिणाम

जिनवाणी के मई-जून-2021 के अंक की बाल-जिनवाणी पर आधृत प्रश्नों के उत्तरदाता बालक-बालिकाओं का परिणाम इस प्रकार है। पूर्णांक 40 हैं।

पुरस्कार एवं राशि नाम		अंक
प्रथम पुरस्कार-600/-	सुदर्शन जैन, चौथ का बरवाड़ा (राजस्थान)	39
द्वितीय पुरस्कार-400/-	गुंजन प्रशान्त कोठारी, धुलिया (महाराष्ट्र)	38
तृतीय पुरस्कार- 300/-	प्रियंका चौपड़ा, अजमेर (राजस्थान)	37
सान्त्वना पुरस्कार (3)- 200/-	कविश जैन, चौथ का बरवाड़ा (राजस्थान)	36
	अरिन चोरिड़या, जयपुर(राजस्थान)	36
	नमिष जैन, बारां (राज.)	36

संस्कार केन्द्रों हेतु दो नये प्रकाशन

आध्यात्मिक संस्कार केन्द्र एवं धार्मिक पाठशालाओं के अध्यापकों से निवेदन है कि सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल द्वारा दो नवीन पुस्तकों *'प्रभो! तुम्हारे पावन पथ पर'* और *'हमारे जीवन की नई कहानियाँ'* का प्रकाशन किया गया है, जो बच्चों के लिए संस्कार प्रदात्री हैं। अत: बच्चों के लिए इनका उपयोग करें। बालकों को संस्कारित करने का यह भी एक उत्तम साधन है। *-सम्पादक*

अहंकार के वृक्ष पर
विनाश के फल लगते हैं।

ओसवाल मेट्रीमोनी बायोडाटा बैंक

जैन परिवारों के लिये एक शीर्ष वैवाहिक बायोडाटा बैंक

विवाहोत्सुक युवा/युवती
तथा पुनर्विवाह उत्सुक उम्मीदवारों की
एवं उनके परिवार की पूरी जानकारी
यहाँ उपलब्ध है।

ओसवाल मित्र मंडल मेट्रीमोनियल सेंटर

४७, रत्नज्योत इंडस्ट्रियल इस्टेट, पहला माला,
इरला गांवठण, इरला लेन, विलेपार्ले (प.), मुंबई - ४०० ०५६.

फोन : 022 2628 7187

ई-मेल : oswalmatrimony@gmail.com

सुबह १०.३० से सायं ४.०० बजे तक प्रतिदिन (बुधवार और बैंक छुट्टियों के दिन सेंटर बंद है)

गजेन्द्र निधि
आचार्य हस्ती मेधावी छात्रवृत्ति योजना

उज्जवल भविष्य की ओर एक कदम.....

अखिल भारतीय श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ

Acharya Hasti Meghavi Chatravritti Yojna Has Successfully Completed 13 Years And Contributed Scholarship To Nearly 4500 Students. Many Of The Students Have Become Graduates, Doctors, Software-Professionals, Engineers And Businessmen. We Look Forward To Your Valuable Contribution Towards This Noble Cause And Continue In Our Endeavour To Provide Education And Spirituals Knowledge Towards A Better Future For The Students. Please Donate For This Noble Cause And Make This Scholarship Programme More Successful. **We Have Launched Membership Plans For Donors.**

We Have Launched Membership Plans For Donors

MEMBERSHIP PLAN (ONE YEAR)		
SILVER MEMBER RS.50000	GOLD MEMBER RS.75000	PLATINUM MEMBER RS.100000
DIAMOND MEMBER RS.200000		KOHINOOR MEMBER RS.500000

Note - Your Name Will Be Published In Jinwani Every Month For One Year.

The Fund Acknowledges Donation From Rs.3000/- Onwards. For Scholarship Fund Details Please Contact M.Harish Kavad, Chennai (+91 95001 14455)

The Bank A/c Details is as follows - Bank Name & Address - AXIS BANK Anna Salai, Chennai (TN)

A/c Name- Gajendra Nidhi Acharya Hasti Scholarship Fund **IFSC Code** - UTIB0000168

A/c No. 168010100120722 **PAN No.** - AAATG1995J

Note- Donation to Gajendra Nidhi are exempted u/s 80G of Income Tax Act 1961.

छात्रवृत्ति योजना में सदस्यता अभियान के सदस्य बनकर योजना की निरन्तरता को बनायें रखने में अपना अमूल्य योगदान कर पूण्यार्जन किया, ऐसे संघनिष्ठ, श्रेष्ठीवर्यो एवं अर्थ सहयोग एकत्रित करने करने वालों के नाम की सूची -

KOHINOOR MEMBER (RS.500000)	PLATINUM MEMBER (RS.100000)
श्रीमान् मोफतराज जी मुणोत, मुम्बई। श्रीमान् राजीव जी नीता जी डागा, ह्यूस्टन। युवारत्न श्री हरीश जी कवाड़, चैन्नई।	श्रीमान् दूलीचन्द बाघमार एण्ड संस, चैन्नई। श्रीमान् दलीचन्द जी सुरेश जी कवाड़, पून्नामल्लई। श्रीमान् राजेश जी विमल जी पवन जी बोहरा, चैन्नई। श्रीमान् प्रेम जी कवाड़, चैन्नई। श्रीमान् अम्बालाल जी बसंतीदेवी जी कर्नावट, चैन्नई। श्रीमान् सम्पतराज जी राजकवंर जी भंडारी, ट्रिपलीकेन-चैन्नई। कन्हैयालाल विमलादेवी हिरण चैरिटेबल ट्रस्ट, अहमदाबाद। प्रो. डॉ. शैला विजयकुमार जी सांखला, चालीसगांव (महा.)। श्रीमान् विजय जतिन जी नाहर, इन्दौर। श्रीमान् गुप्त सहयोगी, चैन्नई। श्रीमान् विजयकुमार जी मुकेश जी विनीत जी गोठी, मदनगंज-किशनगढ़। श्री जैन रत्न श्राविका मण्डल, तमिलनाडू। श्रीमती पुष्पाजी लोढ़ा, नेहरू पार्क, जोधपुर। श्रीमान जी. गणपतराजजी, हेमन्तकुमारजी, उपेन्द्रकुमारजी, कोयम्बटूर (कोसाणा वाले) श्रीमान सुगनचन्द जी छाजेड़, चौपासनी रोड, जोधपुर।
DIAMOND MEMBER (RS.200000)	
श्रीमान् प्रकाशचन्द जी भण्डारी, हरलूर रोड, बैंगलोर	
SILVER MEMBER (RS.50000)	
श्रीमान् गुप्त सहयोगी, चैन्नई। श्रीमान् गुप्त सहयोगी, चैन्नई। श्रीमान् गुप्त सहयोगी, चैन्नई। श्रीमान् महावीर सोहनलाल जी बोथरा, जलगांव (भोपालगढ़) श्रीमान् सोहनराज जी बाघमार, कोयम्बटूर। कन्हैयालाल विमलादेवी हिरण चैरिटेबल ट्रस्ट, अहमदाबाद। श्रीमान् गुप्त सहयोगी, अहमदाबाद। श्रीमती हेमलता मदनलाल जी सांखला, मुम्बई। श्रीमान् अमीरचन्द जी जैन (गंगापुरसिटी वाले), मानसरोवर, जयपुर श्रीमती सुशीला जी साण्ड धर्मपत्नी स्व. श्री कस्तूरमल जी साण्ड, अजमेर	

सहयोग के लिए चैक या ड्राफ्ट कार्यालय के इस पते पर भेजें - M.Harish Kavad - No. 5, Car Street, Poonamallee, **CHENNAI-56**

छात्रवृत्ति योजना से संबंधित जानकारी के लिए सम्पर्क करें - मनीष जैन, चैन्नई (+91 95430 68382)

'छोटा सा चिरतन परिग्रह को हल्का करने का, लाभ बड़ा गुरु भाइयों को शिक्षा में सहयोग करने का'

जिनवाणी की प्रकाशन योजना में आपका स्वागत है

सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल, जयपुर द्वारा विगत 77 वर्षों से प्रकाशित 'जिनवाणी' हिन्दी मासिक पत्रिका मानव के व्यक्तित्व को निखारने एवं ज्ञानवर्धक सामग्री परोसने का महत्त्वपूर्ण कार्य कर रही है। इसमें अध्यात्म, जीवन-व्यवहार, इतिहास, संस्कृति, जीवन मूल्य, तत्त्व-चर्चा आदि विविध विषयों पर पाठ्य सामग्री उपलब्ध रहती है। अनेक स्तम्भ निरन्तर प्रकाशित हो रहे हैं, जिनमें सम्पादकीय, विचार-वारिधि, प्रवचन, शोधालेख, अंग्रेजीलेख, युवा-स्तम्भ, नारी-स्तम्भ आदि के साथ विभिन्न गीत, कविताएँ, विचार, प्रेरक प्रसङ्ग आदि प्रकाशित होते हैं। नूतन प्रकाशित साहित्य की समीक्षा भी की जाती है।

जैनधर्म, संघ, समाज, संगोष्ठी आदि के प्रासङ्गिक महत्त्वपूर्ण समाचार भी इसकी उपयोगिता बढ़ाते हैं। जनवरी, 2017 से 8 पृष्ठों की 'बाल जिनवाणी' ने इस पत्रिका का दायरा बढ़ाया है। अनेक पाठकों को प्रतिमाह इस पत्रिका की प्रतीक्षा रहती है तथा वे इसे चाव से पढ़ते हैं। जैन पत्रिकाओं में जिनवाणी पत्रिका की विशेष प्रतिष्ठा है। इस पत्रिका का आकार बढ़ने तथा कागज, मुद्रण आदि की महँगाई बढ़ने से समस्या का सामना करना पड़ रहा है। जिनवाणी पत्रिका की आर्थिक स्थिति को सम्बल प्रदान करने के लिए पाली में 28 सितम्बर, 2019 को आयोजित कार्यकारिणी बैठक में निम्नाङ्कित निर्णय लिये गए, जिन्हें अप्रेल 2020 से लागू किया गया है-

वर्तमान में श्वेत-श्याम विज्ञापनों से जिनवाणी पत्रिका को विशेष आय नहीं होती है। वर्ष भर में उसके प्रकाशन में आय अधिक राशि व्यय हो जाती है। अत: इन विज्ञापनों को बन्दकर पाठ्य सामग्री प्रकाशित करने का निर्णय लिया गया।

आर्थिक-व्यवस्था हेतु एक-एक लाख की राशि के प्रतिमाह दो महानुभावों के सहयोग का निर्णय लिया गया। ऐसे महानुभावों का एक-एक पृष्ठ में उनके द्वारा प्रेषित परिचय/सामग्री प्रकाशित करने के साथ वर्षभर उनके नामों का उल्लेख करने का प्रावधान भी रखा गया।

जिनवाणी पत्रिका के प्रति अनुराग रखने वाले एवं हितैषी महानुभावों से निवेदन है कि उपर्युक्त योजना से जुड़कर श्रुतसेवा का लाभ प्राप्त कर पुण्य के उपार्जक बनें। जो उदारमना श्रावक जुड़ना चाहते हैं वे शीघ्र मण्डल कार्यालय या पदाधिकारियों से शीघ्र सम्पर्क करें।

अर्थसहयोगकर्ता जिनवाणी (JINWANI) के नाम से चैक प्रेषित कर सकते हैं अथवा जिनवाणी के निम्नाङ्कित बैंक खाते में राशि नेफ्ट/नेट बैंकिंग/चैक के माध्यम से सीधे जमा करा सकते हैं।

बैंक खाता नाम-JINWANI, बैंक-State Bank of India, बैंक खाता संख्या-51026632986, बैंक खाता-SAVING Account, आई.एफ.एस. कोड-SBIN0031843, ब्रॉच-Bapu Bazar, Jaipur

राशि जमा करने के पश्चात् राशि की स्लिप मण्डल कार्यालय या पदाधिकारियों की जानकारी में लाने की कृपा करें जिससे आपकी सेवा में रसीद प्रेषित की जा सके।

'जिनवाणी' के खाते में जमा करायी गई राशि पर आपको आयकर विभाग की धारा 80G के अन्तर्गत छूट प्राप्त होगी, जिसका उल्लेख रसीद पर किया हुआ है। 'जिनवाणी' पत्रिका में जन्मदिवस, शुभविवाह, नव प्रतिष्ठान, नव गृहप्रवेश एवं स्वजनों की पुण्य-स्मृति के अवसर पर सहयोग राशि प्रदान करने वाले सभी महानुभावों के प्रति आभार व्यक्त करते हैं। आप जिनवाणी पत्रिका को सहयोग प्रदान करके अपनी खुशियाँ बढ़ाना न भूलें।

-अशोक कुमार सेठ, मन्त्री-सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल, 9314625596

जिनवाणी प्रकाशन योजना के लाभार्थी

'जिनवाणी' हिन्दी मासिक पत्रिका की अर्थ-व्यवस्था को सम्बल प्रदान करने हेतु निम्नाङ्कित धर्मनिष्ठ उदारमना श्रावकरत्नों से राशि रुपये 1,00,000/- प्राप्त हुई है। सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल एवं जिनवाणी परिवार उनका हार्दिक आभारी है।

(1) मैसर्स नयनतारा रतनलाल सी. बाफणा एण्ड सन्स, जलगाँव
(2) श्री राजरूपमलजी, संजयजी, अंजयजी, दिवेशजी मेहता, शिवाकाशी
(3) डॉ. एस. एल. नागौरीजी, बून्दी
(4) श्री अरुणजी मेहता, सुनीताजी मेहता छत्तरछाया फाउण्डेशन, जोधपुर
(5) श्री उम्मेदराजजी, एवन्तकुमारजी, राजेशकुमारजी डूंगरवाल (थाँवला वाले), पाँच्यावाला-जयपुर
(6) श्री चंचलराजजी मेहता, अहमदाबाद
(7) श्री जिनेश कुमारजी, रोहितराजजी जैन (ढहरा वाले), हिण्डौनसिटी-जयपुर
(8) श्री सागरमलजी, हुकमचन्दजी नागसेठिया, शिरपुर
(9) श्री क्रान्तिचन्दजी मेहता, अलवर

वित्तीय वर्ष 2021-22 हेतु अग्रिम रूप से लाभार्थी

(1) श्री भागचन्दजी हेमेशजी सेठ, जयपुर
(2) श्री सौभाग्यमलजी, हरकचन्दजी, हनुमान प्रसादजी, महावीर प्रसादजी, कपूरचन्दजी जैन (बिलोता वाले), अलीगढ़-रामपुरा, सवाईमाधोपुर, कोटा एवं जयपुर
(3) श्री स्वरूपचन्दजी बाफना, सूरत
(4) श्री सुमतिचन्दजी कोठारी, जयपुर
(5) श्री पवनलालजी मोतीलालजी सेठिया, होलनांथा
(6) श्रीमती अलकाजी, विजयजी नाहर, इन्दौर
(7) सेठ चंचलमल गुलाबदेवी सुराणा ट्रस्ट, बीकानेर
(8) डॉ. सुनीलजी, विमलजी चौधरी, दिल्ली
(9) इन्दर कुमार मनीष कुमार सुराणा चेरिटेबल ट्रस्ट, बीकानेर
(10) श्री गणपतराजजी, हेमन्त कुमारजी, उपेन्द्र कुमारजी बाघमार (कोसाणा वाले), कोयम्बटूर
(11) Shri Ankit ji lodha, Jewels of Jaipur Gie gold creations Pvt Ltd, Mahaveer Nagar, Jaipur
(12) श्री राधेश्यामजी, कुशलजी, पदमजी, अशोकजी गोटेवाला, सवाईमाधोपुर (राज.)

उदारमना लाभार्थियों की अनुमोदना एवं स्वेच्छा से नये जुड़ने वाले लाभार्थियों का हार्दिक स्वागत।

JVS
PURITY

JVS Foods Pvt. Ltd.

Manufacturer of :

NUTRITION FOODS

BREAKFAST CEREALS

FORTIFIED RICE KERNELS

WHOLE & BLENDED SPICES

VITAMIN AND MINERAL PREMIXES

Special Foods for undernourished Children
Supplementary Nutrition Food for Mass Feeding Programmes

With Best Wishes :

JVS Foods Pvt. Ltd.

CERTIFIED ISO 22000 CERTIFIED

G-220, Sitapura Ind. Area,
Tonk Road, Jaipur-302022 (Raj.)
Tel.: 0141-2770294
Email-jvsfoods@yahoo.com
Website-www.jvsfoods.com
FSSAI LIC. No. 10012013000138

Food Safety System Certification 22000

If undelivered, Please return to

Samyaggyan Pracharak Mandal
Above Shop No. 182,
Bapu Bazar, Jaipur-302003 (Raj.)
Tel. : 0141-2575997

स्वामी सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल के लिए प्रकाशक, मुद्रक - अशोक कुमार सेठ द्वारा डायमण्ड प्रिंटिंग प्रेस, मोतीसिंह भोमियों का रास्ता, जौहरी बाजार, जयपुर राजस्थान से मुद्रित एवं सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल, शॉप नं. 182 के ऊपर, बापू बाजार, जयपुर-3 राजस्थान से प्रकाशित। सम्पादक-डॉ. धर्मचन्द जैन